तुलसी की भाषा

(अवधी भाषा तात्त्विक अध्ययन)

डॉ० जनादन सिंह
एम० ए०, पीएच० डी०
(हिन्दी तथा भाषा विज्ञान)
हिन्दी-विभाग
युवराजदत्त कालेज, लखीमपुर



साहित्य संस्थान
१०६/१५४ गांधीनगर, कानपुर-२०८०१२

आगरा विश्वविद्यालय की पीएच० डी० उपाधि के
लिए स्वीकृत शोध प्रबंध



● पुस्तक
तुलसी की भाषा

● लेखक
डॉ० जनार्दन सिंह

● प्रकाशक
साहित्य संस्थान, १०६/१५४ गांधीनगर कानपुर १२

● मुद्रक
उदय प्रिंटिंग प्रेस सूटरगंज कानपुर १

● संस्करण
प्रथम मई १९७६

मूल्य
३५ ००

TULSHI KI BHASHA

by Dr Janardan Singh

समर्पण

सीयराम मैं सब जग जानी । अरपि प्रन जोरेउं जुग पानी ।।

तपस्त्याग-प्रतिमा श्रद्धेया अम्मा जी

को

सादर समर्पित

परिचय

(१)

किसी कवि या लेखक की कृतियों की भाषा का अध्ययन अनेक दृष्टियों से होता है उनमें से भाषा शास्त्र की दृष्टि से किया गया अध्ययन अपना विशिष्ट स्थान रखता है। भाषा की शक्ति निर्भर है—शब्द भंडार, शब्द चयन और अर्थ शक्ति पर। इसलिए कवि की अभिव्यंजना शक्ति को जानने के लिए उसकी भाषा का अध्ययन करना आवश्यक होता है। भाषा शास्त्र की दृष्टि से किया गया अध्ययन अपना विशेष मूल्य रखता है।

हिन्दी कवियों और लेखकों की भाषा के वैज्ञानिक विवेचन का अभाव है। इसी अभाव की पूर्ति के लिए डा० जनार्दन सिंह ने तुलसी की भाषा अवधी भाषा शास्त्रीय अध्ययन विषय चुना और कार्य विस्तृत होने हुए गहन परिश्रम एवं लगन से अल्प समय में इस अनुष्ठान को सम्पन्न किया। डा० कैलाशचन्द्र अग्रवाल के कुशल निर्देशन में बनी गवेषणापूर्ण यह मौलिक ग्रंथ सम्पन्न किया गया, जिस पर उन्हें आगरा विश्वविद्यालय आगरा से पी एच० डी० की उपाधि मिली।

विशेष महत्व की बात यह है कि डा० सिंह ने तुलसी की सम्पूर्ण अवधी कृतियों की भाषा सामग्री को साठ हजार कार्डों (deta) पर संकलित कर भाषा शास्त्रीय दृष्टि से विधिवत अध्ययन किया है साथ ही तुलसी के प्रमुख सभी संस्करणों प्रमुख रूप से तुलसी ग्रंथावली गुप्त द्वारा सम्पादित संस्करण एवं गीता प्रेस, गोरखपुर संस्करणों की तुलना करके भाषा विषयक सभी शंकाओं का निवारण कर लिया है। इससे इस ग्रंथ की वैज्ञानिकता और मौलिकता और भी अधिक बढ़ गई है।

प्रस्तुत ग्रंथ दस अध्यायों में विभाजित है। प्रथम अध्याय में अध्ययन की उपयोगिता सीमाएँ एवं विश्लेषण पद्धति का विवेचन किया है। द्वितीय अध्याय में ध्वनि-समूह एवं उसके लिप्यन्तरण की चर्चा है। अध्याय तीन के अन्तर्गत शब्द-रचना विधान का वैज्ञानिक एवं विस्तृत विवेचन किया है। चौथे अध्याय में संज्ञा रूप रचना पर प्रकाश डाला गया है। अध्याय पाँच में सर्वनाम रूप रचना, अध्याय छः में विशेषण रूप रचना और अध्याय सात में अव्यय पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है। अध्याय आठ में क्रिया रूप रचना का विवेचन किया है। अध्याय नौ में वाक्य रचना का सम्यक वर्णन है। अध्याय दस में स्थानीय एवं तुलसी की अवधी के सामान्य रूप और अन्य भाषा रूपों की व्याप्ति को उठाया है।

तुलसी साहित्य के मर्मज्ञ एवं भाषा शास्त्र के अधिवेत्ताओं ने इस शोध प्रबंध की सराहना की है। मुझे आशा है कि यह ग्रंथ हिन्दी जगत के मर्मज्ञ विद्वानों तथा भाषा-मनीषियों को विशेष प्रिय और उपादेय सिद्ध होगा। डा० सिंह की लेखनी से और भी महत्व के ग्रंथों का प्रणयन होगा यह मेरी मंगलाशा है।

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा

(२)

प्रस्तुत ग्रंथ के पूर्व गोस्वामी तुलसीदास की भाषा के अध्ययन से सम्बद्ध दो शोध कार्य हो चुके हैं—डा० बाबूराम सक्सेना तथा डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव के। इसके अतिरिक्त तुलसी साहित्य पर लिखे गए कतिपय अन्य शोध-ग्रंथों में भी प्रसंगवश उनकी भाषा के स्वरूप पर विचार किया गया है। किन्तु डा० जनार्दन सिंह द्वारा प्रयुक्त अवधी का पृथक् से किया गया भाषा-तात्त्विक अनुशीलन अभी तक नहीं हो सका था। प्रस्तुत ग्रंथ निस्संदेह इस दिशा में प्रथम मौलिक एवं सराहनीय है। डा० सिंह ने आधारभूत सामग्री का वैज्ञानिक पद्धति से भाषा-तात्त्विक विश्लेषण किया है। अब तक तुलसी पर हुए कार्य में यह अध्ययन अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

डॉ० सिंह ने तुलसी की अवधी के अध्ययन में विश्लेषण की जिस वर्णनात्मक पद्धति का अनुसरण किया है उससे उनकी आलोचनात्मक परीक्षण सम्बन्धी क्षमता तथा नवीन दृष्टि का पता चलता है। जहाँ तक अभिव्यक्ति का प्रश्न है उनकी भाषा साहित्यिक एवं शैली प्रौढ़ है। यह ग्रंथ दस अध्यायों में विभक्त है।

इस ग्रंथ की सहायता से तुलसी के अवधी रूपों का समझने में विशेष सहायता मिलेगी और अवधी की ऐतिहासिक भाषा-संघटना का अध्ययन करते समय एक महत्त्वपूर्ण कड़ी सिद्ध होगा। मुझे विश्वास है यह ग्रंथ शोध को नयी दिशा और नयी मोड़ देने में पूर्ण समर्थ है।

डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह
पी एच० डी० डी० लिट्०
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर

प्राक्कथन

स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात सन् १९६५ ई० मे अनुसंधित्सु ने अपनी अभिरुचि के अनुरूप ही 'तुलसी की अवधी भाषा-तात्त्विक अध्ययन" विषय शोध-साधना हेतु चुना। प्रस्तुत शोधकार्य के लिए क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ, विश्वविद्यालय आगरा केन्द्र बना। सन १९६६ ई० मे आगरा विश्वविद्यालय से इस विषय पर शोध कार्य करने के लिए विधिवत अनुमति प्राप्त हो गई। तभी से अनुसंधित्सु दत्त चित्त होकर केवल शोधकार्य मे ही सलग्न रहा है।

अवधी अनुसंधित्सु की मातृ भाषा है इसलिए उसके प्रति निष्ठा स्वाभाविक है। यह शोध कार्य अवधी की ऐतिहासिक भाषा संघटना का अध्ययन करते समय एक कड़ी सिद्ध होगा यह उसे विश्वास है।

विश्वविख्यात महाकवि तुलसीदास के काव्य पर अनेक रूप से बड़ा परिपुष्ट अध्ययन हो चुका है। किन्तु अद्यावधि तुलसी की अवधी रचनाओ म प्राप्त अवधी के स्वरूप का भाषा तात्त्विक अध्ययन स्वतन्त्र रूप से अपनी पूर्ण गरिमा के साथ सम्पन्न नही हो सका था। यद्यपि तुलसी की अवधी रचनाओं मे प्राप्त अवधी के स्वरूप का अध्ययन डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव और डा० बाबूराम सक्सेना के शोध कार्यों म किया गया है, किन्तु तुलसी की एकमात्र अवधी रचनाओ को आधार बनाकर आधुनिक प्रणाली स भाषा-तात्त्विक अध्ययन प्रस्तुत शोध काम के माध्यम से ही हुआ है। आदरणीय डा० बाबूराम सक्सेना ने अवधी का उद्भव तथा विकास स्पष्ट करते समय प्रसगवश तुलसी की अवधी भाषा के रूपो का विश्लेषण किया है लेकिन इस प्रकार के व्यापक एव विस्तृत अध्ययन मे केवल तुलसी की अवधी का भाषा तात्त्विक अध्ययन जिस कोटि का होना चाहिए था वह नही हो सका है। यह स्वाभाविक ही था क्योकि डा० सक्सेना का एकमात्र ध्यान (उद्देश्य) अपने शोध कार्य एवोल्यूशन आव अवधी मे यह न था। वस्तुत उनकी दृष्टि तुलसी की अवधी के भाषा-तात्त्विक अध्ययन पर न होकर अवधी के उद्भव और विकास पर केन्द्रित रही है। उनके अध्ययन का दृष्टिकोण भिन्न होते हुए भी प्रस्तुत काम में वह सहायक सिद्ध हुआ है। अवधी का सर्व प्रथम विस्तृत विवेचन वैज्ञानिक प्रणाली के आधार पर होने के कारण यह काय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उन्होने अवधी भाषा का विकास क्रम स्पष्ट करने के लिए प्रसगवश कालक्रमिक ढग से कुछ प्रतिनिधि कवियो की अवधी रचनाओ म प्राप्त रूपो का विश्लेषण किया है। इस प्रकार के अध्ययन

के साथ प्रयुक्त परसर्गों का भी अनुपात परीक्षण करके निकाला गया है। डा० श्रीवास्तव ने परम्परागत ढंग से कारकों को स्पष्ट किया है।

विषय क्रम ६ में विशेषण रूप रचना पर प्रकाश डाला गया है। ६.१ में शब्द स्तर पर विशेषण शब्दों को रूढ़ यौगिक तथा सामासिक में विभक्त किया गया है जिसका विस्तृत विवेचन शब्द रचना विधान ( ) के अंतर्गत किया गया है। ६.२ में अर्थ ध्वनि की दृष्टि से विवेचन किया गया है। डा० सक्सेना ने इस प्रकार का उल्लेख तो किया है किन्तु आलोच्य भाषा के इस पक्ष पर विधिवत प्रकाश नहीं पड़ सका। डा० श्रीवास्तव ने अपने शोध ग्रंथ में इस प्रकार का विवेचन नहीं किया है। विषय क्रम ६.३ में अनुसंधित्सु ने विशेषण शब्दों की रूप रचना की दृष्टि से मूल एवं तिर्यक में विभक्ति करके उनमें संलग्न होने वाले विभक्ति प्रत्ययों और परसर्गों पर भी विचार किया है। डा० सक्सेना ने भी इस प्रकार विचार किया है पर अति संक्षेप में। किन्तु डा० श्रीवास्तव ने इस प्रकार विश्लेषण नहीं किया है। अनुसंधित्सु ने ६.४ में अर्थ की दृष्टि से विशेषणों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। साथ ही, ६.५ में क्रियामूलक (कृदन्त) विशेषण रूपों का विवेचन किया गया है। डा० सक्सेना के विवेचन का ढंग प्रस्तुत विवेचन से भिन्न है। डा० श्रीवास्तव ने भी अर्थ की दृष्टि से वर्गीकरण अवश्य प्रस्तुत किया है पर अधिक गहराई नहीं आ सकी है।

विषयक्रम ७ में अव्यय रूपों पर विचार किया गया है। इस विवेचन में यत्र तत्र कुछ नवीनता मिल सकती है। किसी विशेष मौलिकता का दावा नहीं किया जा सकता है।

अनुसंधित्सु ने विषयक्रम ८ के अंतर्गत क्रिया रूप रचना को प्रस्तुत किया है। ८.१ में धातुओं का वर्गीकरण मूल (सामान्य एवं दृष्टीकृत) और यौगिक (नाम धातु तथा प्रेरणार्थक) धातुओं के दो वर्ग बनाकर किया है। ८.२ में रूप रचना की दृष्टि से समस्त क्रिया रूपों को दो वर्गों—समापिका तथा असमापिका में विभक्त कर उन पर सम्यक प्रकाश डाला गया है। समापिका प्रकार के अंतर्गत तिङन्ती एवं कृदन्ती रूपों का उल्लेख किया गया है। डा० सक्सेना द्वारा किया गया इस प्रकार का विवेचन उल्लेखनीय है। हाँ इतना अवश्य है कि लेखक तथा प्रस्तुत शोधकर्ता के विवेचन का ढंग कुछ भिन्न है। डा० श्रीवास्तव ने अपने शोध ग्रंथ में परम्परागत ढंग से क्रियाओं का विश्लेषण किया है। प्रस्तुत अध्ययन विपुल सामग्री पर आधारित होने के कारण कुछ नए रूपों को प्रकाश में ला सका है। डा० सक्सेना के ग्रंथ में कुछ रूपों का उल्लेख नहीं हो सका है। वर्गीकरण का ढंग भी भिन्न हो है। अनुसंधित्सु ने विषय क्रम ८ में असमापिका प्रकार के क्रिया रूपों का विवेचन किया है जिसके अंतर्गत क्रियार्थक संज्ञा और पूर्वकालिक कृदन्तों की रचना को स्पष्ट किया गया है। ८.४ में संयुक्त क्रियाओं तथा ८.५ में प्रयुक्त क्रियाओं पर विस्तार

से विचार किया गया है । गठन (संयुक्तता) की दृष्टि से संयुक्त क्रियाओं का वर्गीकरण अनुसंधित्सु का बहुत कुछ अपना है । अनेक प्रकार की संयुक्त क्रियाओं को अनेकानेक उदाहरणों से स्पष्ट किया गया है । 'वाक्य रचना' का अध्ययन विषय-क्रम ९ में किया गया । ९.१ में वाक्य कोटियों–साधारण, संयुक्त, तथा यौगिक का सविस्तार उल्लेख किया गया है । साधारण वाक्यों में सामान्य वाक्य (केवल उद्देश्य और विधेय) तथा उनके अन्य समीपी संघटकों के योग से निर्मित बृहत्तर संघटनों का उल्लेख किया गया है । संयुक्त तथा यौगिक वाक्यों का सविस्तार गहनता से विवेचन किया है । डा० सक्सेना ने वाक्य की चर्चा संक्षेप में तो की ही है साथ ही उनके विवेचन का ढंग भी प्रस्तुत कार्य से कुछ भिन्न है । डा० श्रीवास्तव ने परम्परागत ढंग से वाक्यों का अध्ययन प्रस्तुत किया है । ९.२ में अनुसंधित्सु ने पदक्रम का उल्लेख विस्तृत रूप में किया है । डा० सक्सेना ने भी पदक्रम सम्बन्धी अध्ययन प्रस्तुत किया है जो अति संक्षेप में है पदान्वय की चर्चा ९.३ में की गई है । डा० सक्सेना ने अपने शोध कार्य में इस प्रकार का विवेचन नहीं किया है । डा० श्रीवास्तव ने अपने शोध प्रबन्ध में 'पदक्रम तथा पदान्वय' की चर्चा नहीं की है । अनुसंधित्सु ने ९.४ के अन्तर्गत पदाधिकार की भी चर्चा की है । डा० सक्सेना एवं श्रीवास्तव द्वारा इस प्रकार का अध्ययन नहीं किया गया है ।

१०.१ के अन्तर्गत अनुसंधित्सु ने 'स्थानीय तथा तुलसी की अवधी के सामान्य स्वरूप' और १०.२ में अन्य भाषा रूपों की व्याप्ति को उठाया है । वैसे इसके अन्तर्गत मौलिकता का दावा कदापि नहीं किया जा सकता है । केवल प्रस्तुतीकरण में अवश्य कुछ नवीनता दिखाई पड़ सकती है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत शोध कार्य डा० सक्सेना एवं डा० श्रीवास्तव के शोध कार्यों से बहुत कुछ भिन्न है । इसका मुख्य कारण है अध्ययन क्षेत्र, विश्लेषण पद्धति, प्रस्तुतीकरण के ढंग आदि की भिन्नता । इस कथन की सत्यता प्रस्तुत शोध कार्य को आद्यन्त देखने से स्पष्ट हो सकती है । हाँ, पथ प्रदर्शन करने में डा० श्रीवास्तव का शोध कार्य अवश्य सहायक सिद्ध हुआ । डा० बाबूराम सक्सेना के महत्वपूर्ण शोध कार्य के पश्चात् तुलसी की अवधी भाषा के अध्ययन की दृष्टि से डा० श्रीवास्तव का यह शोध कार्य दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है । कुछ दृष्टियों से तो उनका शोध कार्य विशेष महत्व रखता है । तुलसी की जीवनी कृतियां व्यक्तित्व आदि का विवेचन अत्यन्त वैज्ञानिक एवं खोजपूर्ण है । अस्तु प्रस्तुत प्रबन्ध का लेखक निस्सन्देह इन दोनों महानुभावों के प्रति कृतज्ञ है । प्रस्तुत अध्ययन के सम्बन्ध में अनुसंधित्सु विनत होकर इतना निवेदन करना चाहता है कि इस शोध कार्य में तुलसी की अवधी रचनाओं को आधार मान कर विपुल भाषा सामग्री (DATA) कार्डों पर संचित करके विस्तार से प्रत्येक शब्द का विश्लेषण वैज्ञानिक पद्धति पर

किया गया है। सर्वथा नितान्त मौलिकता न होते हुए भी प्रस्तुतीकरण का ढग, विश्लेषण पद्धति तथा मानदण्ड कुछ अपने हैं। सामग्री चिर परिचित होने पर भी उसके विश्लेषण में नवीनता एवं मौलिकता का यथास्थान समावेश कर नए नए नियमों तथ्यों और निष्कर्षों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। साथ ही भाषा के वे अंग जो अभी तक इस पर कार्य करने वाले भाषाविदों की शोधों में विवेचित नहीं हो सके हैं उनका भी भाषा-तात्त्विक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

सर्वप्रथम अनुसंधित्सु डा० माताप्रसाद गुप्त निदेशक क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा का आभार प्रदर्शन करता है जिन्होंने शोध साधना को सुगम बनाने के लिए विद्यापीठ में सुलभ समस्त सुविधाएं प्रदान की और समय समय पर प्रेरणा देने का सत्कार्य किया।

प्रबन्धक निर्देशक डा० कैलाशचन्द्र अग्रवाल के सम्मुख अनुसंधित्सु श्रद्धावनत है जिनके विद्वतापूर्ण निर्देशन में यह अनुष्ठान पूर्णता पा सका है। उनके अनवरत पथ प्रदर्शन एवं प्रोत्साहन ने जिस सफलता के पथ पर अनुसंधित्सु को ला कर खड़ा किया है उसका प्रतिदान शब्द कभी नहीं कर सकते। अतएव आजीवन आभार मानकर ही उनके ऋण का कुछ अंश चुका सकता है। विद्यापीठ के उन सभी गुरुजनों के प्रति भी वह कृतज्ञ है जिनसे समय समय पर सत्परामर्श एवं प्रेरणा मिलती रही है। विशेष रूप से डा० रामस्वरूप प्रसाद अग्रवाल का विनत आभार मानता है जिनकी सतत प्रेरणा एवं अमूल्य सत्परामर्शों से लाभान्वित होता रहा है।

सोरों तथा राजापुर के तुल्सी सम्बन्धी स्थलों पुस्तकालयों नागरी प्रचारिणी सभा काशी तथा आगरा लखनऊ विश्वविद्यालय आगरा विश्वविद्यालय, के पुस्तकालयों और मानस संघ (म० प्र०) से अनुसंधित्सु को विशेष लाभ प्राप्त हुआ जिसके लिए वह उन सबके अध्यक्षों एवं पुजारियों का कृतज्ञ है। धार्मिक प्रेरणा के स्रोत अवधी के उन प्रेमियों भक्तजनों का आभार प्रदर्शन करता है जिन्होंने अनुसंधित्सु को सामग्री संकलन एवं परीक्षण के समय महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया। अन्त में उन सभी विद्वज्जनों का आभार प्रदर्शन करता है जिनकी कृतियों से प्रत्यक्ष एवं प्रच्छन्न रूप से इस शोध साधना में सहायता प्राप्त होती रही है।

—जनार्दन सिंह, एम०ए०
(हिन्दी तथा भाषा विज्ञान)

विषय-सूची

विषयक्रम

१ विषय-प्रवेश — १७-३५

१ १ तुलसी पर हुए भाषा सम्बन्धी कार्यों के प्रकाश म प्रस्तुत विषय की उपयोगिता — १७

१ २ प्रस्तुत अध्ययन की सीमाएँ — २३

१ ३ विश्लेषण विधि — २९

१ ४ तुलसी की अवधी—सामान्य स्वरूप — ३०

२ ध्वनि-विचार — ३६-८२

२ १ ध्वनि एव वर्ण—एक तात्त्विक दृष्टि — ३६

२ २ ध्वनि-समूह और उसका लिप्यन्तरण — ३७

२ ३ ध्वनिग्राम — ४१

२ ३ १ स्वर ध्वनियाँ — ४१

२ ३ २ व्यजन ध्वनियाँ — ५७

२ ३ ३ अर्ध-स्वर — ६३

२ ४ स्वर सयोग — ६६

२ ५ व्यजन-सयोग — ७१

२ ६ अक्षर वितरण — ७८

३ शब्द-रचना-विधान — ८३-१०७

३ १ मूल — ८५

३ २ यौगिक — ८६

३ ३ सामासिक — १०२

४ सज्ञा रूप-रचना — १०८-१३९

४ १ प्रातिपदिक अश — १०८

४ २ लिंग विधान — १११

४ ३ वचन विधान — ११६

४ ४ कारक विधान — ११७

४ ४ १ मूल — ११७

४ ४ २ तिर्यक — ११९

४ ४ २ १ परसर्ग रहित — १२०

४ ४ २ २ परसर्ग सहित — १२३

४ ४ २ ३ विभक्तियाँ — १२६

४ ४ ३ परसर्ग-योजना — १३१

५	सर्वनाम-रूप-रचना	१४०-१६९
५ १	लिंग-वचन-कारक	१४०
५ २	पुरुषवाचक	१४०
५ २ १	उत्तम पुरुष	१४०
५ २ २	मध्यम पुरुष	१४४
५ ३	संकेत वाचक	१४९
५ ३ १	दूरवर्ती	१४९
५ ३ २	निकटवर्ती	१५३
५ ४	प्रश्नवाचक	१५५
५ ५	सम्बन्ध तथा सहसम्बन्धवाचक	१५७
५ ५ १	सम्बन्धवाचक	१५७
५ ५ २	सहसम्बन्धवाचक	१५९
५ ६	अनिश्चयवाचक	१६१
५ ७	निजवाचक	१६४
५ ८	विविध	१६६
५ ९	सार्वनामिक विशेषण	१६७
६	विशेषण रूप-रचना	१७०-१७९
६ १	रूपात्मक वर्गीकरण	१७४
६ २	अर्थ-परक वर्गीकरण	१७५
६ २ १	गुणवाचक	१७६
६ २ २	परिणामवाचक	१७६
६ २ ३	संख्यावाचक	१७६
६ ३ ४	क्रिया मूलक (कृदन्त)	१७८
७	अव्यय	१८०-१८९
७ १	क्रिया विशेषण	१८०
७ १ १	स्थानवाचक	१८०
७ १ २	कालवाचक	१८१
७ १ ३	परिमाणवाचक	१८३
७ १ ४	रीतिवाचक	१८३
७ २	समुच्चय बोधक	१८५
७ २ १	समानाधिकरण	१८५
७ २ २	व्यधिकरण	१८६
७ ३	विस्मयादि बोधक	१८७
७ ४	परसर्गीय रूप	१८७
७ ५	बलात्मक शब्दांश (निपात)	१८९

८ क्रिया-रूप-रचना — १९०-२२१

८ १	धातुओं का वर्गीकरण	१९०
८ १ १	मूल	१९१
८ १ २	यौगिक	१९१
८ २	समापिका प्रकार	१९४
८ २ १	तिङन्ती रूप	१९५
८ २ १ १	वर्तमान निश्चयार्थ	१९५
८ २ १ २	संभावनार्थ (आज्ञार्थ)	१९८
८ २ १ ३	भविष्य निश्चयार्थ	२००
८ २ १ ४	भूत निश्चयार्थ	२०४
८ २ २	कृदन्ती रूप	२०७
८ २ २ १	अपूर्ण	२०७
८ २ २ २	पूर्ण	२०९
८ २ ३	सहायक क्रिया	२११
८ ३	असमापिका प्रकार	२१२
८ ३ १	पूर्वकालिक कृदन्त	२१४
८ ३ २	क्रियार्थक संज्ञा	२१६
८ ४	संयुक्त-क्रिया	२१७

९ वाक्य-रचना — २२२-२४२

९ १	वाक्य-कोटियाँ	२२२
९ १ १	सामान्य वाक्य	२२२
९ १ २	संयुक्त वाक्य	२२५
९ १ ३	यौगिक वाक्य	२२७
	१–संज्ञा उपवाक्य	२२७
	२–विशेषण उपवाक्य	२२७
	३–क्रिया विशेषण उपवाक्य	२२९
९ २	पदक्रम	२३१
९ ३	पदान्वय	२३७
९ ४	पदाधिकार	२४१

१० उपसंहार — २४३-२५३

१० १	आलोच्य भाषा निष्कर्षों के आधार पर स्थानीय तथा तुलसी की अवधी	२४३
१० २	अन्य बोली रूपों की व्याप्ति	२४७
	सहायक ग्रंथानुक्रमणिका	२५४

विशेष-चिन्ह

> पूर्ववर्ती व्युत्पादक तथा परवर्ती व्युत्पन्न

< पूर्ववर्ती व्युत्पन्न तथा परवर्ती व्युत्पादक

˘ ह्रस्वताद्योतक

↳ वैकल्पिक प्रयोग

√ धातु चिह्न

संक्षिप्तांश

१—	अं०	अंग्रेजी
२—	अ० पु०	अन्य पुरुष
३—	अयो०	अयोध्याकाण्ड
४—	अर०	अरण्यकाण्ड
५—	आ०	आधार
६—	आ० भा० आ० भा०	आधुनिक भारतीय आर्य भाषा
७—	उ०	उत्तरकाण्ड
८—	उ० पु०	उत्तम पुरुष
९—	ए०व०	एक वचन
१०—	कि०	किष्किंधा काण्ड
११—	क्रि० वि०	क्रिया विशेषण
१२—	छ०	छन्द
१३—	च०	चरण
१४—	छन्दानु०	छन्दानुरोध
१५—	जा० म०	जानकी मंगल
१६—	तृ०	तृतीय
१७—	द्वि०	द्वितीय
१८—	दो०	दोहा
१९—	निवि०	निर्विभक्तिक
२०—	पु०	पुल्लिंग
२१—	पा० म०	पार्वतीमंगल
२२—	प्रा० भा० आ० भा०	प्राचीन भारतीय आर्य भाषा
२३—	ष०	षष्ठ
२४—	बरव रा०	बरव रामायण
२५—	ब०व०	बहु वचन
२६—	बा०	बालकाण्ड
२७—	म०पु०	मध्यम पुरुष
२८—	म० भा० आ० भा०	मध्य भारतीय आर्य भाषा
२९—	रा०	रामचरित मानस
३०—	रा० ल० न०	राम लला नहछू
३१—	लं०	लंकाकाण्ड
३२—	सु०	सुन्दरकाण्ड
३३—	सं०	संख्या
३४—	सवि०	सविभक्तिक
३५—	सर्व	सर्वनाम
३६—	स्त्री०	स्त्रीलिंग
३७—	हि०	हिंदी
३८—	हि० खो० रि०	हिंदी खोज रिपोर्ट

१ | विषय-प्रवेश

१ १ तुलसी पर हुए भाषा-सम्बन्धी काय के प्रकाश मे प्रस्तुत विषय की उपयोगिता

पूववर्ती विद्वानो द्वारा तुलसी साहित्य का विविध पक्षो को लेकर अनेक प्रकार से अध्ययन किया गया है परन्तु तलसी की अवधी भाषा का भाषातात्त्विक अध्ययन गौण ही रहा है। केवल तुलसी की अवधी भाषा की कृतियो का आधार बनाकर उसका भाषा तात्त्विक अध्ययन अभी तक प्रस्तुत नही किया गया था। तत्कालीन अवधी के स्वरूप की विशद झाकी प्रस्तुत करना आवश्यक समझकर अनुसधित्सु ने इस काय को सम्पन्न करने का सकल्प किया और आज उसे सतोष है कि वह काय पूण हो गया है। यह प्रयास कहाँ तक साथक एव सफल है इसका निणय विद्वान परीक्षक करेंगे।

अभी तक तुलसी का भाषा से सम्बन्धित जितना भी अध्ययन हुआ है उसे निम्न दो वर्गों मे रखा जा सकता है। डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव के शोध प्रबन्ध तुलसी की भाषा से सहायता लेकर इस विषय पर चर्चा की जा रही है—

१–तुलसी विषयक साहित्यिक अध्ययन

२–तुलसी विषयक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

प्रथम वग को पुन दो उपवर्गों म बाटा जा सकता है—

अ–परिचय ग्रथ एव समालोचनात्मक कृतिया

ब–स्फुट टीकाएँ एव शोध ग्रथ

(१) अ–प्रथम वग के अ तगत निम्नलिखित कृतिया परिगणित हैं—

१–बाबा वेणी माधवदास का मूल गोसाइ चरित।

२–आचाय भिखारीदास का काव्य निणय।

समालोचनात्मक साहित्य के अन्तगत मुख्यत निम्नलिखित ग्रथो की गणना की जाती है—

(१) नोट्स आन तुलसीदास — डा० जाज ग्रियसन

(२) रामायणी व्याकरण (नोटस आन दी ग्रामर आव रामायन आव तुलसीदास) — [illegible]

अनेक तर्कों द्वारा इसकी घटनाओं को, एक ऐतिहासिक भूल सिद्ध किया है।[१] श्री रामनरेश त्रिपाठी जी के शब्दों में—"एक साधारण तुकबन्द ने गैर जिम्मेदारी के साथ जो कुछ उनके मगज में से निकला या पाया गया, वे सिर पर के पदों में निकाल कर रख दिया।[२] किंतु डा० श्यामसुन्दर दास और डा० बड़थ्वाल जैसे उच्चकोटि के साहित्यकारों ने इसे कुछ न कुछ उपयोगी अवश्य समझा है।[३]

वेणीमाधव दास ने अपने मूल गोसाईं चरित में लिखा है कि तुलसी ने सर्व प्रथम अपनी रचना संस्कृत में आरम्भ की थी परन्तु आठवें दिन शिव जी के सपने में उपदेश देने के कारण उन्होंने सब कल्याणकारिणी जन भाषा में काव्यारम्भ किया।

अठवें दिन सम्भु दिय सपना, निज बोलि में काव्य करो अपना।

० ० ■

सिव आयेउ भाषा में काव्य रचो, सुरबानि के पीछे न तात पचो ॥[१]

इस कथन की पुष्टि मानस की निम्न पंक्तियों में भी होती है—

सम्भु प्रसाद हियँ हुलसी, रामचरित मानस कवि तुलसी।[२]
सपनेहु साचेहु मोहि पर जौं हरि गौरि पसाउ।
तौ फुर होउ जो कहउँ सब, भाषा भनित प्रभाउ ॥[३]

तुलसी के अन्तरंग में राम कितना रमा हुआ था यह सब विदित है राम भक्त महाकवि तुलसी को यदि जन भाषा में काव्य रचना की प्रेरणा मिली भी हो तो भक्तजनों के लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इस कथन का अर्थ यह नहीं कि उक्त ग्रंथ का प्रामाणिक ही माना जावे। निश्चित मान्यताओं के आधार पर उक्त ग्रंथ भले ही अप्रामाणिक हो उसकी ऐतिहासिक घटनाएँ प्रसंग, उल्लेख कथा न ऐति परक तथा अस्वाभाविक हो। फिर भी भाषा की दृष्टि से इतना प्रकाश अवश्य पड़ता है कि तुलसी ने अपना काव्य जनभाषा में रचा।

(२) आचार्य भिखारीदास का काव्य निर्णय—इस ग्रंथ की गणना प्रतिष्ठित काव्यशास्त्रों में की जाती है। काव्यांगों के विवेचन के साथ साथ इसमें उल्लेखनीय बात यह है कि तुलसी की भाषा की विविध रूपता पर सर्वप्रथम प्रकाश डालने का एकमात्र श्रेय आचार्य को ही है—

भाषा विश्लेषण की दृष्टि से यद्यपि इसका विशेष महत्व न भी हो फिर भी भाषा की अनेकरूपता की ओर इंगित स्पष्ट होता है—

१–तुलसीदास पृ० ४ ४७। २–डा० बड़थ्वाल पर गोसाईं चरित से सम्बन्धित 'मधुकर' में प्रकाशित [illegible] ० ७ ■ । [illegible] । भाग पृ० ८। । ४–रा० च० [illegible] । ५ रा० बा० ४।२ ।

तुलसी गंग दुवौ भए सुकविन्ह के सरदार ।
इनके काव्यन्ह मे मिली भाषा विविध प्रकार ॥[1]

समालोचना साहित्य—यहाँ अन्तर्गत केवल उन्हीं रचनाओं की चर्चा की जायेगी जिनमें भाषा-सामग्री का न्यूनाधिक विवेचन मिलता है।

(१) रामायणी व्याकरण—यद्यपि ग्रीव्स कृत लघु पुस्तक में भाषा का सर्वाङ्गीण विवेचन तो नहीं किया गया फिर भी भाषा के व्याकरणिक अध्ययन की दिशा में हमें आकर्षित अवश्य करती है। इस रचना में मानस के व्याकरणिक रूपों के उदाहरणों के साथ साथ कुछ रूपों की व्युत्पत्ति की भी चर्चा की गई है। रामायणी व्याकरण एक लघु कृति होते हुए भी भाषा विश्लेषण की दृष्टि से कुछ अंशों तक महत्वपूर्ण अवश्य है।

(२) मानस प्रबोध—इस कृति में श्री विश्वम्भर दत्त शर्मा ने तुलसी की भाषा के शास्त्रीय अध्ययन की दिशा में प्रथम प्रयास किया है। उनके इस कार्य को प्रयास मात्र कहना इसीलिए समीचीन है कि उन्होंने केवल वाक्य प्रयोग, शब्द प्रयोग आदि का ही विवेचन किया है। भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन से सम्बन्धित कई पक्षों का विवेचन उपेक्षित रहा है। फिर भी कुछ अंशों तक उपयोगी माना जा सकता है।

(३) रामचरित मानस की भूमिका—गौड़ जी ने इस ग्रंथ में तुलसी के जीवन तथा काव्यांगों के विवेचन के साथ-साथ कुछ अंश तक मानस की भाषा में प्रयुक्त ध्वनियों एवं शब्द रूपों पर भी प्रकाश डाला है। क्रिया पदादि अनुसंधान की दिशा में भी उनका कार्य सराहनीय है। भाषा के संघटनात्मक अध्ययन की दृष्टि से अधिक महत्व का न होते हुए भी ऐतिहासिक दृष्टि से उल्लेखनीय है।

(४) जायसी ग्रंथावली की भूमिका—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने जायसी की भाषा का विवेचन करने के साथ-साथ तुलसी तथा जायसी की भाषाओं का तुलनात्मक विवेचन भी किया है।[2] शुक्ल जी ने तुलसी के अवधी प्रयोगों की चर्चा तो की है किन्तु संक्षिप्त एवं अपर्याप्त ज्ञान के कारण उसमें भाषा-वैज्ञानिकता का प्राय अभाव रहा है। फिर भी तुलनात्मक पद्धति की दिशा में उनका प्रयास मार्गदर्शन के लिए उपयोगी है।

तुलसीदास और उनकी कविता—पं० रामनरेश त्रिपाठी ने काव्य के अन्य पक्षों पर विचार करते हुए प्रसंगवश भाषा के विषय में भी अपने तर्कपूर्ण विचार प्रस्तुत किये हैं। त्रिपाठी जी के तर्क निःसन्देह ओजपूर्ण हैं। किन्तु खटकने वाली बात

---

१ भिखारीदास : काव्य निर्णय पृ० ११७ । मानस प्रबोध पृ० ३४ ।
२—रामचन्द्र शुक्ल : जायसी ग्रंथावली की भूमिका पृ० सं० २०५–२०६
(पंचम संस्करण)।

यह है कि प्रत्येक तर्क का निर्णय उनकी अपनी मान्यता-'तुलसी का जन्म स्थान सोरों" सिद्ध करना दिखाई देता है। यही कारण है कि उनके निष्कर्ष तथा निर्णय विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध न हो सके। उनका श्रम उपयोगी होते हुए भी पूर्ण सफलता को न पा सका। त्रिपाठी जी ने तुलसी की भाषा में प्रयुक्त मुहावरों, कहावतों तथा अलंकारों आदि पर प्रकाश डालते हुए कुछ प्रान्तीय भाषाओं तथा हिन्दी की बोलियों, उपबोलियों के अनेकानेक शब्द रूपों पर प्रकाश डालकर एक ऐसी सामग्री हमारे सामने प्रस्तुत की है जो कई अंशों में प्रेरणादायक है। इसमें भाषा का गठनात्मक अध्ययन प्रस्तुत नहीं किया गया है।

इण्डियन ऐंटीक्वेरी और इलाहाबाद यूनीवर्सिटी स्टडीज में प्रकाशित निबन्ध—डा० बाबूराम सक्सेना ही एकमात्र ऐसे भाषाविद् हैं जिन्होंने सर्वप्रथम भाषा विवेचन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया है[1] उन्होंने अपने निबन्धों में क्रमशः रामायण में संज्ञा रूप, क्रिया पद तथा 'रामायण' में फारसी से उधार लिए गए शब्द आदि का विवेचन भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से किया है। निबन्धों में भाषा के सर्वाङ्गीण विवेचन के अभाव में भी तुलसी की भाषा के अध्ययन की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

तुलसी के चार दल—अपने इस ग्रंथ में पं० सद्गुरुशरण अवस्थी ने 'रामलला नहछू, बरवै रामायण', पार्वती मंगल और जानकी मंगल' की भाषा शैली तथा काव्य सौन्दर्य का सुन्दर वर्णन किया है। यत्र तत्र स्थान तुलसी की भाषा के सम्बन्ध में भी संकेत किया गया है। किन्तु भाषा गठन की दृष्टि से इस कृति की कोई उपयोगिता नहीं है।

मानस व्याकरण—मानस संघ रामवन (सतना) से प्रकाशित इस ग्रंथ में 'रामचरित-मानस की भाषा का व्याकरणिक अध्ययन किया गया है। पं० रामनरेश त्रिपाठी ने मानस के अनेक व्याकरणिक रूपों का संकलन कर उन्हें विश्लेषणात्मक रूप प्रदान किया है। फिर भी भाषा का गठनात्मक कथमपि नहीं हो सका है।

मानस शब्दानुक्रमणिका (Index vervorum of the Ramayan of Tulsidas)—ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रंथ की उपयोगिता से इन्कार नहीं किया जा सकता। शब्दावली की उपयोगिता की दृष्टि से यह रचना अन्य कोष ग्रंथों की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। शब्दों और उनके अर्थों को समझने के लिए इसकी उपयोगिता स्वीकार की जा सकती है।

मकरन्द—डा० बड़थ्वाल के इस लघु संग्रह में ग्रन्थ-तंत्र भाषा की कलात्मकता के साथ साथ भाषा का अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया है। जो सर्वाङ्गीण न होकर

१–इण्डियन ऐंटीक्वेरी खण्ड ४२ पृ० ७१ ७६।

एकांगी है और परम्परागत है। प्रस्तुत प्रबन्ध लेखन में उक्त कृति उल्लेखनीय रूप से सहायक सिद्ध नहीं हुई है।

इवाल्यूशन ऑफ अवधी—डा० बाबूराम सक्सेना ने अवधी भाषा का विकास स्पष्ट करने के लिए अवधी के दो रूप—आधुनिक अवधी तथा प्राचीन अवधी लिये हैं। अन्य कवियों के अवधी ग्रन्थों के अतिरिक्त तुलसीकृत रामचरित मानस को भी आधार रूप में [illegible] के अनेक रूपों का गठनात्मक विश्लेषण करके उनके ऐतिहासिक विकास क्रम पर प्रकाश डाला गया है। इस ग्रन्थ में तुलसी के सम्पूर्ण अवधी ग्रन्थों की सामग्री का उपयोग नहीं किया गया है और न उनकी अवधी से सम्बद्ध रचनाओं का स्वतन्त्र भाषा तात्त्विक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः लेखक का शोध का दृष्टिकोण भिन्न होने के कारण इस प्रकार तुलसी की अवधी भाषा का विश्लेषण करना स्वाभाविक नहीं था। फिर भी तुलसी की अवधी का व्याकरणिक स्वरूप अवश्य कुछ विवेचित हुआ है।

यह ग्रन्थ अनुसंधित्सुओं के लिए निर्देशन में पर्याप्त सहायक सिद्ध हुआ है। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम वैज्ञानिक शोध इसी ग्रन्थ के माध्यम से सामने आया है।

तुलसी की भाषा—प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में डा० श्रीवास्तव ने तुलसी द्वारा अपनी कृतियों में प्रयुक्त ब्रज तथा अवधी भाषा का विस्तृत विवेचन किया है। भाषा वैज्ञानिक विवेचन की अपेक्षा उनका साहित्यिक विवेचन अधिक पुष्ट एवं प्रभावशाली रहा है जिससे भाषा का गठनात्मक विश्लेषण भली भाँति प्रस्तुत नहीं हो सका। भाषा का जितना भी विवेचन किया गया है वह परम्परागत अधिक है। दोनों का एक साथ अध्ययन होने से और फिर साहित्यिक पक्ष पर अधिक बल रहने से तुलसी की अवधी का भाषा तात्त्विक विश्लेषण समुचित रूप से नहीं हो सका है। डा० श्रीवास्तव के अध्ययन का दृष्टिकोण प्रस्तुत लेखक के अध्ययन के दृष्टिकोण से भिन्न है। फिर भी प्रस्तुत प्रबन्ध लेखन में यह ग्रन्थ पर्याप्त सहायक सिद्ध हुआ है। डा० बाबूराम सक्सेना के शोध कार्य के बाद द्वितीय महत्वपूर्ण शोध कार्य डा० श्रीवास्तव का ही है जो तुलसी की भाषा का अध्ययन करते समय दिशा प्रदान का कार्य करता है।

प्रस्तुत विषय की उपयोगिता एवं आवश्यकता—तुलसी विषयक उल्लिखित सामग्री के विवेचन एवं परीक्षण से यही निष्कर्ष निकलता है कि तुलसी पर पर्याप्त कार्य सम्पन्न किया जा चुका है—विशेषतः साहित्यिक दृष्टि से और गौणतः भाषा विश्लेषण की दृष्टि से। परन्तु तुलसी की अवधी कृतियों को आधार बनाकर उनमें प्राप्त भाषा का गठनात्मक विश्लेषण वर्णनात्मक दृष्टि से अभी तक किसी भी अनुसंधित्सु ने प्रस्तुत नहीं किया है। अतएव इस प्रकार के अध्ययन की आवश्यकता

बना हुई थी। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर प्रस्तुत शोध कार्य किया गया है। प्रस्तुत शोध कर्त्ता ने सर्वत्र ऐसी कोई बात तो नहीं कही है जो सर्वथा नवीन हो, हाँ इतना अवश्य है कि तुलसी पर हुये अभी तक के भाषा सम्बन्धी कार्यों के प्रकाश में किया गया इस प्रकार का भाषा तात्त्विक अध्ययन, जिसके प्रस्तुतीकरण का ढग, मानदण्ड तथा निष्कर्ष बहुत कुछ अपने हैं जिनके प्रतिपादन में अधिकांशत मौलिकता का सहारा लिया गया है। यह शोध-कार्य विगत शोध-कार्यों से साम्य रखते हुये कुछ भिन्न है इसीलिए इसका अपना पृथक अस्तित्व है। इस प्रयास में कहाँ तक सफलता मिली है इसका निर्णय विद्वान परीक्षक करेंगे। प्रस्तुत अध्ययन पूर्वोक्त आवश्यकता की पूर्ति की दिशा में प्रथम प्रयास है। अनुशंसितस्तु या यही विनम्र निवेदन है।

प्रस्तुत शोध कार्य के माध्यम से तुलसी अवधी का स्वरूप और अधिक स्पष्ट हो सकेगा। उसकी गठनात्मक विशेषताओं का उद्घाटन होगा। ऐतिहासिक भाषा सघटना करते समय यह कार्य एक कड़ी के रूप में सहायक बनेगा। हिन्दी प्रदेश में प्रचलित तत्कालीन जन भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन में इससे मदद मिलेगी हिन्दी की प्रामाणिक भाषा सघटना करते समय ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण में यह कार्य भी कुछ सहायक सिद्ध हो सकेगा। हिन्दी के अन्यतम एव अद्वितीय भक्त गोस्वामी तुलसीदास की अवधी रचनाओं को समझने में और विशेष रूप से सारे उत्तर भारत में सम्मानित एव अभिनन्दनीय ग्रन्थ 'रामचरित मानस' की भाषा को समझने में प्रस्तुत शोध कार्य विशेषतया सहायक सिद्ध होगा यह भी कोई कम गौरव की बात नहीं है।

१ २ प्रस्तुत अध्ययन की सीमायें

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध तुलसी की अवधी के भाषा तात्त्विक अध्ययन से सम्बन्धित है अतएव इस शोध कार्य में तुलसी की केवल अवधी रचनाओं का ही आधार बनाया गया है उनकी अन्य ब्रज भाषा कृतियों को छोड़ दिया गया है।

कवि की कृतियाँ—प्रस्तुत प्रसग में तुलसी की अन्य कृतियों को जिनकी प्रमाणिक हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हो सकी हैं विचार की सुविधा के लिये दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है—

(१) कवि कृत मान्य कृतियाँ इसके अन्तर्गत निम्नलिखित कृतियाँ आती हैं—

(१) राम लला नहछू (२) रामचरित मानस (३) बरवै रामायण (४) जानकी मंगल (५) पार्वती मंगल (६) रामाज्ञा प्रश्न (७) गीतावली

(८) कृष्ण गीतावली (९) विनय पत्रिका (१०) बरवै रामायण (११) सतसई रामायण (१२) कवितावली तथा (१३) हनुमान बाहुक

(२) अन्य रचनायें—

(१) अंकावली (२) वैराग्य संदीपनी (३) बजरंग बाण (४) बजरंग साठिका (५) भरत मिलाप (६) विजय दोहावली (७) बृहस्पति काण्ड (८) छन्दावली रामायण (९) छप्पय रामायण (१०) यमराज की गीता (११) ध्रुव प्रश्नावली (१२) गीता भाषा (१३) हनुमान ध्यान (१४) हनुमान चालीसा (१५) हनुमान पंचक (१६) ज्ञान दीपिका (१७) पदबन्ध रामायण (१८) राम मुक्तावली (१९) राम सगुन (२०) साखी तुलसीदास जी की (२१) संकट मोचन (२२) [illegible] (२३) सूर्य पुराण (२४) तुलसीदास जी की बानी तथा (२५) उपदेश दोहा

प्रथम श्रेणी की रचनाओं में से अधिकों की निम्नलिखित प्रामाणिक मुद्रित संस्करणों को आधार बनाया गया है—

आलोच्य सामग्री—

(१) रामलला नहछू—सं० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तुलसी ग्रंथावली, दूसरा भाग काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

(२) जानकी मंगल —सं० हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर

(३) पार्वती मंगल —सं० हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर

(४) बरवै रामायण—सं० हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर

(५) रामचरित मानस—सं० हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर

प्रामाणिकता—साहित्यकारों तथा शोधकर्ताओं ने अनेक तुलसी तथा उनकी अनेकानेक रचनाओं की कल्पना कर डाली है। इसलिए इस असली नकली रूपों के विशाल भंडार में असली कवि तथा उसकी असली रचनाओं को ढूँढ़ निकालना एक कठिन कार्य हो गया है। घटना तथा काल निर्धारण कवि द्वारा स्वतः न किए जाने के कारण भी कृतियों की प्रामाणिकता में सन्देह उत्पन्न हो गया है। वस्तुतः तो इन कृतियों तथा अन्य बातों के आधार पर प्रामाणिकता सिद्ध करना एक स्वतन्त्र विषय है। फिर भी भाषा विषयक निष्कर्ष भ्रामक न होने पावें इसलिए प्रसंगवश इन कृतियों जिन्हें सामग्री हेतु चुना गया है की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में भी अति संक्षिप्त विवेचन कर देना यहाँ उचित समझा गया है।

हस्तलिखित प्रतियाँ

१—कवि हस्तलिखित प्रतिया

(२) प्रतिलिपियाँ

(अ) प्रतिलिपिया की प्रतिलिपियाँ

(ब) कवि हस्तलिखित प्रतिया की प्रति लिपिया

(१) रामलला नहछू—'तुलसी ग्रथावली' मे प्राप्त अ य रचनाओ की प्रतियो मे सबसे कम प्रतियाँ रामलला नहछू की प्राप्त हैं। अभी तक जितनी भी प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं उनके पाठ, मुद्रित प्रतियो के पाठ से साम्य रखते हैं। डा० माताप्रसाद गुप्त ने मुद्रित प्रति के उस अश पर आपत्ति प्रगट की है जिसमे राजा दशरथ निम्न वर्ग की स्त्रियो के यौवन पर मुग्ध दिखाए गए हैं। किन्तु डा० गुप्त ने इसकी प्रामाणिकता को स्वीकार करते हुए लिखा है—

"रामलला नहछू को कवि की कृतियो म स्थान न देना ठीक न होगा नेव त्रुटियो का यह समाधान मान लेने पर शीघ्रता से ही हो जाता है कि यह कवि की निरी प्रारम्भिक रचनाओ मे से है। इसलिए रामलला नहछू का भी हम कवि की प्रामाणित रचनाओं मे स्थान दे सकते हैं।[१]

एक प्रति डा० माताप्रसाद गुप्त को प्राप्त हुई है जिसे जि होने कवि के जीवन-काल की स्वीकार किया है। इसका पाठ मुद्रित पाठ स भिन्न है। ग्रथ की प्रस्तुत प्रति मे २६ द्विपदिक हैं जबकि मुद्रित पाठ मे ४० द्विपदियाँ हैं। प्रस्तुत पाठ की १४ द्विपदियाँ मुद्रित पाठ म नही मिलती हैं तथा मुद्रित पाठ की २७ द्विपदियाँ प्रस्तुत प्रति म नही मिलती है। प्रस्तुत पाठ मे वह अश नही प्राप्त है जिसम राजा दशरथ निम्न वग की स्त्रियो के यौवन सौ दय पर मुग्ध दिखाए गए हैं। साथ ही कवि इ' की दीघ रूप ई तथा उ क स्थान पर उ' का प्रयोग करता दिखाई देता है। पुष्पिका से भी स्पष्ट हो जाता है कि यह प्रति न तो कवि हस्तलिखित है और न कवि के जीवन काल ही की है।[२] अ य प्रतियो के पाठ मुद्रित पाठ स मिलते जुलते हैं इसलिए मुद्रित प्रति (गोरखपुर प्रेस) को ही आधार रूप म ग्रहण किया गया है।

१—डा माताप्रसाद गुप्त—तुलसीदास पृ० १२९। २—वही पृ० :

(२) जानकी मंगल—इस ग्रंथ में कवि ने तिथि निर्देश स्वयं नहीं किया है। इस ग्रंथ की अनेक प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं, किंतु इनमें से एक भी प्राचीन नहीं मालूम पड़ती है।

१—एक प्रति बावन कुंज अयोध्या में प्राप्त हुई है। इस प्रति में ण का प्रयोग हुआ है जबकि अवधी की प्रवृत्ति के अनुसार ण के स्थान पर 'न' का प्रयोग किया जाता है। इसमें पुष्पिका नहीं है किन्तु प्रारम्भ में दी हुई तिथि इस प्रकार है—

संवत १६३२ कथा किए भया

२—बावन कुंज के पाठ से बिल्कुल मिलती जुलती एक प्रति अयोध्या निवासी पं० श्रीराम रत्न त्रिपाठी के पास है। इस प्रति के भी प्रारम्भ में तिथि निर्देश इस प्रकार है—

सं० १६३२ कथा किए भया'

ये दोनों प्रतियाँ पद्य में हैं किन्तु आरम्भ में तिथि निर्देश गद्य में किया हुआ है जो कवि की अन्य रचनाओं में कहीं नहीं मिलता है। दूसरे ये प्रतियाँ कवि की लिखावट में भी नहीं हैं। डा० श्यामसुन्दरदास तथा पं० सद्गुरुशरण अवस्थी 'जानकी मंगल' की रचना पार्वती मंगल के समय की मानते हैं। डा० रामकुमार वर्मा भी इसी विचार के पोषक हैं। पं० रामनरेश त्रिपाठी जानकी मंगल का रचना काल सं० १६२४ के आसपास मानते हैं।

३—एक अन्य प्रति सं० १९१० की प्राप्त हुई है जिसका पाठ मुद्रित पाठ से सर्वथा भिन्न है। साथ ही इस पर राजस्थानी का प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है।

४—दो अन्य प्रतियाँ मिली हैं जिनका नाम जानकी मंगल न होकर सीता स्वयंवर है। यह पाठ भी तुलसी का नहीं है क्योंकि अंतिम छन्द में बालकृष्ण की छाप मिलती है।

अन्य प्रतियों के पाठ मुद्रित पाठ से मिलते जुलते हैं। अतएव मुद्रित पाठ को ही आधार सामग्री हेतु चुना गया है। इसकी प्रामाणिकता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया जा सकता।

(३) रामचरित मानस—तुलसी के मान्य ग्रंथों में यही एक ऐसा ग्रंथ है जिसकी प्रामाणिकता के सम्बन्ध में तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता है। मानस की प्राचीनतम प्रति सं० १६६१ की प्राप्त है। अभी तक खोजों द्वारा प्राप्त रामचरित मानस की समस्त प्रतियाँ इस प्रकार हैं—

-सं० १७ १ की प्रति—इसमें अयोध्याकाण्ड नहीं है। यह भारत कला भवन, काशी में है।

२–सं० १७६२ की प्रति—यह प्रति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के पुस्तकाध्यक्ष स्व० प० शम्भुनारायण चौबे के संग्रह में है। यह प्रति भी सं० १७७१ की प्रति के समान है।

३–सं० १९१६ १९२१ के मध्य की प्रतियाँ—ये काशी में स्व० सुधाकर द्विवेदी के उत्तराधिकारियों के पास हैं। इनमें संशोधन बड़ी स्वच्छन्दता के साथ किया गया है।

४–रघुनाथ दास तथा बन्दन पाठक की प्रतियाँ— प्रतियाँ अभी अप्राप्य हैं।

५ मिर्जापुर की प्रतियाँ —इनमें से एक प्रति डा० मानाप्रसाद गुप्त के संग्रह में है तथा अन्य प्रतियाँ सं० १८८१ की मिर्जापुर निवासी श्री कलाशनाथ जी के पास है। इसमें बालकाण्ड नहीं है। इन दोनों प्रतियों में पाठ एक से है।

६–बीजक की प्रतियाँ — इस समय यह प्रति अप्राप्य हैं किन्तु इसका पाठ स्व० कोदवराम ने तैयार किया था जो सं० १९४३ व १९४९ में वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई में प्रकाशित हुआ था।

७–सं० १६११ की बालकाण्ड की प्रति–यह प्रति मानस की प्राप्त अन्य प्रतियों में सबसे प्राचीन है। इस सं० १६६१ की प्रति भी माना जाता है।

डा० गुप्त के शब्दों में— इस कवि की हस्तलिखित प्रति नहीं माना जा सकता है। फिर भी, ग्रंथ की प्राचीनतम प्रति है।

८–काशिराज की सं० १७०४ की प्रति–उपर्युक्त सं० १६६१ की प्रति के अनन्तर यह सबसे प्राचीन प्रति है। इसमें तिथि का संकेत नहीं है।

९–राजापुर की अयोध्याकाण्ड की प्रति–यह प्रति कवि हस्तलिखित मानी जाती है परन्तु डा० गुप्त इसे कवि हस्तलिखित नहीं मानते है।

मानस की अन्य प्रतियाँ—ये प्रतियाँ प्राचीन नहीं है। साथ ही इनका पाठ भी सं० १६६१ १७० के मध्य की प्रतियों से भिन्न है। इनमें से कुछ प्रतियाँ डा० माताप्रसाद गुप्त के संग्रह में हैं।

(अ) बालकाण्ड सं० १९०५ की प्रति। (ब) सुन्दरकाण्ड सं० १६६४ की प्रति।
(स) लंकाकाण्ड सं० १६९७ की प्रति। (द) लंकाकाण्ड की सं० १७०२ की प्रति।
(इ) उत्तरकाण्ड की १६९३ की प्रति। (प) अरण्यकाण्ड की सं० १६४१ की प्रति–यह प्रति मिर्जापुर के हरदयाल के पास है। इसमें तिथि अधूरी है इन सभी प्रतियों में प्रक्षिप्तांश पाया जाता है

(४) **पार्वती मंगल**—इस रचना की प्रतियाँ अभी तक थोड़ी ही प्राप्त हुई हैं। और जो प्राप्त हैं उनमें कोई भी प्राचीन नहीं है। इसमें रचना तिथि का निर्देश निम्न प्रकार से है—

जय सबत फागुन सुदि पाच गुरु दिन ।
अस्विनि विरचेउँ मगल सुनि सुख छिनु छिनु ।।[1]

डा० गुप्त ने इसका रचना काल स० १६४३ का फालगुन शुक्ला ५ गुरुवार का माना है । डा० गुप्त के शब्दो मे—

पावती मगल की यद्यपि बहुत प्राचीन प्रति हमे उपलब्ध नही है । फिर भी इसके विरुद्ध कोई एसी बात नही है जिससे इसकी प्रामाणिकता पर सदेह किया जा सके ।[2]

जानकी मगल की प्रतिया के आठ मुद्रित पाठ से मिलत जुलते हैं । इस लिए गोरखपुर प्रस स प्रकाशित सस्करण का ही प्रस्तुत अध्ययन क लिए चयन किया गया है ।

बरव रामायण—इसमें कवि ने रचना तिथि तथा उल्लेखनीय ऐसी घटनाओ का भी वणन नही किया है जिसस इसक सम्बन्ध में कुछ निश्चित हो सक । खोज रिपोर्टो में उल्लिखित प्रतियो में सबस प्राचीन प्रति स० १७९७ की है । मुद्रित पाठ के बयालीस छ द तथा उत्तरकाण्ड क ५९–६९ छ द इस प्रति म नही है इसकी प्रामाणिकता क सम्ब ध में कुछ निश्चय पूवक कह सकना कठिन है ।

बरवै रामायण—एक प्रति शिव सिंह सगर के पास थी जिसका पाठ मुद्रित पाठ कुछ भिन्न है । अन्य सभी प्रतियो के पाठ मुद्रित पाठ जस ही है इसीलिए उन प्रतिया के सम्बन्ध म कुछ कहना आवश्यक नही है । जिन प्रतियो के पाठ मुद्रित पाठ से भिन्न हैं उनके पाठ का सम्पादन वैज्ञानिक प्रणाली पर करने से ही उनकी प्रामाणिकता क सम्बन्ध म कुछ कहा जा सकता है । अतएव प्रस्तुत अध्ययन म बरव रामायण के मुद्रित पाठ को ही ग्रहण किया गया है ।

उपरोक्त रचनाओ की प्रामाणिकता को स्वीकार करते हुए डा० माताप्रसाद गुप्त न अपन तुलसीदास नामक ग्रथ म लिखा है—

फलत प्रथम श्रेणी (अवधी तथा ब्रज) के समस्त ग्रथ प्रामाणिक जान पडते हैं । यह बात भिन्न है कि कतिपय अन्य इन प्रामाणिक मानी गई रचनाओ म से किन्हीं किन्हीं म अप्रामाणिक भी मिलत है ।[2]

यह बहुत कुछ सत्य क निकट है कि उपयुक्त कृतियाँ गोस्वामी तुलसीदास की ही रचित हैं और उनकी प्रामाणिकता म तनिक भी सन्देह नही है । हाँ, इतना अवश्य है कि इन ग्रथो की प्रतिया म पाठ भद इतना अधिक ह कि उसका समाधान कर पाना एक कठिन समस्या है । मुद्रित पाठो के अतिरिक्त अन्य प्रतियो क पाठो क अतिरिक्त अन्य प्रतियो क पाठो क सम्बन्ध म अनिश्चितता क साथ-साथ

१–पावती मगल प० स० १ । २–तुलसीदास प० स० २१५ ।

उनकी प्रामाणिकता पूणत सन्दिग्ध है। अतएव प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मे भाषा निरूपण भ्रामक न हो सके, उपयुक्त ग्रथो के मुद्रित सस्करणो (गीताप्रेस गोरखपुर) को ही आधारभूत सामग्री के रूप मे ग्रहण किया गया है।

रामलला नहछू तथा 'बरवै रामायण' रचनाओ को, जिन्हे गीताप्रेस प्रकाशित करता है तुलसीदास ग्रथावली (सपादित प० रामचन्द्र शुक्ल) प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा काशी से देखा गया है।

१ ३ विश्लेषण-विधि

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध क अन्तगत तुलसी की अवधी भाषा का भाषा-तात्त्विक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अत तुलसी की अवधी रचनाओ को ही सामग्री सचयन हेतु चुना गया है। प्रत्यक रचना से सकलित की गई सामग्री इस प्रकार है—

ग्रन्थ	दोहा सख्या	काड सख्या
१—रामचरित मानस—		
अ—बालकाण्ड	आरम्भिक—१ से १०० ; अन्तिम—३३० से ३६१ तक	—१ —१००००
आ—अयोध्याकाण्ड	आरम्भिक—१ से ५० तथा ८० से १०० ; अन्तिम—३०१ से ३२६ तक	— १०००१—१९८०३
इ—अरण्यकाण्ड	आरम्भिक—१ से २६ तक ; अन्तिम—३५ से ४६ तक	—१९८०४—२४५६३
ई—किष्किधाकाण्ड	आरम्भिक—१ स ३० तक	—२४५६४ २७०००
उ—सुन्दरकाण्ड	आरम्भिक—१ से ३० तक ; अन्तिम—४० से ६० तक	—२७००१—३३०००
ऊ—लकाकाण्ड	आरम्भिक—१ से ६० तक ; अन्तिम—८० से १२१ तक	—३३००१—४१५००
ए—उत्तरकाण्ड	आरम्भिक—१ से ५० तक ; अन्तिम—८० से १३० तक	—४१५०१—४७५००

२—बरवै रामायण—सम्पूण कृति से सकलित काड सख्या ५७५०१—४९०९८

३—पावती मगल के अन्तगत १४८ मगल छन्द (सोहर व) तथा १६ साधारण छन्द है। सकलित काड सख्या ४९०९९—५१५९८ तक।

४—जानकी मंगल—१०२ मंगल के साथ २४ साधारण छन्द हैं। सम्पूर्ण कृति से संकलित कार्ड संख्या ५१५९०–५१७३० तक।

५—रामलला नहछू—सम्पूर्ण कृति से संकलित कार्ड संख्या ५४१७१–५५९२०

सम्पूर्ण अवधी रचनाओं से ग्रहण की गई सामग्री कुल ५५९२० कार्डों पर संकलित की गई है।

चौपाई के अन्तर्गत, दोहा तथा सोरठा में चार चार चरण माने हैं। प्रत्येक रूप को उसके चरण सहित पृथक पृथक कार्ड पर संकलित कर लिया था। इस प्रकार प्रत्येक रूप के लिए अलग अलग कार्ड बनाया गया था। साथ ही प्रत्येक कार्ड पर उससे सम्बन्धित ग्रन्थ का नाम, चरण संख्या, छन्द संख्या, कांड आदि भी लिख दिये गये थे।

तुलसी की अवधी भाषा के भाषा-तात्त्विक अध्ययन में विश्लेषण की वर्णनात्मक पद्धति के परिपालन का ही प्रयास किया गया है। प्रत्येक रूप का उसके गठन के आधार पर विषय सूची के अनुकूल सन्निविष्ट किया गया है। रूप गठन का विश्लेषण करते समय प्रातिपदिक या धातु अंशों को अलग कर उनमें संलग्न होने वाले विभक्ति प्रत्ययों को स्पष्ट किया गया है। स्वनिम स्तर पर ध्वनियों को स्वनिम या ध्वनिग्रामों के अन्तर्गत स्थान दिया गया है—भाषा में उनकी कार्य कारिता को देखकर आलोच्य भाषा में प्राप्त रूपों को उनकी कार्यकारिता और गठन के आधार पर विवेचित कर उन्हें यथा स्थान प्रतिष्ठित किया गया है। जो रूप गठन और अर्थ की दृष्टि से आलोच्य भाषा की प्रकृति अनुकूल नहीं मालूम पड़ा उसे अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का स्वीकार कर लिया गया है। इस अध्ययन में उदाहरण रूप में अनुसंधित्सु सभी रूप नहीं दे सका है। उदाहरणों के अन्तर्गत कुछ ही रूपों को दे सका है जो आलोच्य भाषा की शब्द रचनात्मक तथा रूप रचनात्मक प्रकृति एवं प्रवृत्ति को लक्षित करते हैं। इस प्रकार का यह शोध कार्य सम्पन्न हुआ है।

१.४ तुलसी की अवधी : सामान्य स्वरूप

१.४.१ ध्वनि विचार—उच्चारण लक्षणों की दृष्टि से तुलसी की अवधी में प्राप्त दस स्वर ध्वनिग्राम इस प्रकार हैं—(१) मूल—

१—ह्रस्व—अ इ, उ २—दीर्घ—आ ई ऊ ए ओ

(२) संयुक्त स्वर—ए (अइ), औ (अउ)

३—अनुनासिकता—सभी स्वरों के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं यथा—अँ, आँ, इँ, ईँ उँ ऊँ एँ ऐँ ओँ औँ

ये स्वर ध्वनियाँ शब्द की तीनों स्थितियों में प्राप्त हैं। साथ ही इनकी व्यतिरेकी स्थितियाँ भी मिलती हैं। इसीलिए, ये ध्वनिग्राम स्तर प्राप्त हैं। (देखिए विषयक्रम २ ३ १) स्वरों को अनुनासिक बनाने वाली अनुनासिकता भी पृथक से ध्वनिग्राम है।

पृथक लिपि चिह्न न होने के कारण फुसफुसाहट वाले स्वर—इ उ ए और उदासीन स्वर (अ) तथा ह्रस्व ए और ओ को अंकित करने के लिये क्रमशः मूल स्वरों के द्योतक 'इ उ, 'ए' 'अ ए तथा ओ चिह्नों का प्रयोग किया गया है (देखिए २ ३ १)। हिन्दी तथा आधुनिक अवधी में भी उपयुक्त दस स्वर (मूल तथा संयुक्त) तथा उनके अनुनासिकता रूप प्राप्त हैं। फुसफुसाहट वाले स्वर आधुनिक अवधी में स्पष्ट हैं, पर हिन्दी में उनका अस्तित्व नहीं माना गया है।

ध्वनिग्राम स्तर पर तुलसी की अवधी में निम्नलिखित व्यंजन प्राप्त हैं।

१—स्पर्श—कण्ठय—क ग (घ) ग, प। तालव्य—च, छ ज् झ।

मूर्धन्य—ट, ठ ड ढ। द्वयोष्ठ्य—प फ, ब, भ।

२—नासिक्य—न, म्ह म म्ह। ३ पार्श्विक—ल

४—लुण्ठित—र। ५—संघर्षी—स ह।

उपयुक्त व्यंजन ध्वनिग्रामों के अतिरिक्त ङ ञ (नासिक्य) ड़ ढ़ (उत्क्षिप्त), श (ष) (संघर्षी) और विसर्ग ( ) का प्रयोग भी मिलता है जो ध्वनिग्रामीय स्तर पर नहीं है (देखिए विषयक्रम २ ३ २)। तुलसी की अवधी में ध्वन्यात्मक परिवर्तन मिलता है। पदादि में प्रायः स्वर सुरक्षित रहे हैं। किन्तु पद मध्य में इनका परिवर्तन द्रुत गति से हुआ है। सर्वाधिक स्वर परिवर्तन पदान्त में (छन्दानुरोध से) हुआ है (देखिए विषयक्रम २ २)। तुलसी की अवधी में व्यंजन ध्वनियों में भी लिप्यन्तरण मिलता है जिसका उल्लेख २ २ १ में किया जा चुका है।

तुलसी की अवधी में तीन स्वरों के संयोग की अपेक्षा दो स्वरों के संयोग का आधिक्य है। पदमध्य तथा पदान्त में स्वर संयोग अधिक मिलता है। (देखिए विषयक्रम २ ४)। द्वि व्यंजनात्मक संयोग का बाहुल्य है जबकि त्रि व्यंजनात्मक संयोग कम मिलते हैं। समस्थानीय व्यंजन संयोग सर्वाधिक प्राप्त है जबकि अन्य व्यंजन संयोग अत्यल्प है (देखिए विषयक्रम २ ५)।

तुलसी की भाषा में पाँच प्रकार से अक्षर निर्मित है—(१) अ (२) अ+क (३) क+अ (४) क+अ+क तथा (५) अ+क+अ (फुसफुसाहट वाले)। आलोच्य भाषा में द्वयक्षरी तथा त्र्यक्षरी शब्दों की बहुलता है। चतुरक्षरी शब्द सरल सुलभ हैं किन्तु द्वयक्षरी की तथा त्र्यक्षरी की अपेक्षा कम प्राप्त हैं। पंचाक्षरी शब्द अत्यल्प मात्रा में प्राप्त हैं और जो हैं वे सामासिक हैं। आधुनिक हिन्दी में भी द्वयक्षरी तथा त्र्यक्षरी शब्दों की बहुलता है।

१ ८ - शब्द रचना विचार—ससार की प्रत्येक भाषा में न्यूनाधिक मात्रा म विभाषी शब्द पाये जाते हैं। आलोच्य भाषा (तुल्सी की अवधी) प्रा० भा० आ० भा० से म० भा० आ० भा० म होती हुई इस अवस्था म विकसित हुई है। साथ ही विदेशी प्रभाव भी शब्दावली पर पडता है इसलिए भाषायी स्रोत से देखने पर मालूम होता है कि उसम तत्सम अर्धतत्सम तद्भव देशज तथा विदेशी (अरबी फारसी, तत्कालीन परिस्थितिया क कारण) शब्द हैं (देखिए विषयक्रम ३ १) हिन्दी तथा आधुनिक अवधी म भी इस प्रकार क शब्द मिलते हैं। तुल्सी ने विदेशी शब्दावली (अरबी फारसी) को अवधी का तत्कालीन उच्चारण प्रवृत्ति क अनुसार ग्रहण किया है।

रचना की दृष्टि म आलोच्य भाषा म मूल यौगिक तथा सामासिक शब्द प्राप्त होत है जिनम सर्वाधिक प्रयुक्त शब्द यौगिक प्रकार के ह और सबस कम सामासिक प्रकार क (देखिए विषयक्रम ३ १) हिन्दी तथा आधुनिक अवधी म भी यही विशेषता मिलती है।

तुल्सी की अवधी म यौगिक शब्दों की रचना कई प्रकार क व्युत्पादक प्रत्ययो क योग स हुई ह (देखिए विषयक्रम ३ २) ऐस यौगिक शब्द सरलता म प्राप्त हैं जिनम एक साथ पूर्वप्रत्यय और पर प्रत्यय दोनो का योग हुआ है। ऐस भी शब्द प्राप्त है जिनम दो पर प्रत्ययो का योग एक ही प्रातिपदिक म हुआ है। तीन पर प्रत्ययो क योग स निर्मित शब्द सख्या की दृष्टि स अत्यल्प हैं। तुलसी की अवधी की मूल प्रवृत्ति दो शब्द प्रकृतियो क योग स निर्मित समास की ओर है। किन्तु जहाँ कहीं सस्कृत की छाप पडी है वहाँ लम्ब-लम्ब समासो की छटा देखन को आती। आलोच्य भाषा म भाषायी स्रोत की दृष्टि स समास इस प्रकार हैं—तत्सम+तत्सम तत्सम+अर्द्धतत्सम अर्द्धतत्सम+अर्द्धतत्सम अर्द्धतत्सम+तद्भव विदेशी+विदेशी आदि (देखिए विषयक्रम ३ ३)।

१ ४ ३ रूप रचना -

१ ४ ३ १ सज्ञा—तुल्सी की अवधी म सज्ञा रूप रचना प्रातिपदिको म लिङ्ग-वचन कारक सम्बन्धी परवर्ती विभक्ति प्रत्ययो के योग स होती है। प्रातिपदिको म अन्त्य स्वरो म परिवर्तन—ह्रस्व स्वरान्त सज्ञाएँ दीर्घ तथा दीर्घ स्वरान्त सज्ञाए ह्रस्व स्वरान्त (अकारान्त सज्ञाओ का परिवर्तन इ। इ तथा उ। ऊ म) मिलती हैं। शब्द रचना की दृष्टि से प्रातिपदिक तीन प्रकार (मूल यौगिक तथा समासिक) क है (देखिए विषयक्रम)।

सज्ञा रूप रचना म व्याकरणिक कोटियाँ तीन है–१—लिङ्ग २—वचन और ३—कारक। लिङ्ग शब्द प्रातिपदिक अग स बधा हुआ है। वचन और कारक की

स्पष्ट करने के लिये प्रत्ययों और परसर्गों की सहायता ली गई है। तुलसी की अवधी मे प्रयुक्त समस्त प्राणिवाचक एवं अप्राणिवाचक संज्ञायें पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग में आती हैं। नैसर्गिक लिंग विधान का नितान्त अभाव है। लिंग निर्धारण के कोई निश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते हैं, फिर भी दो विधायें—१—शब्द परक अर्थात अन्त्य स्वरों के आधार पर तथा—२—प्रयोग के आधार पर लिंगाभास मिलता है। सामान्य रूप से इकारान्त और ईकारान्त संज्ञायें स्त्रीलिंग तथा उकारान्त और ऊकारान्त संज्ञायें पुल्लिंग हैं। किन्तु इनमें कहीं अपवाद भी मिलते हैं।—नि-नी, –नि इनी तथा इया में अन्त होने वाली संज्ञायें स्त्रीलिंग हैं। ब्रज भाषा के प्रभाव से प्राप्त ओकारान्त संज्ञायें पुल्लिंग की ही हैं।

वाक्य में विशेषण रूपों या क्रिया रूपों या सम्बन्धवाची सार्वनामिक विशेषण रूपों द्वारा संज्ञा शब्दों के लिंग का आभास मिलता है। कभी कभी सम्बन्ध कारक के परसर्गों द्वारा भी लिंग का पता चलता है (देखिये विषयक्रम ४ २)।

आलोच्य भाषा में दो वचन—एक वचन तथा बहुवचन हैं। वचन और कारक के प्रत्यय अलग-अलग न होने के कारण बहुवचन का बोध संदर्भ से होता है। कहीं गण-गन, लोग-लोग तथा 'पच' आदि शब्द जोडकर बहुवचनत्व का बोध कराया गया है। यह विश्लिष्ट विधा के अन्तर्गत है। इस प्रकार तुलसी की अवधी में वचन की अभिव्यक्ति की दो विधायें संश्लिष्ट (विभक्ति प्रत्यय युक्त) तथा विश्लिष्ट (पृथक से बहुवचनत्व शब्द जोडकर) हैं। प्रायः वाक्य में संदर्भ से ही वचन का बोध होता है।

समस्त संज्ञाओं के दो रूप—१—मूल और तिर्यक प्राप्त हैं। निर्विभक्तिक रूप मूल और अन्य रूप (सविभक्तिक परसर्ग रहित तथा परसर्ग सहित) तिर्यक हैं। साकालिक दृष्टि से निर्विभक्तिक (व्याकरणिक प्रत्यय रहित) रूप ही प्रातिपदिक या शब्द है। ऐसे भी स्थल हैं जहाँ छन्दानुरोध से परसर्ग का लोप मिलता है, वहाँ परसर्ग योजना करनी पड़ती है। ऐसे परसर्गाभावी निर्विभक्तिक एवं सविभक्तिक प्रयोग तिर्यक ही है। कर्ता को छोड़कर अन्य कारक सम्बन्धों के द्योतक परसर्ग मिलते हैं। सम्बोधन में संज्ञा रूप प्रायः एकवचन में ही प्रयुक्त हुये हैं। इनके पूर्व सम्बोधन नायक रे, री, हो, हे आदि [illegible] मिलता है। [illegible] सम्बोधक रूप भी प्रस्तुत हुये हैं (देखिये विषयक्रम ४ ४)।

१ ४ ३ २ आलोच्य भाषा में सर्वनाम— [illegible] की [illegible] कोटियाँ दो वचन और कारक ही प्रमुख हैं। लिंग का अभाव [illegible] सर्वनामों के सम्बन्ध कारकीय रूपों में ही मिलता है। बहुवचन [illegible] [illegible] विभक्ति प्रत्यय योजना न होकर स्वतन्त्र प्रातिपदिकों (सर्वनाम [illegible]) का प्रयोग होता है। मूल रूप (कर्ता

कालिक कृदन्तों तथा क्रियायक संज्ञा कृदन्तों से भी संयुक्त क्रियाओं की रचना हुई है।

आधुनिक अवधी और हिन्दी में भी इसी प्रकार के रूप—रचनात्मक प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। हिन्दी में इनमें सम्बन्धित प्रत्यय विधान भिन्न हैं, जबकि आधुनिक अवधी में बहुत कुछ समान है। उल्लेखनीय बात यह है कि तुलसी की अवधी में तिङन्ती रूपों का प्रयोग बाहुल्य है जबकि आधुनिक अवधी और हिन्दी में तिङन्ती रूपों का प्रयोग सीमित है। आधुनिक काल में आकर कृदन्त रूपों के प्रयोग बढ़ गये। तुलसी के समय से ही इनका प्रयोग बढ़ रहा था इसीलिये तत्कालीन अवधी में दोनों प्रकार के रूपों का प्रयोग हो रहा था।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि तुलसी ने भाषा के बिखरे हुये अंशों को बड़े कौशल के साथ व्याकरणिक साँचे में ढाल कर भाषा का सुगठित, व्याकरण सम्मत एवं व्यापक रूप उपस्थित किया है जिसमें प्रा० भा० आ० भा०, म० भा० आ० भा० तथा आ० भा० आ० भा० के भी चिह्न विद्यमान हैं साथ ही हिन्दी की ओर पुष्ट संकेत भी।



२ | ध्वनि-विचार

२.१ ध्वनि एवं वर्ण : एक तात्त्विक दृष्टि

मानव वागवयवों से उत्पन्न वह ध्वनि जो किसी भाषा में अपनी सार्थकता सिद्ध करती है, भाषा शास्त्र में ध्वनि मानी जाती है। वर्ण इसी सार्थक ध्वनि का लिखित प्रतीक है। प्रत्येक भाषा के उच्चारण में अनेकानेक प्रकार की ध्वनियाँ मिलती हैं। एक ध्वनि समूह विशेष से ही भाषा की अभिव्यक्ति होती है। इन सभी प्रकार की ध्वनियों के लिए उस भाषा की वर्णमाला में वर्ण (लिपि चिह्न) हों, यह सम्भव नहीं। फिर भी अधिकांशतः महत्त्वपूर्ण ध्वनियों को अंकित करने के लिए वर्ण होते हैं। विशिष्ट ध्वन्यात्मक परिस्थितियों में उच्चारण करते समय ध्वनियों के गुणों में अन्तर पड़ जाना स्वाभाविक है और इस अन्तर को स्पष्ट करने के लिए वर्णमाला में इतने वर्ण हों यह प्रत्येक वर्णमाला के सामर्थ्य के बाहर है।

देवनागरी में भी विशुद्ध उच्चारण की दृष्टि से देखा जाए तो दुर्बलता मिलती है। इस दृष्टि से आलोच्य भाषा का विशुद्ध उच्चारण की दृष्टि से देवनागरी के माध्यम से सही अंकन हुआ होगा यह सम्भव प्रतीत नहीं होता है। जैसे— जहाँ छन्दों में अनेकानेक स्थलों पर आलोच्य भाषा में 'ए' और 'ओ' को दीर्घ मान कर उन्हें दो मात्राएं दी गई हैं वहाँ कुछ ऐसे भी स्थल हैं जहाँ उनका ह्रस्व रूप में उच्चारण होने के कारण उन्हें एक मात्रा प्राप्त हुई है—

दीर्घ ए तथा ओ—एक[1] एहो[2], थोए[3] विगोए

ह्रस्व ए तथा ओ मिलिएसि[4], पठएसि[5] होइ[6], साई[7]

अस्तु उनके ह्रस्व रूपों (ए एवं ओ) के लिए वर्णमाला में वर्ण उपलब्ध न होने के कारण दीर्घ रूपों को अंकित करने वाले वर्णों (ए तथा ओ) से ही काम लिया गया है।

१–रा० अर० १६।९३ २–रा० बा० ६७।८ ३–रा० बा० ४३।७
४–रा० बा० ४३।८ ५–रा० मु० १८।१७ ६–रा० मु० १९।२
७ रा० अर० ५।३८ ८–रा० अयो० ७।१४

फुसफुसाहट वाले स्वर 'इ उ' 'ए' को अंकित करने के लिए भी पृथक-पृथक वर्ण न होने के कारण मूल स्वर 'इ' 'उ' 'ए' को द्योतित करने वाले वर्णों से ही उक्त फुसफुसाहट वाले रूपो का भी अंकन किया गया है। भाषा शास्त्रियों-डा० बाबूराम सक्सेना, डा० सुनीतकुमार चटर्जी, डा० उदयनारायण तिवारी आदि ने वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर सिद्ध कर दिया है कि वर्तमान अवधी में फुसफुसाहट वाले स्वरो का अस्तित्व है और इसी आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि तुलसी की अवधी मे भी फुसफुसाहट वाले स्वर रहे होगे। लिपि रूप मे अध्ययन होने के कारण इनके तत्कालीन अस्तित्व के सम्बन्ध म निश्चयपूर्वक कह सकना सम्भव नही।

कभी-कभी परम्परा से प्रभावित होकर अथवा उच्चारण सुविधाथ स्वच्छन्दता के कारण भी त्रुटिपूर्ण वर्णों का प्रयोग चल पड़ता है जैसे-'ख' के लिए ष (मूर्धन्य संघर्षी व्यंजन) वर्ण का प्रयोग जैसे-

लषन[1], रूप[2], भाषा[3] (=बोला), दूषण[4]।

२ २ १ ध्वनि समूह और उसका लिप्यन्तरण

उच्चारण लक्षणो की दृष्टि से आलोच्य भाषा मे प्राप्त दस स्वरो को इस प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है—

(१) मूल—

(अ) ह्रस्व—अ, इ उ (ब) दीर्घ—आ, ई, ऊ ए, ओ

(२) संयुक्त स्वर—ऐ (अ+इ), औ (अ+उ)

(३) अनुनासिक स्वर—समस्त स्वरो के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं यथा-(अ) मूल—अँ, आँ, इँ, ईं, उँ, ऊँ, एँ तथा ओं।

(ब) संयुक्त-ऐं तथा औं।

फुसफुसाहट वाले स्वर (इ, उ ए) और उदासीन स्वर (अे) ह्रस्व ए, ऐं, ओ तथा ओ के अस्तित्व के सम्बन्ध मे निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता है क्योंकि इसके लिए कोई ठोस आधार नही है। इनके लिए पृथक कोई लिपि चिह्न नही है। आधुनिक अवधी मे डा० बाबूराम सक्सेना ने इनके अस्तित्व को स्वीकार किया है। इसी आधार पर कल्पना की जा सकती है कि तुलसी की अवधी में भी ये स्वर रहे होंगे। मात्रा-गणना तथा लयात्मक उच्चारण के आधार पर इनके अस्तित्व के अति निकट पहुंचा जा सकता है।

१-रा० बा० ३५९।१६ २-रा० बा० ५२।११ ३-रा० कि० ११७।१८
४-पा० म० ५३।१

'ऐ' तथा 'औ' के सम्बन्ध में परम्परागत कुछ विवाद रहे हैं। ऐ (अ+इ) तथा औ (अ+उ) दो स्वरों के संयुक्त रूप हैं फिर भी उच्चारण एक ही मात्रा काल में होने के कारण आधुनिक हिन्दी में इन्हें मूल स्वर स्वीकार किया जाने लगा है।

संयुक्त स्वर दो स्वरों का ऐसा मिश्रित रूप है जिसमें अपना अपना स्वतन्त्र अस्तित्व खोकर एकाकार हो जाते हैं और साँस के एक झटके में उच्चरित होते हैं। दोनों मिलकर एक स्वर जैसे हो जाते हैं और दोनों के योग से एक अक्षर बनता है। उच्चारण जिस स्वर से आरम्भ होता है वह दीर्घता के कारण अत्यन्त संक्षिप्त हो जाता है और जिह्वा दूसरे स्वर का उच्चारण करती है। उच्चारण एक स्वर से होता हुआ दूसरे स्वर की ओर चलता है। दोनों ही स्वर अपूर्ण रहते हैं जिससे दोनों का उच्चारण संयुक्त रूप से होता है। अवधी में अधिकांशतः ए तथा 'औ' वर्णों का प्रयोग हुआ है, यथा—

ऐसेहु[1], ऐहहिं[2], ऐसे[3], ऐहैं औषध[4] औरउ[5], और[6] आदि।

यत्र तत्र ए के लिए 'अइ' तथा 'औ' के लिए 'अउ' का भी प्रयोग किया है किन्तु इनकी संख्या नगण्य है—यथा—

अइसेउ एकु तिन्हहिं जे नाहीं।[7]
अइसेहु भाँति उर बिहर न तोरा।[8]
तनउ बउमि के चन्द की नाईं।[9]

ह्रस्व तथा दीर्घ स्वर अपने ध्वनि-संकेतों (वर्णों) के माध्यम से अंकित हुए हैं—असाधु[10] असुरन[11] आलस[12], आश्रम[13], इंधन[14], ईसा[15] उमा[16] उपाय[17] ऊना[18], ओरा[19] औषध[20] आदि।

आलोच्य भाषा में ध्वनि-संकेतों के अतिरिक्त इन ह्रस्व एवं दीर्घ स्वरों के मात्रिक चिह्न भी (व्यंजनों के साथ) प्रयुक्त हुए हैं। व्यंजनों के साथ स्वरों का अस्तित्व बताने के लिए इन्हीं मात्रिक चिह्नों का प्रयोग किया गया है जो क्रमशः इस

१–रा० अयो० १२।३ २–रा० अयो० ३१।१४ ३–रा० लं० ९।१६
४–पा० म० छं० ७।१ ५–रा० अयो० ६।३ ६–रा० बा० ३०।१५
७ पा० म० छं० ११।९ ८–रा० लं० ४।११ ९–रा० लं० २२।४
१०–रा० सु० ३८।१२ ११–रा० बा० ७।१९ १२–बरवै रा० ३९।२
१३–बरवै रा० ६६।१ १४–रा० अर० ३०।६ १५–रा० बा० ३२।३२
१६–रा० उ० १११।१९ १७–रा० बा० १।१४ १८–रा० अयो० ३१३।१७
१९–रा० सु० १४।१९ २०–रा० किं० २२।१२ २१–रा० अयो० ६।३

प्रकार है, यथा–निकट[1] में क+अ, ट+अ के रूप में 'अ' का अस्तित्व मान लेते हैं किन्तु इसके लिए पृथक मात्रिक चिह्न नहीं है। व्यंजन में ही 'अ' की सत्ता समाहित रहती है। अन्य स्वरों के लिपि चिह्न स्पष्ट हैं—

आ के लिए लिपिचिह्न (ा) जैसे मातु[2], नाना[3], बाता[4]।
इ के लिए लिपिचिह्न (ि) जैसे छाडि[5] मुनि[6]।
ई के लिए लिपिचिह्न (ी) जैसे भारी, माती[7]।
उ के लिए लिपिचिह्न (ु) जैसे कछु[8], प्रभु[9]।
ऊ के लिए लिपिचिह्न (ू) जैसे केतू[10], अनूपा[11]।
ए के लिए लिपिचिह्न (े) जैसे रहे[12], उपजे[13]।
ऐ के लिए लिपिचिह्न (ै) जैसे बैठहिं[14], बैदेही[15]।
ओ के लिए लिपिचिह्न (ो) जैसे काऊ[16], सोमा[17]।
औ के लिए लिपिचिह्न (ौ) जैसे प्रौढ[18], चौथे[19], समौ[20]।

मूल स्वर—ए तथा ओ का प्रयोग पद के आदि और मध्य में तथा अन्य स्वरों–अ आ, इ ई, उ, ऊ, ए तथा आ पद के आदि, मध्य तथा अन्त तीनों स्थितियों में प्रयुक्त हुए हैं यथा—

	आदि	मध्य	अन्त
अ–	अपजस[21], अघ[22],	अधारा[23], निकट[24], सारस[25], भगवाना[26],	अभिअ[27], पारिख[28] लाइअ[29]
आ–	आवते[30] आरती[31],	आनन[32], सिखावन[33], पिआस[34], मातु[35],	रोचना[36], महा[37] बजनिया[38]

१–पा० म० ९७।१ २–रा० अयो० १३।९ ३–रा० बा० १३३।१६
४–रा० बा० ३३३।२ ५–रा० बा० ३२२।१४ ६–रा० ल० ६०।१३
७–रा० ल० ६२।२२ ८–रा० उ० ५८।११ ९–रा० उ० ५८।१६
१०–रा०उ० ५८।११ ११–रा० उ० ५८।४ १२–रा० कि० १३।५
१३–रा० कि० १५।२३ १४–रा० कि० १५।२४ १५–रा० उ० २६।२
१६–रा० बा० ३३८।३ १७–रा० उ० ४७।७ १८–रा० उ० ४०।४
१९–रा० उ० ११०।९ २०–रा० ल० ७।६ २१–जा० म० २२।१
२२–रा० बा० ७।३२ २३–रा० बा० ६।११ २४–रा० उ० १।१
२५–पा० म० ९७।१ २६–रा० उ० २८।९ २७–रा० बा० १३।७
२८–रा० बा० २।२ २९–रा० बा० ३१९।५ ३०–पा० म०१२२।१
३१–पा० म० १०।१ ३२–रा० ल० ७।७ ३३–रा० ल १५।११
३४–बरव रा० ६४।१ ३५–पा० म० ३७।१ ३६–रा० अयो० १३।९
३७–जा० म० ३।१ ३८–पा० म० ६।२ ३९–रा० बा० ३५१।१८

होता है कि ऐ म अ+इ सयुक्त रूप में है। इसी प्रकार औ=अ+उ की स्थिति म है। तुलसी ने अवधी रचनाओं म सयुक्त स्वरों का प्रयोग आदि, मध्य तथा अन्त म किया है।

	आदि	मध्य	अन्त
ऐ–	एसहु[1], एहहिं[2] एसिउ[3] बमद,	कलास[5], कैरव[6], बखान,	कर[8], पर[9], हरैं[10],
औ –	औरच११ औरउ१२ औरे१३	प्रौढ़१४ सौतुख१५ कौसिल्या१६	परिहरावौ१७, समौ१८, देखौ१९

३–अनुनासिकता —

आलोच्य भाषा म प्रयोग की दृष्टि से प्राय समस्त स्वरों का अनुनासिक रूप भी मिलता है। लिपि म यह चन्द्र बिन्दु (ँ) से प्रदर्शित की जाती है। यह केवल स्वरों के साथ ही उच्चारित अनुनासिक तत्व है जो ह्रस्व के साथ अधिक तथा दीर्घ स्वर के साथ कम प्रयुक्त है। अवधी म स्वरों की अनुनासिकता के लिए चन्द्रबिन्दु के अतिरिक्त अनुस्वार का भी प्रयोग हुआ है, यथा—

	आदि	मध्य	अन्त
अ –	अँदसा[20] अँखिया[21], अँधियार[26]	कुअँरि[22], बिहँसि[27] कँगूरा[28]	माहँ[23] छाहँ[24], बिरहँ[25],
आ –	आँचा[29], आँकु[30], आँखी[35]	निगानाँग[31] छाँडे[36]	छाँहँ[32], चुआँ[33], जहाँ[34] जहवाँ[37],

१– रा०अयो० ४२।३ २– रा०अयो० ३१।१४ ३– रा०अयो० २७।९
४– रा०उ० १४।२६ ५– रा०उ० १४।४६ ६–रा०अयो १०।२०
७– जा०म० ८७।२ ८– बरव रा० ६।२ ९– रा० कि० ३।२
१०– जा०म० छ० ११।४ ११– रा०अयो० ६।३ १२– रा०बा० ३०।१५
१३– पा०म०छं० ११।१ १४– रा०उ० ११०।९ १५– पा०म० ६९।२
१६– रा०बा० १६।७ १७– बरवै रा० १३।२ १८– जा०म० २२।१
१९– पा०म० ६९।२ २०– रा०बा० १४।२० २१– बरव०रा० ३६।२
२२– बरवरा० ३९।२ २३– जा०म० १४३।२ २४– रा०ल० १९।३
२५– रा०उ० २७।८ २६– बरव०रा० १८।१ २७– बरवरा० १८।२
२८– रा०उ० ७।८ २९– रा०अयो ३२।९ ३०– पा०म० ६४।२
३१– रा०अयो० ३१।११ ३२– बरवरा० ७४।२ ३३– जा०म० ३५।२
४– रा०बा १७।३ ३५– रा०अर० २१।९ ३६– जा०म०छ० १५।४
३८– रा०र ७०।१०

	आदि	मध्य	अन्त
इं	— इंहिं[1], इंहइ[2],		सार्बहिं[3], तेंहिं[4], भइं[5],
ईं	— ईंधन[6],	सींक[7], नींदहु[8],	मईं[9], लालहीं[10], लगाईं[11]
उं	—	— पहुँनाई[12], पहुँचाव[13], पहुँचावहि[14]	जानिउँ[15], भयउँ[16], होउँ[17]
ऊं	— ऊंचि[18], ऊंट[19]	पूँछिउ[20], पूँछहीन[21], पूँछि[22]	डेराऊँ[23], काहूँ[24], नाऊँ[25]
एं	—	— जेइं[26], मेंट[27], देंहु[28],	बिलोएं[29], उपजाएं[30], धोए[31]
ओं	—	— चोंच[32], जाक[33]	क्यों[34]

सयुक्त स्वर "ऐं" "औं" के अनुनासिक रूप—इन दोना स्वरों के अनुनासिक रूप भी पर्याप्त मात्रा मे मिलते हैं—

ऐं–मैं[35], पांच[36], ऐहैं[37], नहैं[38], अहैं[39]

औं–भौंह[40], सौंपि[41], चौंरे[42], जौं[43], दौंड[44], घरौं[45], सुनावौं[46], नावौं[47]

व्यजन ध्वनियाँ—तुलसी की अवधी भाषा में निम्नलिखित व्यजन प्रयुक्त हुए हैं—

(१) स्पर्श कण्ठ्य – क, ख्, (ग), ग्, घ् ।
तालव्य – च्, छ ज, झ । मूर्धन्य – ट ठ् ड्, ढ् ।
दन्त्य – त् थ, द्, ध । द्वयोष्ठ्य – प, फ् ब, म् ।

(२) नासिक्य – न् न्ह्, म्, म्ह्, ङ, ञ् ।

(३) उत्क्षिप्त – ड़, ढ़ । (४) पार्श्विक – –ल । (५) लुण्ठित – र ।

(६) सघर्षी – ष्, (श्), स, ह् । (७) अनुस्वार – ं । (८) विसर्ग –

नासिक्य व्यजन—केवल अवधी में ही नहीं व्रजभाषा मे भी ङ्, ञ,तथा ण ध्वनियाँ अपने मूल रूप मे सुरक्षित नहीं पाई जाती है। इसके स्थान पर सवत्र अनुस्वार ( ) का प्रयोग मिलता है। ये व्यजन केवल पदमध्य म ही प्रयुक्त हुए हैं।

१–पा० म० ७६।२ २-जा० म० १३३।२ ३–जा० म० ११९।१
४-पा० म० छ० ६।१ ५-रा० कि० १६।१५ ६–रा० अयो० २५।१४
७-रा० अयो० १।२० ८–रा० बा० ३५८।१ ९–जा० म० १४६।१
१०–जा० म० छ १।३ ११–रा० अयो० १११६ १२–पा० म० छ० १०।१
१३ बरवै रा० ६७।२ १४–रा० बा० ३३०।१३ १५–रा० ल० १६।११
१६–रा० सु० १७।११ १७–रा० कि० ७।६२ १८–रा० बा० ८।१३
१९—रा० अर० ३८।१० २०–रा० अयो० २१।१३ २१–रा० सु० २५।१
२२-रा० अयो० ३२।३ २३–रा० अयो० १७।५ २४–जा० म० छ० २।१
२५––रा० कि० ६।३ २६–पा० म० १३९।२ २७–रा० सु० ५६।१७
२८–रा० कि० १०।२० २९ रा० उ० ४९।१० ३०–रा० अर० ३१।१७
३१–रा० उ० ४९।९ ३२–रा० अर० १।१३ ३३–रा० बा० ५।१०
३४–रा० बा० १०।२४ ३५–रा० बा० ३६१।१५ ३६–पा० म० ५।१
३७–पा० म० छ० ७।१ ३८–रा० बा० ३११।१८ ३९–रा० बा० ३११।२०
४०–बरवै रा० ३।१ ४१–रा० ल० ६।१९ ४२–रा० अयो० ६।१३
४३–रा० सु० ७।९ ४४–रा० अयो० ५।१४ ४५–रा० सु० ३।४७
४६–रा० सु० २।८ ४७–जा० म० २।१

कवर्ग से पूर्व ङ, टवर्ग में पूर्व ण तथा पवर्ग के पूर्व म् के स्थान अनुस्वार का प्रयोग हुआ है यथा—

ङ – गंगा' सुसंग', मयंक' प्रसंग सुविहंग कुरंग', मकर

ण – कंटक घंट' बैकुंठ कंठमनि'' दंड'',

म् – कंपा'', बिरंचि' प्रपंच' पंचवटी'' मंजन' ।

तत्सम शब्दावली में ण अपने मूल रूप में सुरक्षित है यथा—

प्रणाम'' सगुण' पाणि' आदि।

किन्तु अर्धतत्सम रूपों में 'न' में परिवर्तित हो गया है यथा—

गुन'' परिनाम'', करन'', दूषन' आदि।

ह के पूर्व नासिक्य व्यंजन प्रयोग में ह का परिवर्तन प में हो गया है। सम्पूर्ण रामचरित मानस में केवल लंकाकाण्ड के अन्तर्गत कुछ स्थलों पर तथा जानकी मंगल में तीन तथा रामलला नहछू में दो स्थलों पर ह अपरिवर्तित रूप में प्रयुक्त हुआ है। विकल्प से ह का परिवर्तन प अथवा ह् अपरिवर्तित रूप में भी प्रयुक्त हुआ है यथा—

ह — प् सिंहासन-सिंघासन'' । सिंहिनिहिं-सिंघिनिहिं'' ।

सिंहनाद-सिंघनाद' । सिंह -सिंघ'' ।

'ह' अपरिवर्तित रूप में—

सादर सिंहासन बैठारी ।'

सिंह ठवनि इत उत चितव ।'

करहिं पूजि नृप दीन्ह सुभग सिंहासन ।''

कनक खम्भ चहुँ ओर मध्य सिंहासन ।''

दशरथ राउ सिंहासन बैठि बिराजहिं ।''

१–रा० सु० १९।२	२–रा० कि० १५।३२	३–रा० अयो० ५।११
४–रा० या० १०।१८	५–रा० अयो० २८।१८	६ रा० बा० ७।१५
७–रा० बा २४।०	८–रा० अयो० ३११।९	९–रा० कि १०।२९
१०–रा० अर० ९।२	११–रा० ७ नं० ५।१२	१२–रा० उ० १९।५
१३–रा० बा० १२।६	१४–रा० उ० २७।१९	१५–रा० अयो० १८।११
१६–रा० अर० १३।३९	१७–रा० कि० १ ।११	१८–रा० अर० ११।७
१९–पा० म० ११।२	२०–रा० अर० ११।२१	२१–रा० बा० १४।८
२२–रा० बा० १४।७	२३–रा० बा० १४।५	२४–रा० उ० ९०।९
२५–रा० उ० १०।१०	२६–रा० अयो० ३९।१९	२७–रा० लं० ३९।२३
२८–रा० अर० २२।६	२९–रा० लं० १०६।११	३ –रा० लं० १८।२३
३१–जा० म० १६ ।१	३२–रा० ल० न० ४।३	३३–रा० लं० नं० २०।१

'म्ह' तथा 'न्ह' क्रमश म्' तथा 'न्' ध्वनियो के महाप्राण रूप हैं क्योकि इन्हे काव्य मे एक एक मात्रा ही मिली है। इनका प्रयोग पद मध्य मे ही प्राप्त है। 'म्ह' तथा 'न्ह' को वर्णमाला मे स्थान नहीं दिया गया है। दो वर्णो के समिश्रण से महाप्राण रूप अंकित किए गए हैं। तुलसी ने अवधी म 'म्ह' की अपेक्षा 'न्ह' का प्रयोग अधिक किया है यथा—

न्ह=न्हि—सखन्ह[1], लरिकन्ह[2], दसनन्ह[3], सरोजन्ह[4], सासुन्ह[5]।
जिन्हहि[6], तिन्हहि[7], परिजन्हि[8], कमलन्हि[9]।

सम्पूर्ण सामग्री मे केवल एक स्थल पर 'न्ह' पदादि में प्रयुक्त मिलता है—

न्हात खसै जनि बार गहरु जनि लायहु[10]।

म्ह— तुम्ह[11], तुम्हार[12], तुम्हारा[13], तुम्हारे[14], तुम्हारी[15], आदि।

उत्क्षिप्त— उत्क्षिप्त ध्वनियाँ 'ड' तथा 'ढ' दोनो ही क्रमश अल्पप्राण तथा महाप्राण हैं ये ध्वनिया केवल पदमध्य म ही मिलती हैं यथा—

ड — बड[16], बडाई[17], जड[18], गड[19], तडागा[20], बडप्पनु[21], नीड[22]।

ढ — चढाउब[23], चढावा[24], बढाई[25], बुढाई[26] दढ[27]।

सघर्षी— अवधी मे तालव्य 'श' के स्थान पर वर्त्स्य 'स' का प्रयोग मिलता है जो केवल अवधी की ही नही ब्रज की भी उल्लेखनीय विशेषता है। व्यक्तिवाचक सज्ञाओ तक म 'श' का परिवर्तन 'स' में हो गया है तथा कैलाश सुरेशहि, शिव, शभु, शकर, महेश क्रमश कैलास[28], सुरेसहि[29], सिव[30], समु[31], सकर[32], महेस[33] रूप मे लिखे गए हैं।

'ष' ध्वनि का विकास बडा मनोरजक है। अवधी मे इस ध्वनि के चार रूप प्रयुक्त मिलते हैं, यथा—

१—रा० उ० ११।४
२—रा० बा० ३६०।१३
३—रा० सु० ७।२
४—जा० म० ७२।१
५—रा० उ० ११।१७
६—पा० म० ७६।२
७—पा० म० ७६।२
८—रा० उ० २०।१०
९—आ० म० ५८।१
१०—आ० म० २९।२
११—रा० अर० १३।२
१२—रा० ल० १२।२२
१३—रा० बा० १५।५८
१४—जा० म० ९१।२
१५—रा० अर० १३।९
१६—रा० अयो० १२।१७
१७—रा० उ० १६।८
१८—रा० बा० ७।२३
१९—रा० उ० ५३।१६
२०—रा० उ० २३।१९
२१—रा० बा० १०।१६
२२—रा० बा० ३४६।१२
२३—जा० म० ७१।१
२४—रा० अर० १८।२६
२५—रा० अर० १३।१८
२६—रा० कि० १६।४
२७—रा० अर० १०।१४
२८—पा० म १४६।१
२९—पा० म० ९५।१
३०—पा० म० २८।२
३१—पा० म० २०।२
३२—पा० म० १६।४
३३—पा० म० ७२।१

(अ) लिखित रूप 'ष्' परन्तु उच्चरित रूप 'ख' है—

हसि कहि कृपासिंधु सब भाषा ।[1]

सोषहिं सिंधु सहित झष ब्याला[2] ।

एकउ हरिन न बर गुन दूषन[3] ।

(ब) लिखित रूप 'ष्' किन्तु उच्चरित रूप 'स्' है—

मानहु रोष तरंगिनि बाढ़ी[4] ।

हरषे आसिष पाइ[5] ।

उर बिसाल बष कंध सुभग भुज अतिबल[6] ।

सहष सेष महि कहि सकहिं[7] ।

रूपो निरावहिं धनुष बिमाना[8] ।

मानस में एक स्थल पर इसका पर्याप्त बहुत ही स्पष्ट प्रयोग मिलता है। जो इस बात का प्रमाण है कि तुलसी के रचना-काल में ष का उच्चारण 'ष' के रूप में भी अवश्य रहा होगा, यथा—जनु आन धनुमुरा जमुनवम[9] ।

(स) ष के लिए लिपि में 'स' प्रयुक्त हुआ है—का बरसा जब कृषि सुखानी[10] ।

(द) 'ष' के लिए ह का प्रयोग—यह केवल रामलला नहछू में भी एक स्थल पर हुआ है—

पुन्न पुहुप ।[11]

२ ० २ ध्वनियों का लिप्यन्तरण

संसार की कोई भी ऐसी भाषा नहीं है जिसमें न्यूनाधिक मात्रा में विभाषीय शब्द प्रयुक्त न हुए हों। अवधी में तत्सम अर्ध तत्सम तद्भव विदेशी प्रान्तीय उपभाषाओं तथा क्षेत्रीय बोलियों की शब्दावली का समावेश है जिसके कारण आलोच्य भाषा में रूप—वैभिन्नय के साथ साथ अनेक प्रकार के ध्वनि परिवर्तन भी दृष्टिगोचर होते हैं। परिवर्तन भाषा की सामान्य प्रवृत्ति है। तुलसी की अवधी प्रा० भा० आ० भा० से म० भा० आ० भा० से होती हुई इस रूप में प्राप्त है। इस लम्बे समय में शब्दगत ध्वनियों में अनेकानेक परिवर्तन हुए होंगे, जिनके मूल में लोप आगम, विपर्यय विषमीकरण, स्वरभक्ति, ह्रस्वीकरण एवं दीर्घीकरण अल्प तथा महाप्राणीकरण आदि हो सकते हैं।

1–रा० उ० ११७।१८ 2–रा० बा० ५५।११ 3–पा० म० ५३।१
4–रा० अयो० ३४।२ 5–रा० उ० ६।३२ 6–जा० म० ५३।१–
7–रा० उ० २६।१९ 8–रा० कि० १५।१५ 9–रा० बा० १००।१३
10–रा० अर० २३।७ 11–रा० ल० न० १६।३

ध्वनियो के लिप्य तरण म भिन्नता के चार कारण हो सकते है—
१-उच्चारण-वविध्य, २-मात्रापूर्ति, ३-लिपि मे आलेखन विकल्प, ४-लिपि-चि ह्नो का अभाव

(१) उच्चारण ववि‍ध्य हर सात आठ कोस पर भाषा मे कुछ न कुछ परिवतन हो जाना स्वाभाविक है जसा कि बोली भूगोल से भी स्पष्ट हो चुका है। आलोच्य भाषा एक विस्तृत क्षेत्र रही है, अतएव उसके क्षेत्रीय रूपा तर होना अति स्वाभाविक है। इन क्षेत्रीय रूपा तरो का प्रयोग हाने से ही आलोच्य भाषा मे उच्चारण ववि‍ध्य मिलता है जो एक ही श द के अनेकानेक ध्व यात्मक स्वरूपो से अति स्पष्ट है। ऐतिहासिक दष्टि से भी ध्व यात्मक परिवतन हो जाने के कारण उच्चारण-वैविध्य सभव रहता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—
राव[1]-राउ[2]-राय[3]-प्रभाव[4]-प्रभाउ[5]—पाँव[6]-पाँय[7]

सतिभाव[8]—सतिभाय[9], दैव[10] —दैउ[11]—दैइउ[12],—दैअ[13]—, सुभाव[14],—सुभाउ[15]—(सुभाऊ), सुभाय[16]—स्वभाइ[17] ठाव[18]—ठाउ[19]—(ठाऊँ), हृदय[20] —हिरदय[21], हृदउ[22],—हिय[23] समय[24]—समउ[25]—समो[26], गाय[27]—गाइ[28] (—गाई), यहाँ[29]—इहाँ[30] — बिबाह[31] — बिआह[32]- ब्याहु[33], पियास[34] — पिआस[35], द्वार[36] — दुआर[37] — स्वामी[38] — साई[39], नाम[40] — नाँउ[41], (— नाऊँ), ऋद्धि[42]-रिधि[43], परस्पर[44]—परसपर[45], सनेह[46] नेहा[47], लोचन[48]—लोयन[49],

---

१—रा० ल० न० १७।३	२—रा० बा० ३६०।९	३—जा० म० १५३।२
४—रा० बा० ३७।१७	५—रा० बा० १९।४	६—रा० उ० ८३।२
७—जा० म० २६।२	८—बरवै रा० २१।२	९—पा० म० १३।१
१०—बरवै रा० २१।१	११—रा० बा० २०।३	१२—जा० म० १०२।२
१३—रा० बा० २०।१८	१४—रा० अयो० १०।३	१५—रा० उ० १।१२
१६—जा० म० ३३।२	१७—जा० म० १४१।१	१८—रा० अयो० ९०।६
१९—रा० अर० १३।२९	२०—पा० म० १।२	२१—जा० म० ८५।२
२२—रा० अयो० ३२।९	२३—जा० म० छ० २।४	२४—रा० अ० ४३।
२५—रा० अयो० ४०।७	२६—जा० म० १०।१	२७—रा० अयो० २३।१७
२८—रा० अर० २९।१६	२९—बरवै रा० ११।२	३०—रा० अर० २३।१६
३१—पा० म० ७।१	३२ पा० म० १०७।२	३३—जा० म० ५८।१
३४—पा० म० ३७।१	३५—रा० बा० २२।१४	३६—रा० बा० ३६४।८
३७—रा० कि० ४९।१६	३८—रा० अयो० २४।११	३९—रा० उ० १२।१६
४०—बरवै रा० ५०।१	४१—रा० कि० ६।३	४२—रा० कि० न० २०।४
४३—पा० म० ८।२	४४—जा० म० ८५।१	४५—रा० बा० २०।२
४६—बरवै रा० ६९।२	४७—पा० म० २९।१	४८—जा० म० ६२।१
४९—जा० म० ७।१		

जन्म'-जनम' मान्'-अन्' उतर'-उतर' सत्य'-सांत'-सांच', धर्म'-धरम'' प्रेम''-पेम'' जीभ''-जीह'' त्रिय''-तिय' मंडप''-मंडव'' जीव'-जिव'' जीवन''-जियन'', श्यामल''-सांवर''-सांवरी'', वन्ध्या''-बांझ'' सनमुख''-समह' प्रभूति''-भूति'', गुप्त''-गुपत'' और''-ओर''-अउर' मूल''-मूरि'', नयन'-नैन', सोहावन'', सोहावनो' खप्पर''-खप्पर''-खपर' वृद्ध -बूढ़'-बूढ़ा'' स्नान' (-न्हान)-अस्नान'' पञ्छ''-पाख''

(७) मात्रा पूर्ति—

छन्दानुरोध के कारण ध्वनि-परिवर्तन—आलोच्य भाषा में छन्दानुरोध से जहाँ मात्रापूर्ति की समस्या उठी है वहाँ निम्न प्रक्रियाओं से ध्वनि-परिवर्तन कर लिए गए हैं।

(अ) ह्रस्वीकरण—

नारी—नारि' नीरस—निरस''

१—जा० म० ५६।२ २—बरवै रा० ६८।२ ३—आ०म० ११०।२
४—जा० म० ५५।२ ५—जा० म० छं० ३।१ ६—रा० अयो० १३।६
७—जा० म० २४।२ ८—रा० अयो० २६।१२ ९—बरव रा० २४।१
१०—जा० म० २३।२ ११—रा० अयो० ३२४।८ १२—बरवै रा० ६४।२
१३—रा० अयो० ३२६।२९ १४—बरव रा० २७/२ १५—रा० बा० २२।१
१६—रा० ल० ३३।९ १७—रा० अयो० २५।५ १८—जा० म० १३।२
१९—रा० ल० न० ३।४ २०—रा० बा० २७।२ २१—रा० कि० १४।१६
२२—रा० अयो० २१।४ २३—पा० म० १८।२ २४—रा० कि० १।१३
२५—रा० ल० न० १२।१ २६—जा म० छं० ७।२ २७—रा० उ० १२२।३०
२८—रा० अयो० ७५।३ २९—रा० अयो० ३२६।२६ ३०—रा० अयो० ९९।५
३१—रा० अयो० १[illegible]।१२ ३२—रा० बा० १४।१७ ३३—रा० उ० ११३।२१
३४—रा० बा० १।१६ ३५—रा० अयो० ७७।१७ ३६—रा० अयो० ७७।१८
३७—रा० अयो० १००।१४ ३८—रा० अयो० ३४।७ ३९—रा० अयो० ३१८।१८
४०—रा० अयो० २७।१६ ४१—बरव रा० १९।१ ४२—जा० म० छं० ८।३
४३—रा० बा० ३१६।५ ४४—रा० सु० ३५।३५ ४५—रा० उ० ८८।१३
४६—पा० म० ९९।१ ४७—रा० उ० ३०।१७ ४८—रा० कि० २८।२८
४९—रा० ल० २३।७ ५०—जा० म० २९।२ ५१—रा० उ० २९।४
५२— ५३—रा० अयो० १९।५ ५४—बरव रा० १७।१
५५—रा० कि० १०।१३

बीच—बिच[1] नीचहि—निचहिं[2]
आशीर्वाद—आसिरबाद[3] ।

(आ) द्वित्व व्यंजन का क्षतिपूर्ति रहित सरलीकरण
चित्त—चित[4], उत्तर—उतर[5]
चरित्र—चरित[6] विपत्ति—विपति[7] ।

(इ) अनुस्वार का अनुनासिकीकरण
कथा काथ[8] अब—आब[9]
आनंद—आनँद[10] ।

(ई) दीर्घीकरण —यह प्रवृत्ति अधिकांशत: चरण के अंतिम पद के अन्त्य स्वर में प्राप्त है —

बिसाल बिसाला[11] मृणाल मृनाला[12] करतूति करतूती[13] राव राउ राऊ[14] ।

(३) लिपि में आलेखन-विकल्प—आलोच्य भाषा में निम्नलिखित वैकल्पिक रूप प्राप्त हैं जिन्हें आलेखन सुविधार्थ यथास्थान अपनाया गया है —

(अ) यत्र तत्र ऐ का अइ रूप में भी लिखा गया है जैसे—
ऐ > अइ मैत्री > मइत्री[15] मिट > मिटइ[16] पैंज > पइंज[17]
पूजै > पूजइ[18] दैव > दइव[19] ऐसे अइसेउ[20] ।

(आ) संयुक्त स्वर ऐ 'अय' रूप में भी आलिखित मिलता है —
ऐ > अय बदेही > बयदेही[21] मत्री > मयत्री[22] बैर > बयर[23] ।

(इ) संयुक्त स्वर औ का अउ रूप में आलेखन —
औ>अउ बिस्मौ>बिसमउ[24] और>अउर[25] औधि>अउधि[26]

(ई) अनुनासिकता में चंद्रबिंदु और अनुस्वार दोनों का प्रयोग लगभग समान रूप से ही हुआ है —

चंद्रबिंदु द्वारा व्यक्त अनुनासिकता कहीं कहीं अकारण प्रयुक्त हुई है यथा—

---

१ रा० अर० ७।६ —रा० बा० ५।५० —रा० बा० ५२।४
४—रा० अयो० ११।२० । जा० म० ४।२ ६ । र० ११७
७—रा० सु० १२।२ ८ पा० म० ५२।१ ९—पा० म० ६४।२
१० जा० म० ९२०।२ ११—रा० बा० २६।२० १२ रा० बा० २६।१९
१३—रा० अयो० ९।१० १४—रा० बा० ३६।१३ । १५ रा० उ० ५।२
१६—जा० म० १९।१ १७—जा० म० ०। १८—पा० म० ३६।५
१९—जा० म० १०२।२ २०—रा० उ० ८।२ २१—रा० अर० ।।११
२२—रा० कि० ४।५ २३—रा० बा० २ २४—रा० अ० ? ।८
२५ रा० अयो० ५००।१४ २६—रा० सु० ३८।१२ ।

हृदय' सुमित्रा' कृपा', हिय , समा,' जिय', सुभाये", राय' ।

यही वही अनुस्वार द्वारा अनुनासिकता का द्योतन किया गया है यथा—
जाव' गाय', मट'', गाढ़ो'', मल्हाइ'' सही' ।

(उ) संयुक्त व्यंजनों में आगत नासिक्य व्यंजनों ङ ञ्, ण्, न् तथा म् को अनुस्वार द्वारा प्रदर्शित किया गया है, यथा—

ङ—अंग'' रंग'', प्रसंग'', संकट'' ।
ञ्—कंज'', प्रपंचु', पंचानन'', पंच,'' पंचवटी'',
ण्—दंड' ब्रह्मांड'', पाखंड'', दसकंठ'', कंठ'' ।
न—भगवंत'' दुंदभी', अनंत'' सिंधु'' सुन्दर'', ।
म्- जम्बुक' , गम्भीर'', संभु'' सम्पति' , दम्पति'', सम्पदा'' ।

(४) लिपि-चिह्नों का अभाव—

(अ) आधुनिक अवधी के कथ्य रूप का विश्लेषण करने के बाद भाषाविदों (यथा—डा० बाबूराम सक्सेना आदि) द्वारा फुसफुसाहट वाले स्वर (इ, उ ए), उदासीन स्वर अ तथा कुछ स्वरों के ह्रस्व रूप यथा—ए ओ) स्पष्ट किए जा चुके हैं। तुलसी की अवधी में फुसफुसाहट वाले स्वर (इ उ, ए) तथा उदासीन स्वर (अ) और ह्रस्व (ए), (ओ) के आलेखन के लिए कोई पृथक लिपि चिह्न न होने के कारण इन्हें इ उ, ए अ ए तथा ओ वर्णों द्वारा ही व्यक्त किया गया है। इनके अस्तित्व का ज्ञान मात्रा-गणना तथा लयात्मक उच्चारण से होता है। आधुनिक अवधी में प्राप्त उपर्युक्त प्रकार के स्वरों के आधार पर भी तुलसी की अवधी में इनके अस्तित्व को स्वीकार करने में कुछ सहायता मिलती है। इसके सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा विषय क्रम (२ २ १) में की गई है।

१—रा० अयो० १०।८ २—रा० अयो० ८।५, ३—रा० उ० ८।१२, ४—रा० अयो० ३२०।१५ ५—रा० लं० ३९।१९ ६—रा० अयो० ३३।५ ७—रा० अयो० १५।१० ८—रा० अयो० ३०।१८ ९—रा० अयो० ४२।१९, १०—रा० अयो० २११।२ ११—रा० अयो० ७।१२ १२—रा० बा० ७।२०, १३—रा० बा० ७।४, १४—जा० म० ११।२ १५—बरव रा० १।११ १६—बरव रा० १३।१ १७—पा० म० ७८।१ १८—पा० म० छं० ८।४, १९—रा० उ० ३०।८ २०—रा० बा० ६।८ २१—रा० उ० १९।१८ २२—जा० म० ७०।१ २३—रा० अर० १३।३० २४—रा० बा० ८५।२३, २५—रा० बा० ८५।२३ २६—रा० अर० २०।२२ २७—रा० उ० २०।१ २८—जा० म० ५३।२। २९—बरव रा० ४२।२ ३०—रा० उ० १२।१६ ३१—बरव रा० ४२।१ ३२—रा० उ० २।४० ३३—पा० म० ६७।१, ३४—रा० अर० २०।२६ ३५—रा० उ० २८।२६ ३६—पा० म० २०।२ ३७—पा० म० १८।२ ३८—पा० म० १८।१, ३९—रा० उ० ११८।११।

(ब) विदेशी (अरबी फारसी) व्यजन ध्वनियो म परिवतन--क, ख, ग, ज, तथा फ क्रमश क, ख् ग, ज् तथा फ मे परिवर्तित हो गई हैं, यथा —

क	क	कागज	कागद[1]
ख्	ख्	बन्दीखान	बन्दीखाना[2]
ग	ग	गरीब, गुमान	गरीब[3],गुमान[4]
ज	ज	बजाज	बजाज[5]
		जहान, हजार	जहान,[6] हजार[7]
		बाज	बाज[8]
फ	फ	सर्राफ,तलफ्त	सर्राफ[9] तलफत[10]

इसी प्रकार अरबी – फारसी शब्दो मे प्रयुक्त होने वाले विशिष्ट स्वर भी अवधी के अनुरूप ही परिवर्तित हो गये हैं।

२ ३ ध्वनिग्राम-स्वर तथा व्यजन और अर्ध-स्वर

२ ३ १ स्वर-ध्वनिग्राम

तुलसी की अवधी रचनाओ में प्राप्त दस स्वर ध्वनियाँ इस प्रकार हैं– अ, आ इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ ओ, औ। इन्हे निम्न प्रकार से व्यवस्थित किया जा सकता है।

१-मूल——

(क) ह्रस्व– अ, इ, उ

(ख) दीर्घ– आ, ई, ऊ, ऐ, ओ

२-सयुक्त स्वर-ए (अइ) , औ (अउ)

स्वरो के अन्तगत 'अ तथा 'आ' को ह्रस्व और दीर्घ कहकर अभिहित किया जाता है।[11] किन्तु इन्हे एक ही ध्वनिग्राम के सस्वन मान लेना ही अवज्ञानिक एव भ्रमपूर्ण होगा। 'आ' तथा' आ' म उच्चारण-स्थान-भेद के साथ-साथ मात्रा भेद भी है। यही स्थिति इ, ई, उ, ऊ, के विषय मे है। इन स्वरो के लिपि—चिन्हो की चर्चा विषय-क्रम (२ २) म की जा चुकी है।

१–रा० बा० ९।१२ २–रा० ल० ९०।८ ३–रा० बा० २४।३
४–रा० ल० न० १३।४ ५–रा० उ० २८।२१ ६–रा० बा० ३।८
७–रा० ल० न० १६।४ ८–रा० अर० ११।२ ९–रा० उ २८।२१
१०–रा० मु २८।१० ११–डा० उदयनारायण तिवारी भाषाशास्त्र की रूपरेखा पृ० २६० ।

यहाँ उक्त ध्वनिग्रामीय स्वरूप के निर्णय के लिए परिरम्भ एवं व्यतिरकी स्थितियों पर विचार करेंगे—

। अ । —शब्द की तीनों स्थितियों में उपलब्ध है यथा—
अनुराग[1] अपारा निकट[2] कमठ अमिअ[3] परिअ[4]

। आ ।—यह भी शब्द की तीनों स्थितियों में मिलता है यथा—
आनन आश्रम[5] राम[6] भाग[7] महा[8] सोमा[9]

(अ) तथा (आ) के मध्य व्यतिरकी स्थितियाँ—

। अ । — सत[10] (समझा), मइ[11] (क्रिया) वस[12] (वस में)

। आ । — सात[13] (सात) माइ[14] (माई) वास[15] (निवास)

। इ । — यह शब्द की तीनों स्थितियों में प्राप्त होती, यथा —
इत[16] ध्व[17] इव[18] परिछन[19] चरित[20] निसि,[21] विरचि[22]

। ई । — यह भी शब्द की तीनों स्थितियों में सुलभ है यथा —
ईस[23] ईसना[24] असीस[25] समीत[26] मई[27] गई[28]

(इ) तथा (ई) के मध्य व्यतिरकी स्थितियाँ—

(इ) सँवारि[29] [सम्हालकर] (ई) सवारी[30] [सवारी]

(उ)—यह शब्द की तीनों स्थितियों में प्रयुक्त हुआ है—यथा—
उर[31] उमा[32] मगुन[33] धनुप[34] बहुत[35] बहु[36]

१—पा० म० ३३।२	२—रा० उ० १।१	३—पा० म० ९७।१
४—पा० म० ९९।१	५—रा० बा० २।२	६—रा० बा० १३।७
७—रा० लं० १५।११	८—रा० अर० ३०।६	९—रा० बा० ३५५।२०
१०—रा० अयो० ७।८	११—पा० म० ६।२	१२—रा० अयो० १४।७
१३—रा० अर० २।१३	१४—बरव रा० २०।१	१५—बरवै रा० ३४।२
१६—रा० अयो० ८०।२	१७—रा० अर० १५।१०	१८ रा० अर० १३।७
१९—रा० बरव ३८।२	२०—रा० बा० ४१।३	२१—बरव रा० ८।२
२२—जा म० २३।४	२३—रा० बा० ३।१९	२४—रा० लं० १२।६
२५—रा० लं० १६।६८	२६—रा० लं १९२।२०	२७—रा० उ० १२१।७२
२८—रा० अयो० ७।६	२९—रा० लं० १०।१८	३०—जा० म० २४।१
३१—पा० म० २९।१	३२—रा० बा० ३८४।१८	३३—पा० म० ५७।१
३४—रा० अयो० १।२१	३५—रा० बा० १।१४	३६—रा० कि० २६।२६
३७—रा० कि० १८।१६	३८—रा० लं० १०७।१६	३९—रा० लं० १०७।७

(ऊ)—यह भी तीनो स्थितिया म मिलता है, यथा—

ऊना[1], ऊमर[2] भूप[3], कूप[4] आयऊ,[5] भयऊ[6]

(उ) तथा (ऊ) के मध्य व्यतिरेकी स्थितियाँ—

(उ) पुर[7] [ग्राम] (ऊ) पूर[8] [पूर्ण]

(ए)—इस स्वर का प्रयाग भी शब्द की तीना स्थितियो म हुआ है। यथा—

एहि[9] एक[10] किएहु,[11] पठएसि[12] हारे,[13] मारे[14]

(ऐ) यह भी तीनो स्थितिया मे प्राप्त होता है, यथा—

ऐहैं,[15] ऐसे[16] दैव[17] बढ[18] जौनै[19], लै[20]

(ए) तथा (ऐ) के मध्य व्यतिरेकी स्थितियाँ—

(ए)—बद[21], [वद] (ऐ) बद[22] [वैद्य]

(ओ)—यह शब्द की तीना स्थितियो मे सुलभ है यथा—

ओरा[23], ओहार[24] घमोई[25] वियोग[26] सो[27], को[28]

(औ)—यह भी तीनो स्थितिया म ही प्रयुक्त है, यथा—

औरउ,[29] औषध[30] फौज[31] सौमित्र[32] जिऔ[33], आनौ[34]

(ओ) तथा (औ) के मध्य व्यतिरेकी स्थितिया—

(ओ)[35] ओर [तरफ] (औ)[36] और [अन्य]

(ऐ) तथा (औ) का क्रमश अइ तथा अउ के रूप म (उच्चारणानुसार) भी प्रयोग मिलता है,

---

१ रा० सु० १४।१९	२ रा० सु० ५८/८	३ रा० अयो० ३८।१
४ बरवै रा० ६।१	५-आ० म० छ० १०।३	६ रा० ल० १६।१६
७-आ० म० ८९।१	८ रा० ल० ३७।१८	९-पा० म० ७४।१
१० रा० ल० ९७।६	११ रा० बा० ७।१३	१२ रा० सु० १९।२
१३ रा० सु० १८।८	१४ रा० अयो० ६२।१२	१५ पा० म० छ ७।१
१६ रा० ल० ९।१६	१७ रा० सु० ५१।२	१८ रा० बा० ५८।१४
१९ रा० सु० ५४।८	२० रा० बा० ९६।१	२१ रा० बा० ६।७
२२ रा० ल० ५५।१३	२३ रा० कि० २२।१२	२४ रा० बा० ३४८।१५
२५ रा० ल० १०।१६	२६ रा० अयो० ३१८।३	२७ रा० अयो० ३२२।६
२८ रा० अयो० ३२६।१८	२९ रा० बा० ३०।१५	३० रा० अयो० ६।३
३१ रा० ल० ७९।२४	३२ रा० बा० १७।१६	३३ रा० अयो० ३६।१३
३४ रा० कि० १८।४	३५ रा० सु० ९।१०	३६ रा० अयो० ८७।१८

यथा—

(ए)— एस[1] एहैं[2]

(अइ)— अइसेउ[3] अइसेहु[4]

इसी प्रकार (ओ) का प्रयोग अउ के रूप में—

(ओ)—ओरउ[5] [अन्य]

(अउ)—अउर[6] [अन्य], पउधि[7] [पौधा]

अतएव ए तथा अइ और ओ एवं अउ के मध्य किसी प्रकार का व्यतिरेकी स्थिति नहीं है। अतः दो (ए तथा ओ) ही ध्वनिग्राम हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि (ए) और (ओ) संयुक्त स्वर हैं।

अतएव स्वरों के परिवर्तन—आदि, मध्य, अन्त तथा व्यतिरेक दिखाने वाले युग्मों से स्पष्ट है कि अवधी में दस स्वर ध्वनिग्राम हैं (अ) (आ) (इ) (ई) (उ) (ऊ) (ए) (ए), (ओ) तथा (औ)।

अनुनासिकता —

अनुनासिकता स्वरों का अवरूप (सहायक रूप) मानी गयी है। इसके उच्चारणकाल में वायु अन्तः मुख में और अन्तः नासिका रन्ध्र से बाहर निकलती है। नासिक्य ध्वनियाँ (व्यंजन) स्वरों से अलग सुनी जा सकती हैं, परन्तु अनुनासिकता का स्वरों से अलग सुनना असम्भव है। अतः नासिका से सम्बन्धित भाषा में ध्वनियों के दो प्रकार हैं—(१) अनुनासिकता—इसके लिए लिपि में [ ] चिह्न है यथा—आऊँ[8] पाँव[9] छाँह[10] माँड़[11], चाँद[11] सैंता[11] सबों[1] दूगों[11] सुमित्रौं[11] सीतौं[1] आदि।

(२) अनुस्वार—स्वरों के बाद उच्चरित होने वाला नासिक्य तत्त्व है। जो लिपि में स्वरों के ऊपर बिन्दु ( ) लगाकर अंकित किया जाता है। यह प्राय ह्रस्व स्वरों के पश्चात आता है। यद्यपि तुलसी की अवधी रचनाओं में एस शब्द अत्यन्त कम मात्रा में प्राप्त हैं। पद्य में प्राप्त परवर्ती व्यंजनों के साथ मिलकर यह तत्वर्गीय नासिक्य व्यंजन—रूप में उच्चरित होता है इसके लिए लिपि चिह्न ( ) है

१ रा० ल० १६।९ २-पा० म० छ० ७।१ ३ रा० ल० ४।११
४ रा० ल० २।४ ५ रा० उ० ४३।१९ ६ रा० कि० ६।१७
७ रा० सु० ३८।२५ ८-पा० म० ६४।२ ९ पा० म० ११५।२
१ -बरव रा० ६६।१ ११-बरव रा० ६६।२ १२-बरव रा० १७।२
१३ रा० सु० ५३।३ १४ रा० ल० १६।२० १५ रा० सु० ५५।१
१६ रा० अया० ८।५ १७ रा० उ० २५।११

यथा —

कंठ्य—मगल[1], म ग[2], सग[3], कुविहग, रसमग[5], सकट[6]।

तालव्य—पच[7], पचवटी[8], विरचि[9], कज[10] आदि।

मूर्धन्य—दडक[11], घमड[12], श्रीगड[13], मुड[14], कुडल[15] आदि।

वर्त्स्य—सत[16], पथ[17], बध[18], कदमूल[19], आदि।

द्वयोष्ठ्य—खभा[20], कुभ[21], सपनि[22], आदि।

नि सन्देह अनुनासिकता स्वरो का अपरूप (सशोधित रूप) होने के कारण स्वरो के अति निकट है जबकि अनुस्वार का उच्चारण व्यजनवत होने के कारण व्यजन के अधिक समीप है। अनुस्वार ( ) व्यजनो के पूर्व उनके स्थान प्रयत्नानुसार अनुकूल बन कर प्रयुक्त होता है। भाषा म इन दोनो का अपना अलग-अलग महत्व है। अनुस्वार वर्णमाला म नासिक्य वर्णों के स्थान पर प्रयुक्त होकर भाषा की जटिलता कम करता है और स्वरालेखन म सहायक होता है। आवृत्ति (,Erequency) के आधार पर वर्त्स्य नासिक्य 'न' के सस्वन रूप म प्रयुक्त होकर भाषा म अनकानेक नासिक्य व्यजन ध्वनियो को स्पष्ट करता है। अनुनासिकता अभिधार्थ एव व्याकरणिक अथ म अन्तर लाती है, अतएव महत्वपूण है, उदाहरणार्थ—

आलोच्य भाषा म अनुनासिकता एव अनुस्वार के मध्य व्यतिरेकी स्थितियाँ—

अनुनासिकता (ँ) हँस[23]=(हँसना)

अनुस्वार ( ) हस[24]=(पक्षी)

निरनुनासिक तथा अननासिक के मध्य व्यतिरेकी स्थितियाँ—

निरनुनासिक—साप[25]=शाप, अनुनासिक—साँप[26]=सप।

इसके अतिरिक्त अनुनासिकता व्याकरणिक अर्थों को भी अभिव्यक्त करती है, उदाहरणार्थ —

१-रा० बा० ३४६।३ २-रा० अर० ७।१८ ३-रा० अयो० २८।१६
४-रा० उ० १३।२४ ५-रा० [illegible] ० १५।२१ ६-रा० अर० २९।४३
७-जा० म० ७०।१ ८-रा० अर० १३।३६ ९-रा० ला० ३५५।१०
१०-रा० बा० १।१७ ११-रा० कि० १४।१ १२-रा० उ० ३७।१८
१३-रा० अर० २०।२३ १४-बरव रा० २।१ १५-रा० अर० १२।१२
१६-रा० कि० १६।८ १७-रा० कि० ५।७ १८-रा० अर० १५।१०
१९-रा० सु० १।४ २०-रा० कि० १।३ २१-रा० उ० १२।३
२२-रा० कि० ७।३१ २३-रा० अयो० १३।१३ २४-रा० बा० ३४।१८
२५-रा० अयो० १३।१६ २६-रा० कि० ६।२५

है[1]=सहायक क्रिया एक वचन में । हैं[2]=सहायक क्रिया बहुवचन में ।

सखी[3]=एक वचन में । सखीं[4]=बहुवचन में ।

अतः स्पष्ट है कि अनुनासिकता ( ) भाषा का स्वतन्त्र ध्वनिग्राम है । परिस्थिति जन्य भेद से स्वरों के उपरूप इनका विवेचन इस प्रकार है—

(अ) नासिक्य व्यंजनों के पूर्व प्रयुक्त स्वर कुछ अनुनासिक हो जाते हैं जो अपूर्ण और अनुनासिक कहे जाते हैं यथा—

नाम =नाँम, राम[5]=राँम

काम =काँम प्रान[6]=प्राँन—प्राण ।

यदि वर्तमान अवधी की उच्चारण प्रवृत्ति को ध्यान में रखकर विचार किया जाये तो आगे इस प्रकार के निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—

(अ) अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में जिह्वा की स्थिति लगभग निरनुनासिक स्वरों के समान ही होती है केवल अध विवृत स्वर अपेक्षाकृत कुछ विवृत्त हो जाते हैं यथा—

जाँव[7] सोच[8] भेंट[9] ।

(ब) अध विवृत मध्य स्वर अ 'ह' के पूर्व अधिक अग्रीकृत होकर उच्चरित होता है यथा—

सह[10] कह[11] चह[12] ।

(ग) कंठ्य व्यंजनों के परवर्ती अग्रस्वर कुछ पश्चवर्ती होकर उच्चरित होते हैं जैसे—

गिर[13] घर[14] कीन[15] ।

(घ) पर संयुक्त व्यंजन होने से पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर कुछ ह्रस्व हो जाते हैं यथा—

देख्यो[16] तोरयो[17] पज्यो[18] मोच्छ[19] ।

(ङ) मूर्धन्य व्यंजनों के मध्य आगत पश्चस्वर कुछ आगे से उच्चरित होते हैं,

---

१–रा० बा० ३१०।६ २–रा० लं० ६३।८ ३–पा० मं० १०९।१
४–जा० मं० १४६।२ ५–रा० कि० १०।७ ६–बरवै रा० ८०।१
७–बरवै रा० ७।२ ८–रा० अयो० ३१६।१० ९–रा० बा० ५।१०
१०–रा० अर ११ ३ ११–रा० अयो० ८७।६ १२–रा० कि० १४।८
१३–बरवै रा० ५१।२ १४–रा० उ० ७।१८ १५–रा० लं० १९।१२
१६–रा० लं० ३।२० १७–बरवै रा० १८।१ १८–रा० लं० ९३।६
१९–रा० उ० ७०।३ २०–रा० उ० ११०।११ २१–रा० बा० १४।२२

यथा —
टाट[1], ठाढ[2] ।

(च) 'ह' से पूव प्रयुक्त स्वरो की मात्रा कुछ ह्रस्व हो जाती है । यथा —
छाँह[3], देह[4], गेह[5], सनेह[6], सुबाहु, सोह[7], मोह[8] ।

२ ३ २ व्यजन ध्वनिग्राम

आलोच्य भाषा में प्राप्त व्यजन-ध्वनियो को निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है
व्यजन[1] —

नोट —तालिका के लिए कृपया पृष्ठ सख्या ५८ देखें ।

तुलसी की अवधी मे ञ, ण, ङ नासिक्य व्यजन ध्वनिया 'न' के अन्तगत आती हैं। ये ध्वनिया अपने मूल रूप म सुरक्षित नही रही हैं, 'ण' तथा ण व्यजन ध्वनियाँ केवल तत्सम शब्दो म ही प्रयुक्त हुई हैं।

आलोच्य भाषा म प्राप्त समस्त व्यजन ध्वनियो की व्यतिरेकी स्थिति एव उनके परिवेश शब्द के आदि मध्य और अन्त को स्पष्ट करते हुए उनका ध्वनि ग्रामीय विश्लेषण किया जा रहा है —

(१) कठ्य—
क=कठ्य स्पश, अघोष, अल्पप्राण ।
ख=कठ्य, स्पर्श अघोष, महाप्राण ।
ग=कठ्य स्पर्श सघोष, अल्पप्राण ।
घ=कठ्य, स्पश सघोष महाप्राण ।

प्रयोग स्थिति—
क—काम[1] मकर[12] सोक[13]

१–रा० बा० १४।२२ २–रा० बा० २६०।१० ३–उत्त रा० १८।१
४–रा० अयो० ७०।१२ ५–रा० अयो० ७०।१२ ६–रा० अयो ६९।८
७–जा० म० ७८।२ ८–बरव रा० ५०।२ ९–बरव रा० १८।२
१०–डा० बाबूराम सक्सेना इवोल्यूशन आव अवधी पष्ठ सख्या २८—२९
११–रा० अर० १६।२३ १२–रा० बा० ५५।४ १३–रा० अर० १८।२०

		द्वयोष्ठ्य	दन्त्य	वर्त्स्य	तालव्य	मूर्धन्य	कण्ठ्य	स्वर यन्त्र मुखी
स्पर्श	अल्प प्राण	प ब्	त् द्		च् ज्	ट ड	क ग्	
	महा प्राण	फ भ	थ् ध		छ् झ्	ठ् ढ्	ख् घ्	
नासिक्य	अल्प प्राण	म्		न्	ञ	ण्	ङ	
	महा प्राण	म्ह्		न्ह				
पार्श्विक	अल्प प्राण			ल				
	महा प्राण							
लुण्ठित	अल्प प्राण			र				
	महा प्राण							
उत्क्षिप्त	अल्प प्राण					ड़		
	महा प्राण					ढ़		
संघर्षी				स्	श्	ष्		ह
अर्ध स्वर		व्			य्			

ख—खर,[1] सिखर,[2] सुख[3]
ग्—गगन[4] नगर[5] जग[6]
घ्—घटा[7] गोघात[8] मघा[9]

व्यतिरेकी स्थितियों द्वारा ध्वनि ग्रामीय मूल्यांकन—

क—काल[10]	=	मृत्यु
ख—खाल[11]	=	त्वचा
ग्=गाल[12]	=	गाल
घ्=घाल[13]	=	मारना

(२) तालव्य—

च=तालव्य, स्पर्श, अघोष, अल्पप्राण।
छ=तालव्य, स्पर्श, अघोष, महाप्राण।
ज=तालव्य, स्पर्श, सघोष, अल्पप्राण।
झ=तालव्य, स्पर्श, सघोष, महाप्राण।

। च ।	चाप[14]	वचन[15],	सींच[16]
। छ ।	छल[17]	लछिमन[18],	मुरछा[19]
। ज ।	जीव[20]	भजन[21],	रज[22]
। झ ।			माझ[23]

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

। च् ।	चल[24]	=	चलना
। छ ।	छल[25]	=	छल
। ज ।	जल[26]	=	पानी
। झ् ।	झल[27]	=	वस्त्र

---

१ रा० क० २६।५ — २ रा० ल० ३९।१४ — ३ रा० अर० १४।९
४ रा० ल० ८४।१४ — ५ रा० उ० २५।७ — ६ रा० ल० २४।२३
७ रा० ल० ३९।१९ — ८ रा० ल० ३२।४ — ९ रा० ल० ७३।६
१० रा० ल० ६८।४ — ११ पा० म० ९९।१ — १२ रा० ल० २७।५
१३ रा० ल० ७०।१२ — १४ रा० अयो० ९०।८ — १५ रा० अर० १४।११
१६ पा० म० छ० ८।३ — १७ रा० बा० ८।६ — १८ रा० ल० ८४।७
१९ रा० ल० ८४।५ — २० रा० अर० १३।३ — २१ रा० अर० १६।१०
२२ रा० अर० १४।१४ — २३ रा० ल० ३७।५ — २४ रा० बा० १२।३
२५ रा० सु० ३।७ — २६ रा० उ० ७।६ — २७ रा० उ० ७७।१३

(३) मूर्धन्य—

ट	=	मूर्धन्य	स्पर्श	अघोष	अल्पप्राण ।
ठ	=	मूर्धन्य	स्पर्श	अघोष	महाप्राण ।
ड	=	मूर्धन्य	स्पर्श,	सघोष	अल्पप्राण ।
ढ	=	मूर्धन्य	स्पर्श	सघोष	महाप्राण ।

प्रयोग—स्थिति—

। ट ।	टीका[1]	कटक[2]	पट[3]
। ठ ।	ठाउ	पठन[4]	पीठ[5]
। ड ।	डीठ	दडकं[6]	भुसुंड[7]
। ढ ।	ढिठाइ[8]	—	

एक से ही ध्वन्यात्मक वातावरण मे व्यतिरेकी स्थिति मे उपयुक्त मूर्धन्य व्यंजनो की उपलब्धि नही हो सकी लेकिन फिर भी प्रयोग स्थिति से भाषा मे उनकी महत्ता स्वयं सिद्ध है।

(४) दन्त्य —

त	=	दन्त्य	स्पर्श	अघोष	अल्पप्राण ।
थ	=	दन्त्य	स्पर्श	अघोष	महाप्राण ।
द	=	दन्त्य	स्पर्श	सघोष	अल्पप्राण ।
ध	=	दन्त्य	स्पर्श	सघोष	महाप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

। त ।	तन[11]	प्रताप[11]	तात[11]
। थ् ।	थिर[1]	मथन[11]	नाथ[11]
। द ।	दास[1]	वदन[11],	पद[11]
। ध् ।	धर्म[1]	दसकधर[11]	जोधा[11]

१— रा०लं० ३८।११ २— रा०लं० ३९।२ ३— रा०लं० ११७।१०
४— रा०अर० १३।३० ५— रा०लं० ५९।१२ ६— रा०अयो० ९८।२
७— रा०अयो० ९८।१ ८— रा०उर० १३।३१ ९— रा०उ० ६८।१३
१०— रा०लं० ४०।३ ११— रा०अयो० ९०।११ १२— रा०लं० ७६।२३
३— रा०अयो० ९५।१६ १४— जा०म० ८५।२ १५— रा०लं० २८।५
६— रा०उ० ८५।२३ १७— रा०अयो० ९१।८ १८— रा०कि० ३१।१४
९— रा०अयो० ९८।२ २०— रा०कि० ३८।२१ २१— रा०लं० ३२।१९
२— रा०कि० ४३।१०

व्यतिरेकी स्थितियाँ —

| त | तन[1] = शरीर

| थ् | थन[2] = स्तन

| द् | दर[3] = द्वार

| ध् धन[4] = द्रव्य

(५) द्वयोष्ठ्य—

प=द्वयोष्ठ्य, स्पर्श, अघोष, अल्पप्राण ।

फ=द्वयोष्ठ्य, स्पर्श, अघोष, महाप्राण ।

ब=द्वयोष्ठ्य, स्पर्श, सघोष, अल्पप्राण ।

भ=द्वयोष्ठ्य, स्पर्श, सघोष, महाप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

प्—पट[5], उपल[6], साप[7], फ्—फल[8], नफीर[9],

ब्—बन[10], प्रबसि[11], बितव[12], भ्—भवन[13], सुभट[14], प्रभा[15] ।

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

प्—पल[16], फ्—फल[17] ब—बल[18], भ—भल[19] ।

(६) नासिक्य व्यंजन—

न्—वर्त्स्य, नासिक्य, सघोष, अल्पप्राण ।

म्—द्वयोष्ठ्य, नासिक्य, सघोष, अल्पप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

म्—मग,[20] कमल[21], सम[22] ।

न्—नयन[23], बानर[24], बसन[25] ।

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

म—मान[26] = मान ।

म्—काम[27] = काम ।

१—रा० ल० १२०।२९ २—रा० उ० ६।२१, ३—रा० ल० ११५।११ ४—रा० कि० १४।१० ५—रा० अयो० ९०।१४, ६—रा० ल० २६।१४ ७—रा० ल० ५८।१, ८—रा० ल० ३३।१२ ९—रा० ल० ६९।१७ १०—रा० अयो० ५८।१३ ११—रा० लं० ८३।१२ १२—रा० सु० १३।३ १३—रा० बा० ५७।६ १४—रा० ल० ४२।१८ १५—रा० अयो० ९७।११ १६—रा० ल० ८१।३ १७—रा० अयो० ३।१९ १८—बरवै रा० ६८।१ १९—रा० अयो० ५।११ २०—रा० बा० ८५।१२ २१—रा० अर० १६।२८ २२—रा० अर० १५।१६ २३—रा० बा० ३१०।१६ २४—रा० ल० ३३।१४ २५—रा० अयो० ९१।६ २६—रा० अयो० ९९।७ २७—रा० अर० १६।२६

न्ह तथा म्ह क्रमश: (न्) तथा (म) के महाप्राण रूप हैं —

म—का महाप्राण रूप म्ह है। (म्) तुम[1] तुम्ह[2]।

न—का महाप्राण रूप न्ह है। (न्) इन[3] इन्ह[4]।

पार्श्विक तथा लुण्ठित—

र—वर्त्स्य लुण्ठित सघोष अल्पप्राण।

ल—वर्त्स्य पार्श्विक सघोष अल्पप्राण।

प्रयोग स्थिति—

र—राम[5] चरन[6] मगर[7]।

ल—लखन[8] बालक[9] माल[10]।

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

र—बेर[1] = समय।

ल—बेल[11] = वन विशेष।

उत्क्षिप्त—

ड़—मूर्धन्य सघोष अल्पप्राण।

ढ़—मूर्धन्य सघोष महाप्राण।

(ड़) तथा (ढ़) का वितरण क्रमश: (ड) तथा (ढ) की भाँति सीमित है। (ड़) और (ढ़) मध्य पूर्व वितरण में प्रयुक्त हुए हैं अर्थात दो स्वरों के मध्य ही ड़ और ढ़ का प्रयोग हुआ है अन्यत्र (ड) (ढ) का।

(ड़)—बड़ाई[11] बड़ ।

(ढ़)—बढ़ाव[1] मूढ़[11]।

अतः (ड़) और (ढ़) क्रमश: (ड) और (ढ) के सस्वन हैं।

संघर्षी—

स वर्त्स्य अघोष ह काकल्य अघोष

प्रयोग स्थिति—

। स । सम[1] निसान[12] अकास[11]

। ह । हार[1] अहार[11] छोह[11]

१—मा० म० १४।१ २—रा० अर० १३।२ ३—बरव रा० ३४।१ ४—रा० अ० २४। ५ ५—रा० बा० २४।२ ६—रा० अर० १४।१४ ७—रा० बा० ५४।१, ८—रा० अ० ९७।१२ ९—रा० उ० ३२।८ १०—रा० कि० ३३।१४ ११—रा० उ० १८। १२—बरव १३।२ १३—रा० अर० १ ।२८ १४—रा० बा० ५६।१८ १५—रा० अ० ७७।१ १६—रा० अ० २७।५ १७—बरव रा० ३२।१ १८—जा० म० १० ।१ १९—बरव० रा० २८।१ २०—बरव रा० १२।२, २१—पा० म० ५१।१ २२—बरव रा० १८।२

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि क ख ग घ, च छ ज झ, ट ठ ड ढ, त थ द ध, न म, प फ ब भ स ह, र ल, व्यजन ध्वनियाँ अवधी के स्वत त्र ध्वनिग्राम हैं।

२ ३ ३ अर्द्ध स्वर

स्वर तथा व्यजन गणना म अर्द्ध स्वरो का स्थान इन क्षेत्रो से कुछ अश तक भिन्न है अर्थात य ओ व (अर्ध स्वर) की स्थिति स्वर तथा व्यजन के मध्य की तीसरी श्रेणी है। भारतीय वैयाकरणो ने इसे अन्तस्थ कहा है।[1] कि तु अर्ध स्वर नाम अधिक महत्व का है। 'य' का इ एव 'ज' म और 'व' का 'उ' तथा 'ब' मे परिवतन होना अन्तस्थ स्थिति का परिचायक है। ध्वन्यात्मकता की दृष्टि से ये स्वरो के अधिक निकट माने गए है, अतएव इन्हे अर्ध स्वर नाम दिया गया है। इन्हे अर्ध व्यजन मानने का मुख्य कारण है कि ये न तो स्वरो की भाति मुखर हैं और न बलाघात वहन कर सकते हैं। मुखरता के अभाव म ये अक्षर निर्माण म भी असमर्थ हैं। इसलिए इन दोनो का उच्चारण कही स्वरो जैसा मिलता है तो कही व्यजनो जैसा। ऐतिहासिक दृष्टि से भी यही बात पुष्ट होती है। आलोच्य भाषा म दोनो प्रकार से ही विपर्यतरण मिलता है। जसा कि उपर्युक्त उदाहरणो से स्पष्ट है।

आलोच्य भाषा मे जहाँ संस्कृत से म और व अर्ध स्वर (अपने अविकृत रूप मे आए हैं वहाँ तद्भव रूपो मे इनके परिवर्तित विकृत) रूप भी प्राप्त हैं, जो इस प्रकार हैं—

व७ब विधि बिधि[1] वेद बेद[2]

विविध बिबिध[3] सुकवि सुकबि[4]

व्७उ७ऊ७ऊँ दैव दैउ[5]

राव राउ[6] प्रभाव प्रभाऊ[7]

व७य सत्यभाव सतिभाय[8] पाव पाय[9]

इसी प्रकार—

य७ज याचक जाचक[11]

मर्यादा मरजादा[12]

य७उ समय समउ[13]

य तथा व अर्ध स्वरो के उपर्युक्त परिवतनो से यह स्पष्ट होता है कि इनका झुकाव व्यजन और स्वर दोनो की ओर है। इसके अतिरिक्त इनके अविकृत रूप भी

१–डा० विश्वनाथ प्रसाद–भारतीय साहित्य, अप्रल १९५६, २–रा० अयो० १९।१२, ३–रा० बा० २८।९ ४–जा० म० १५६।१, ५–जा० म० १।२, ६–रा० बा० ९६।२, ७–रा० बा० २५०।१, ८–रा० बा० २।२६, ९–पा० म० १३।२, १०–पा० म० १३।२, ११–जा० म २०।५ १२–रा० सु० ५६।१०, १३–रा० बगा० ४०।७

येथप्ट माश्रा म भी उपलब्ध है। रामचरित मानस म प्रारम्भिक काण्डो म य7ब तथा य7ज का परिवतन अधिक मिलता है अपेक्षाकृत उत्तरकाण्ड म।

स्वरानुक्रमा क उदाहरण

। अ अ । य । व

पय', जय' भय' वय',

मय' नय' अवसर नयन'

। अ आ । दया' भवानी' दयाल'', गयान्दि'',

य । व परवान'' जवान' हुरवा''।

। अ ई । य गयी''

। अ ए ऐ । व मवेम'

। अ ओ । य मया' जयो'' गया', पयाधि''।

। अ- औ । वृ पाठजी'' लायो'', गावो'।

। आ अ । य । पाय' गुमाय'' मनिराय' धाय', गाय'',

व आय' पावन'', नाय'' भावन'' सुहायन'।

। आ आ । यृ । अम्नाया'', माया'' निमाया'',

यृ समुझाया'' पावा'' धाया माया', भाया''।

। आ ई । वृ मायावी'

। आ ए, ऐ । य । वृ गाये'', धाय''

आय' सवमुनाव मसान' पाव' जुडाये'।

१-बरव रा० ४३।१ २-जा० म० २९।१ ३-जा० म० ३७।२ ४-जा० म० ९।१, ५-रा० बा० २४।१२ ६-पा० म छ० १।१ ७-रा० कि० १९।१५ ८-पा० म० १२५।१, ९-रा० अयो० ८।१२ १०-रा० अयो० ५५। १, ११-रा० बा० ५७।१४ १२-रा० अयो० ४३।१४ १३-पा० म० छ० १ ।२ १४-रा० अयो० ५४।४, १५-बरव रा० १२।१, १६-रा० बा० ५८।१३ १७-पा० म० ४।२, १८-रा० बा० २६।१९ १९-रा० ७० ८४ २४ २०-रा० लं० ८ ।२२, २१-जा० म० ४३।१ २२ रा० ७० ६०।१२ २३-जा० म० १।१ २४-जा० म० १।२, २५-जा० म ३०।२ २६-रा० उ० ४६।२, २७-रा० ७० १।५, २८-जा० म० १।११ २९-जा० म० ११।५ ३०-रा अयो० ३५।३ ३१ जा० म० ४।१ ३२-बरव रा० २५।१ ३३-पा० म २।२ ३४-पा० म० २।१ ३५-रा० लं० १६।६, ३६-रा० बा० ५१।२८ ३७-रा० ७० ५०।१४ ३८-रा० कि० १८।१७ ३९-रा० कि० २८।८ ४०-रा० ७०-३।१५ ४१-रा० कि० १९।३ ४२-रा० बा० ३९।७, ४३-रा० लं० ७५।८ ४४-रा० लं० नं० १९।२ ४५-बरव रा० १९।१, ४६-जा० म० ७५।१ ४७-जा० म० ७५।२ ४८-रा० उ० १२२।१७ ४९-रा० उ० १२२।१८ ५०-रा० उ० ११७।२९

। आ ।	ओ । य	पायो[1], बँधायो[2], घायो[3], आयो[4] ।
। आ	ओ । व	नावों[5], गावों[6], महिरावों[7], आवों[8], सुनावों[9] ।
। इ, ई	अ । य ।	प्रिय[10] , जिय[11], मानिय[12], पिय[13], पाइय[14]
	व्	इव[15], सिव[16], जिवनु[17], जीव[18] ।
। इ, ई	आ । य् ।	बनगुरिया[19], नउनिया[20] , उजिअरिया[21]
	व्	मलिनिया[22], प्रिया[23], निवारे[24] ।
। इ	ओ । य	वियोगी[25], हियो[26], दियो[27], लियो[28], कियो[29] ।
। उ	अ । व	सुव[30] , भुव[31], त्रिभुवन[32] ।
। ए, ऐ	अ । व्	दव[33], सेवहु[34], मेवहु[35], जेवहि[36], जेवनार[37], केवट[38], पेव[39], देव[40] ।
। ए	आ । व	नेवाजे[41], सेवा[42], सेवार[43], देवाई[44], नेवारई[45] ।
। ए, ऐ	इ, ई । व	बनदेवी[46], सेवी[47] दविक[48] ।
। ओ	अ । य । व	कोय[49] होय[50] , खोवहि[51], सोवत[52] ।
। ओ	आ । व	धोवावहि[53], सोवा[54], ।
। ओ	ऐ । खोव[55]	

१–रा० ल० ७३।२४ २–रा० लं० ७३।२३ ३–रा० लं० ७३।१२ ४–रा० लं० ७७।२ ५–जा० म० २।१ ६–जा० म० २।२ ७–बरव रा० १३।१ ८–रा० सु० १।५ ९–रा० सु० २।८ १०–रा० लं० १८।२२ ११–रा० बा० २०।२ १२–जा० मं० ७६।१ १३–जा० म० १०८।१ १४–रा० लं० नं० ४।३ १५–रा० बा० १७।८ १६–रा० बा० ५९।१५ १७–पा० म० १८।१ १८–रा० बा० २७।२ १९–बरव रा० ३८।२ २०–रा० लं० नं० ८।३ २१–बरव रा० ३७।१ २२–रा० नं० ७।३ २३–रा० अयो० ३०।९ २४–रा० लं० ८५।८ २५–रा० बा० ७२।२ २६–रा० लं० ८४।२० २७–रा० उ० ५।३० २८–रा० उ० ५।३२ २९–रा० लं० ८४।१८ ३०–बरव रा० १३।२ ३१–पा० म० २१।२ ३२–जा० म० ४।२ ३३–रा० अयो० ६।१५ ३४–रा० अयो० ५६।५ ३५–पा० म० १३७।१ ३६–पा० म० १३७।१ ३७–पा० म० १३७।२ ३८–रा० बा० ४१।४ ३९–पा० म० १५।४ ४०–रा० लं० २१।१ ४१–रा० बा० २५।३ ४२ रा० अयो० २५।३ ४३–रा० बा० ३८।७ ४४–रा० अयो० १९।२ ४५–रा० अयो० २५।१८ ४६–रा० अयो० ५०।५ ४७–रा० अयो० ५६।६ ४८–रा० उ० ६।२३ ४९–बरवै रा० ६३।१ ५० बरव रा० ६३।२ ५१–रा० लं० नं० १७।३ ५२–रा० अयो० ९१।१४ ५३–रा० उ० नं० १४।२ ५४ रा० वि० ११।० ५५–रा० उ ६२।१६

अर्धस्वर य का वितरण इस प्रकार है—

(अ) पदादि में यथा—यह[1] या[2] [—य]

(ब) पदान्त में यथा—धाय[3] पाय[4] गाय[5] धाय[6], राय[7]

(स) स्वर मध्य में यथा—माया[8], दाया[9] ।

(द) व्यंजन स्वर मध्य में, यथा—पुण्य[10] वस्य[11], जदपि[12], स्याम[13], त्यागे[14] ।

अर्धस्वर व का वितरण इस प्रकार है—

(अ) पदादि में यथा—वह[15] वेर[16] ।

(ब) पदान्त में यथा—हरवा[17] नाव[18] पाव[19], आव[20] ।

(स) स्वर मध्य में यथा—लावा[21], नावी[22] गावी[23] आवो[24]

य तथा व दोनों अर्धस्वरों में व्यतिरेकी स्थिति—

[य] दया[25], पाय[26] भय[27], गाय[28] ।

[व] दवा[29] पाव[30], भव[31] गाव[32] ।

इस प्रकार आलोच्य भाषा में [य] और [व] व्यतिरेकी स्थिति में होने के कारण ध्वनिग्रामीय स्तर पर हैं और इन्हें हम ध्वनिग्राम मान सकते हैं ।

२.४ स्वर संयोग

तुलसी की अवधी रचनाओं में स्वर-संयोग प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है । तीन स्वर-संयोग की अपेक्षा दो स्वरों के संयोग की प्रधानता है । पदान्त में दीर्घ स्वरों के संयोग ह्रस्व स्वर-संयोग की अपेक्षा प्रचुर मात्रा में मिलते हैं । पद मध्य तथा पदान्त में स्वर-संयोग अधिक मिलता है । स्वर-संयोगों को निम्न प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है —

दो स्वरों का संयोग—

(अ) अ अ—इस प्रकार का संयोग अत्यल्प प्राप्त है—अनअहिवातु[33] ।

१–बरव रा० २६।२ २–रा० कि० २३।१७ ३–रा० अयो० ३५।६ ४–जा० म० ५६।१ ५–जा० म० ९१।३ ६–जा० म० ११।२ ७–जा० म० १२३।२ ८–रा० लंका० ७३।१० ९–रा० लं० ७।१४ १०–जा० म० ४३।१ ११–रा० उ० ७८।१२ १२–रा० उ० ७८।१८ १३–रा० उ० ७६।१ १४–रा० स० ५४।८ १५ बरव रा० ९।१ १६–रा० उ० १८।३ १७ बरव रा० ३२।१ १८–बरव रा० २५।२ १९–बरव रा० ७।२ २०–पा० म० १७।१ २१–पा० म० १३१।२ २२ जा० म० ।१ २३–जा० म० ७।२ २४–जा० म० ७५।१ २५–रा० अयो० ८। –जा० म० ३ ।२ –जा० म० ३७।२ २८–जा० म० १११।१ –जा० ३। –बरव रा० ३।२ ३१–पा० म० ७० ।१ ३२–जा० म० २। ३३–रा० लंका० ५।१४

अ इ—सेवइ[1], जानइ[2], भइ[3], करइ[4], गरजइ[5], फूलइ[6], गइ[7] ।

अ इँ—भइ[8] ।

इस प्रकार के शब्द अत्यल्प प्रयुक्त हुए हैं ।

अ ई—इस कोटि के सयोग प्रचुर मात्रा मे प्राप्त हैं, यथा—

दई[9], भई[10], अनुसरई[11], करई[12], गई[13] ।

अ ईँ—नईँ[14], भईँ[15]

अ उ—इस प्रकार का सयोग पर्याप्त मात्रा मे हुआ है यथा—

गायउ[16], घायउ[17], हरउ[18], राखउ[19], कहिहउ[20]

अ उँ—इस प्रकार (एक अनुनासिक स्वर सयोग) के उदाहरण भी पर्याप्त मिलते हैं, यथा—

जानउँ[21] करउँ[22], करिहउँ[23], मागउँ[24] पावउँ[25]

अ ऊ—मायऊ[26], मथऊ[27], गयऊ[28], पायऊ[29], ठयऊ[30], पायऊ[31],

अ ऊँ—तरऊँ[32], अनुरागऊँ[33], लहऊ[34], करऊ[35],

अए—मिलएसि[36], पठएसि[37],

अए—भए[38], गए[39], पठए[40], हए[41]

अए—मएँ[42] रएँ[43], बएँ[44] गए[45], लए[46],

अओ—इस प्रकार के सयोग अत्यल्प हैं—अघओघ[47]

१–रा० उ० २४।१६ २–रा० उ० ४।८ ३–रा० उ० ३।२० ४–रा० कि० १५।८ ५–रा० लं० १३।८ ६–रा० लं० १६।२१ ७–रा० बा० ३५४।२० ८–रा० कि० १६।१५ ९–पा० म० ११।२ १०–जा० म० १७। ११–रा० उ० २४।१२ १२–रा० अयो० २२।१३ १३–पा० म० २९।१ १४–जा० म० १७।२ १५–जा० म० १७।१ १६–जा० म० ३८।२ १७–रा० लं० १२१।१९ १८–रा० अयो० १०।१६ १९–रा० सु० १८।१२ २०–रा० बा० ३०।३ २१–रा० अयो० २०।४ २२–रा० कि० १९।१८ २३–रा० उ० १८।१३ २४–रा० उ० १४।४१ २५–रा० लं० ११६।२६ २६–रा० सु० ६०।१८ २७–रा० कि० १५।५ २८–रा० कि० १५।६ २९–जा० म० छं० १४।३ ३०–रा० लं० १६।१५ ३१–रा० सु० ९०।२० ३२–रा० अर० २३।८ ३३–रा० कि० १०।२२ ३४–रा० बा० १२।१० ३५–रा० अर० २३।७ ३६–रा० सु० १८।१७ ३७–रा० सु० १९।२ ३८–पा० म० २२।२ ३९–रा० लं० ११२।१६ ४०–रा० अयो० १८।३ ४१ रा० उ० १४।१० ४२–रा० उ० ९।२१ ४३–रा० अर० ४६।२४ ४४–रा० सु० ५८।८ ४५–रा० कि० २६।४ ४६–रा० कि० २६।४७ ४७–रा० बा० १६।५

(आ) आइ—पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं—

छाइ[1] कराइ[2] गाइ[3] सोहाइ[4] पाइ[5] माइ[6]

(था) आइ—इस कोटि के स्वर-संयोग प्रचुर संख्या में प्राप्त हैं यथा—

आइ[7] सुनाइ[8] पराई[9], कराइ[10] समुझाइ[11]

जाइ—गोसाइँ[12] नाई[13] माइ[14], बनाइ[15] जाइ[16]

आउ—राउ[17] बाउर[18] उपाउ[19], पसाउज[20], सुभाउ[21],

आउँ—ठाउँ[22] जाउँ[23] खाउँ[24], चढाउँ[25]

आऊ—इस कोटि के संयोग अधिक मात्रा में प्राप्य हैं यथा—

आऊ[26] प्रभाऊ[27] पठिनाऊ[28] राऊ[29],

आऊँ—नाऊँ[30] हरषाऊँ[31], पाऊँ[32] हेराऊँ[33] ठाऊँ[34]

आए—इस कोटि का संयोग पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है यथा—

जाए[35] बालाए[36] नहाए[37] अन्हाए[38] लाए[39] सुहाए[40]

आएँ—आएँ[41] चलाएँ[42] जेवाएँ[43] मराए[44]

आए—इस प्रकार का संयोग नगण्य है—कहलाएन[45]।

(इ) इअ—यह संयोग पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है यथा—

करिअ[46] पूछिअ[47] देखिअत[48] अमिअ[49]

१—बरवै रा० ३३।१ २—रा० कि० ४।७ ३ पा० म० छं० १६।३ ४—बरवै रा० १२।१ ५—जा० म० छं० १८।४ ६—रा० अयो० २१७।३ ७—रा० ल० म० १०।२ ८—रा० कि० २०।१३ ९ रा० कि० ६।१६ १०—रा० सु० ८।१० ११—रा० उ० ७।६ १२—रा० अयो० ।७ १३—रा० अयो० ३।८ १४—रा० बा० ८६।१२ १५—रा० बा० ८०।१३ १६—रा०बा० ६५। १ १७—रा० बा० ३६०।९ १८—पा०म० १७।१ १९—पा०म० २२।१ २०—रा०ल० १०।१७ २१—रा०अयो० ३।३ २२—जा० म० ८७।१ २३—रा० उ० १८।८ २४—रा० उ० ७५।१८ २५—रा० उ० ८५।१६ २६—रा अयो० ४।९ २७—रा० बा० ३।११ २८—रा अयो० ४।१० २९—रा० अयो० १।२० ३०—रा० बा० २६।९ ३१—रा० उ० ७५।६ ३२—रा० अर० ६।२ ३३—रा० अयो० १७।१ ३४—रा० बा० २६।१० ३५—रा० उ० २५।१२ ३६—रा० अयो० ९।१२ ३७—रा० उ० ११।१४ ३८—रा० उ० ११।९ ३९ रा० अर० २।१४ ४०—रा० अर० १४।४ ४१—रा० अर० १२।४ ४२—रा० कि० ०।४ ४३—रा० बा० २५२।६ ४४—रा० कि २२।१६ ४५-रा० अयो० १००।२७ ४६—रा० म० २५।२ ४७—रा० अर० ९।१३ ४८—रा० कि० १२।१७ ४९—रा० बा० ६।१२

इ आ—पिआस[1], पिआरा[2], विआरी[3], पतिआन[4], विआरी[5]

इ इ –इस प्रकार का स्वर सयोग अत्यल्प है, यथा—जिइहि[6]

इ उ—जिउ[7], चारिउ[8], कपिनिउ[9], तीनिउ[10]

इ उ—उपारिउ[11] जानिउँ[12], दीन्हिउ[13], कीन्हिउँ[14], रहिउ[15]

इ ए—दिए[16], देखिए[17], हिए[18], किए[19], लिए[20]

इ एँ—किएँ[21], ग्एि[22], हिए[23], लिएँ[24]

इ ऐ—बूझिए[25], चाहिऐ[26], जानिऐ[27], जिए[28], हरिए[29],

इ औं—इस प्रकार के स्वर सयोग एकाध ही प्राप्त हैं—जिऔं[30]

ई अ—इस तरह के स्वर सयोग नगण्य हैं, यथा—जीअत[31]

उ अ—सुअवसर[32], कुअवसर[33], मुअमू[34], सुअजन[35]

उ अँ—कुअँर[36], कुअरि[37]

उ आ—मुआल[38] दुआर[39], मुआला[40], निरअरि[41], जुआ[42]

उ आँ—अत्यल्प मात्रा मे प्राप्त है, यथा—धुआँ[43]

उ इ—दुइ[44] अनुसुइया[45]

उ ई—मुइ[46]

उ ऐ—इस प्रकार का स्वर-सयोग कम मिलता है—कुऐ[47]

उ औ—दुऔ[48]

१–रा० बा० ४३।४ २–रा० बा० २२।१४ ३–रा० कि० १५।१३ ४–रा० अयो० १६।२० ५–रा० बा० ६७।६ ६–रा० अयो० ४९।२० ७–रा० ल० म० १२।१ ८–रा० बा० २२।१२ ९–रा० उ० २।१९ १०–रा० अर० २०।७ ११–रा० ल० ३४।१४ १२–रा० ल० १६।११ १३–रा० अयो० १५।१ १४–रा० उ० ११४।३१ १५–रा० अर० १७।१७ १६–जा० म० २८।१ १७–जा० म० ९५।२ १८–रा० बा० ४३।१२ १९–रा० अर० ३।२ २०–रा० अयो० ३१६।१७ २१–रा० अर० २१।१८ २२–रा० सु० ८।१७ २३–पा० म० छ० ३।३ २४–रा० उ० १४।२९ २५–रा० सु० ४३।९ २६–रा० अयो० ३१५।१७ २७–रा० ल० ११३।३१ २८–रा० अयो० २३।२ २९–रा० ल० १११।३८ ३०–रा० अयो० ३६।१३ ३१–रा० अर० १९।१२ ३२–रा० ल० ११४।२३ ३३–रा० अयो० ३१६।१८ ३४ रा० अयो० ४०।२ ३५–रा० बा० १।३७ ३६–रा० बा० ३४८।१४ ३७–पा० म० ९।१ ३८–रा० अयो० ३।१ ३९–रा० उ० २८।१५ ४० रा० अयो० ३५।९ ४१–रा० उ० ११।८ ४२–जा० म० १५०।१ ४३–रा० अर० २१।९ ४४–रा० अयो० ४०।१३ ४५–रा० अर० ५।१ ४६–रा० अयो० २३।१० ४७–रा० ल० न० १३।३ ४८–रा० अर० ४।१

(क) एइ—गेइ' सेइहि' मइ' तेइ', दर्इ
एई—जेई' वइ तुम्हारेइ'
एउ—ल्हेउ' नेउ', मोहउ'' फिरेउ'' चलेउ''
एउँ—गेउँ' मारेउ'' देमउँ'' फिरउँ''
एऊ—तेऊ'' सगऊ'', रेऊ' पहिरेऊ'' रहेऊ''
(ए) ऐअ—इस कोटि का स्वर-संयोग अत्यल्प है यथा—दअ''
एआ—इनकी भी संख्या अधिक नहीं है यथा—मआ' मआ''
एइ=एन्हि'' देइज
एउ— इस कोटि का स्वर-संयोग भी अत्यल्प प्राप्त है यथा—दउ''
(ऐ) आइ—होइ' मोइ' आइहि'' होइहि'', कोइ'' जोइ''
ओइ— अत्यल्प प्राप्त हैं—हाइ''
ओई—गोई'' सोई' उरगोई'' होई'' एतनोई'
आउ—होउ'', कोउ', साउ' दोउ
ओउ—होउ''
ओऊ—ओऊ'' दोऊ'', कोऊ'' सोऊ'
आए—धोए' बिगोए''

१–जा० म० ८।३ २–रा० ल० ३।५ ३–रा० सु० ११।४ ४–पा० म० ७६।२ ५–रा० अयो० २९।१० ६–पा० म० १३९।२ ७–रा० अर० ४२।४ ८–रा० अर० १३।९ ९–रा० अर० १९।२९ १०–रा० अयो० १। ४ ११–जा० म० १८।२ १२–जा० म० २८।२ १३–रा० अयो० ३२१।२ १४–रा० उ० २।२४ १५–रा० कि० ८।१० १६–रा० सु० ४।१६ १७–रा० कि० ६।२४ १८–रा० बा० ७।१० १९–रा० ल० १४।१२ २० रा० अयो० ३५।७ २१–रा० अयो० ३/।१४ २२–रा० अर० १९।१८ २३–रा० अयो० २०।१८ २४ रा० अयो० ४३।३ २५–रा० अयो० ५३।३ २६–रा० अयो० ३१।१४ २७–पा० म० छं० ५।३ २८–रा० अयो० १८।१६ २९–रा० अर० ५।३८ ३०–रा० अयो० १७।१४ ३१–जा० म० ५८।२ ३२–जा० म० ७।१ ३३–बरव रा० ३८।१ ४–पा० म० १२।२ ३५–रा० अर० १६।८ ३६–रा० अयो० ३१६।२ ३७–रा० अयो० २ ।१२ ३८–रा० बा० ३५८।८ ३९–रा० कि० ८।८ ४०–रा० अयो० ३१६।१ ४१–रा० ल० १२।१३ ४२–रा० उ० २२।७ ४३–जा० म० ५६।१ ४४–रा० अयो० २७।४ ४५–रा० कि० ७।६२ ४६–रा० ल० १०९।८ ४७–रा० बा० २५।१ ४८–रा० बा० २५।२ ४९–रा० कि० १३।१६ ५०–रा० बा० ४३।७ ५१–रा० बा० ४३।८

ओएँ--इस कोटि के स्वर संयोग अल्प मात्रा में प्राप्त है--प रें[1], बिलोएँ[2]

तीन स्वरों का संयोग--

तुलसी की अवधी रचनाओं में अन्तगत दो स्वरों के संयोग के अतिरिक्त तीन स्वरों के संयोग भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। परन्तु तीन स्वर-संयोग की तुलना में दो स्वर-संयोग का प्रयोग प्राचुर्य कहा जा सकता है,

उदाहरणार्थ--

अइअ — पठइअ[1], सिखइअ[2]

अइउ — दपउ[3], भपउ[4]

आइअ — लरिकाइअ, जाइअ[5], पाइअ[6], बड़ाइअ[7], गाइअ[11], बंधाइअ[11],

आइउ — लाइउ[11]

आइऊ — समुझाइऊ[11]

आइए — गाइए[11], पाइए[11]

इअउ — ललिअउँ[11], जिअउ[11]

इआउ — जिआउ[11]

इआई — जिआई[1], बरिआई[11]

इआए — जिआए[11]

उआई — हुआई[11], कआई[11]

एइअ — सेइअ[11], देइअ[11]

२.५ व्यंजन-संयोग

२.५.० तुलसी की अवधी भाषा समृद्ध [illegible] के कारण उसमें व्यंजन संयोग का अभाव नही है। तत्सम शब्दों में तीन व्यंजनों [illegible] का संयोग मिलता है। त्रि-व्यंजनात्मक संयोग की अपेक्षा द्वि-व्यंजनात्मक [illegible] है। मध्य स्थानीय व्यंजन-संयोग सर्वाधिक हैं जबकि अन्त्य-व्यंजन [illegible]।

१--रा० उ० ४९।९ २--रा० उ० ४९।१, [illegible] ४--रा० अयो० ३१४।१६ ५--जा० म० १० ।२ [illegible] ७--पा० म० ४१।८ ८--पा० म० ४६।२ ९--रा० अयो० [illegible] ११--रा० सु० ७।८ १२--रा० सु० ६।७ १३--रा० [illegible] १४--रा० अयो० [illegible] १५--रा० उ० २८।२० १६--रा० उ० [illegible] अयो० ५।१० १९--रा० उ० ११४।[illegible] रा० अयो० १८।[illegible] २२--रा० उ० २८।७ २३--रा० सु० [illegible] ११८।७ २[illegible]--रा० कि० ११४ २६--रा० अयो० ४५।१९ [illegible] वा० १०।[illegible]

२ ५ १ द्विव्यजनात्मक सयोग

दो व्यजनो का सयोग पद के आदि मध्य तथा अन्त तीनो स्थितियो मे मिलता है

(अ) आदि स्थानीय व्यजन सयोग—

द+व (द्व) — द्विज[1], द्वारा[2], द्वार[3], द्वद
त+य (त्य) — त्याग[5] त्यागी[6]
स+य (स्य) — स्याम[7]
त+र (त्र) — त्रेता[8] त्रासा[9] त्रिय[10] त्रिसूलहिं[11]
व+य (व्य) — व्याकुल[12] व्याहि[13]
ध+य (ध्य) — ध्यानु[14] ध्वज[15]
ग्+र (ग्र) — ग्राम[16]
भ+र (भ्र) — भ्राता[17]
क+र (क्र) — क्रोध[18], क्रीडा[19]
प+र (प्र) — प्रेरित[20] प्रीति[21], प्रम[22], प्रेत[23]
ब्+र (ब्र) — ब्रह्म[24] बढ[25] वृद्ध
ल+य् (ल्य) — ल्याइ[26]
न+य (न्य्) — न्याउ[27]
ग्+य (ग्य) — ग्यान[28] ज्ञान
ज+य (ज्य) — ज्यो[29]
क+व (क्व) — क्वो[30]
स+व (स्व) — स्वामी[31] स्वल्प[32]
ज्+व (ज्व) — ज्वाला[33]

१–रा० उ० १०।७ २–रा० अयो० ३७।१० ३–रा० बा० ३५८।१२ ४–रा० ल० ११३।३७ ५–रा० सु० ५२।१० ६–रा० अर० ८।१२ ७–रा० ल० ५६।११ ८–रा० उ० २३।१२ ९–रा० अर० २९।१७ १०–रा० ल० ३३।९ ११–रा० ल० ४२।२४ १२–रा० ल० ४२।२२ १३–जा० म० १८०।१ १४–रा० बा० २७।५ १५–रा० उ० १३।२० १६–रा० अयो० ३२२।३ १७–रा० कि० ८।९ १८–रा० कि० १९।२६ १९–रा० उ० ५८।५ २०–रा० सु ५९।५ २१–रा० अयो० १५।१२ २२–रा० बा० ३५५।७ २३–रा० कि० २०।५३ २४–रा० बा० ३४।१९ २५–रा० उ० ३।१८ २६–जा० म १४०।२ २७–रा० उ ११८।३९ २८ रा० ल० ६३।२२ २९–जा० म० ११।२ ३०–रा० उ० १०२।१० ३१–रा० बा० ३८३।९ ३२–रा० ल० ५१।१६ ३३–रा० सु० ५८।१२

यदि 'ऋ' का तत्कालीन उच्चारण 'रि' मान लें तो अन्य व्यंजन संयोग इस प्रकार होंगे—

क्+र (कृ) — कृपी[1], कृप[2] (कृश), कृपासिंधु[3] कृतारथ[4] (कृतार्थ)
भ+र् (भ्र) — भ्रकुटी[5], भृग[6]
व्+र् (वृ) — वृंदा[7] (वृंद), वृष्टि[8]
त्+र् (तृ) — तृन[9], (तृण), तृषावंत[10]
ग+र् (गृ) — गृह[11]
म+र (मृ) — मृग[12], मृदु[13]
न्+र् (नृ) — नृत्य[14], नृप[15]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'र्' के योग से व्यंजन-संयोग अधिक हुआ है।

(ब) मध्य स्थानीय व्यंजन-संयोग---अवधी में मध्य स्थानीय संयुक्त-व्यंजनों की बहुलता है। इनके अन्तर्गत व्यंजन क्रम--(१) वर्गीय नासिक्य+स्पर्श-व्यंजन (२) स्पर्श+अर्धस्वर, (३) संघर्षी+स्पर्श, (४) स्पर्श+लुण्ठित हैं। इनके अन्तर्गत सर्वाधिक संयोग स्पर्श+अर्धस्वर (य) तथा लुण्ठित (र्)+अन्य व्यंजन के रूप मिलते हैं, यथा--

म्+य (म्य) — ग्राम्य[16], रम्य[17]
ह+म (ह्म) — ब्रह्म[18], ब्रह्मानंद[19]
व+य (व्य) — द्रव्य[20], अव्याहत[21] दिव्य[22], अव्यक्त[23]
ल+य (ल्य) — कल्यान[24] माल्यवत[25] कौसल्या[26]
ल+प् (ल्प) — गल्प[27] जल्पसि[28] संकल्प[29]
न+य (न्य) — संयासी[30] वन्य[31], पुन्य[32] धन्य[33], कन्या[34]

१-रा० कि० १५।१५ २-रा० लं० ११६।२१ ३-रा० ल ३७।१९ ४-पा० म० १२७।२ ५-बरवै रा० १।१ ६-रा० सु० ५६।२६ ७-रा० अर० १२।२८ ८-रा० लं० ४६।२२ ९-रा० लं० २०।१३ १०-रा० उ० २।१२ ११-रा० अर० १३।४० १२-रा० अयो० १२।४ १३-बरवै रा० १।१ १४-रा० अर० ३।५ १५-जा० म० २८। १६-रा० बा० १०।३५ १७-रा० उ० १।८ १८-रा० लं० ११०।१० १९-रा० उ० १५। १ २०-रा० उ० १०।२२ २१-रा० उ० ११०।२४ २२-रा० अयो० ३१२।६ २३ रा० उ० ११३।२६ २४-रा० बा० २६।१९ २५-रा० सु० ४०।- २६-रा० उ० ८।१ २७-रा० उ० ११६।२० २८-रा० उ० ३१।१५ २९-रा० सु० ४१।१० ३०-रा० उ० २०।१० ३१-रा० उ० ४।१० ३२-रा० सु० ४।१५ ३३-रा० बा० ३५२।१० ३४-पा० म० २।४

थ + य (थ्य) — मिथ्या[1]
स + थ (स्थ) — अस्थि[2]
द + य (द्य) — अनवद्य[3], खद्योत[4] सद्य[5], अविद्या[6], उद्यम[7]
न + म (न्म) — जन्मभूमि[8]
न + ध (न्ध) — बन्धु[9]
ष + ठ (ष्ठ) — वसिष्ठ[10]
ष + ट (ष्ट) — वष्टि[11] दुष्ट[12], वसिष्ट[13] मुष्टि[14]
ष + ण (ष्ण) — पष्णव[15], पापिष्ट[16]
ष + य (ष्य) — शिष्य[17]
स + त (स्त) — जगस्ति[18], विस्तार[19] वस्तु[20] पुलस्ति[21]
स + य (स्य) — रहस्य[22]
स + प् (स्प) — परस्पर[23]
स + व (स्व) — विस्वास[24]
स + म (स्म) — भस्मि[25]
घ + न (घ्न) — निर्विघ्न[26]
ध + य (ध्य) — मध्य[27]
प + र (प्र) — निप्र[28]
क + र (क्र) — चक्र[29]
ग + र (ग्र) — सुग्रीव[30]
द + र (द्र) — रुद्र[31]
भ + र (भ्र) — अदभ्र[32]
र + म (र्म) — कर्म[33] चर्म[34] धर्म[35], निर्मल[36]

१–रा० उ० ७१।२२ २–रा० ल० १५।१४ ३–रा० उ० ७२।१० ४–रा० ल० ६।२ ५–रा० बा० २।२६ ६–रा० अयो० २९।२२ ७–रा० कि० १५।६, ८–रा० उ० ।९, ९–रा० कि० ३।२२ १०–रा० बा० ३५९।५, ११–रा० उ० ११।२ १२ रा० ल० ११३।७ १३–रा० बा० ३५२।१ १४–रा० कि० ८।६, १५–रा० ल० ११३।७, १६ रा० उ० ११।१९ १७–रा० अर० २०।१ १८–रा० उ० ५।१० १९ रा० सु० २।२८ २०–रा० बा० ३०।९ २१–रा० ल० २०।५ २२–रा० म० ५६।२ २३–रा० म० २६।१ २४–रा० बा० ८।३ २५–रा० उ० ११।८ २६ रा० उ० ९।३ २७ जा० म० १३८।२ २८–जा० म० १२८।२ २९–रा० अर० २।६ ३०–रा० कि० ९।११ ३१–रा० कि० ५।१५ ३२–रा० उ० ७।९ ३३–रा० उ० १३।४८ ३४–रा० । ६, ३५–रा० कि० ९।९ ३६–रा० उ० २८।२६,

र+क (क) — मकट[1], मधुपक[2]
र+ज् (ज) — गजहि[3], भूज[4]
र+थ (थ) — व्यथ[5]
र+ग (ग) — दुर्ग[6]
र+द् (द) — मद[7]
र+प (प) — वर्ष[8]
र+झ (झ) — निझर[9]
र्+ल् (ल) — दुलभ[10]
र्+ध (ध) — अतंर्धान[11]
र+व (व) — सवस्य[12]
द+ध् (द्ध) — बद्ध[13], सिद्ध[14], बुद्धि[15]
त+त् (त्त) — रत्न[16]
त्+य (त्य) — जीत्यो[17], मत्यु[18], सत्य[19] असत्य[20]
त+व (त्व) — तत्व[21]
द+म (द्म) — अदमुत[22]
ख+य (ख्य) — देख्यो[23]
ज+य (ज्य) — पूज्य[24]
प+य (प्य) — तोप्यो[25]
त+र (त्र) — विचित्र[26] मित्र[27]
प्+त (प्त) — गुप्त[28]
च्+य (च्य) — रच्यो[29]
श+र (श्र) — आश्रम[30], बरनाश्रम[31] आश्रमहि[32]

१-रा० ल० ९३।१८, २-पा० म० १२१।२ ३-रा० ल० ८।४ ४-रा० उ० १२१।३१ ५-रा० उ० १०९।११ ६-रा० उ० ९१।१४, ७-रा० उ० ९१।१४ ८-रा० उ० ६६।२३ ९-रा० ल० ८७।१९ १०-रा० अयो० ४१।१८ ११-रा० उ० १३।५२, १२-रा० उ० १२१।१४ १३-रा० उ० ३।१४, १४-रा० अर० १५।१६ १५-रा० उ० १५।१७ १६-रा० उ० २३।१८, १७-रा० ल० १०७।१४ १८-रा० अर० २।११ १९-रा० अयो० १९।८ २०-रा० अयो० १९।९, २१-रा० सु० १५।११, २२-रा० ल० ४७।१४, २३-पा० म० छ० ४।१, २४-रा० उ० ७०।२ २५-रा० ल० ९३।६ २६ पा० म० छ० १।१२, २७-बरव रा० ६७।१ २८-रा० उ० १०२।२१ २९-जा० म ३।१ ३०-रा० अयो० १२।४, ३१-रा० उ० २०।१७ ३२-जा० म० ३७।२,

द+व (द्व) — भरद्वाज[1]
ग+य (ग्य) — भाग्य[2]
भ+र (भ्र) — सुभ्र[3]
क+त (क्त) — भक्ति[4] मुक्ति[5] सक्ति[6]
त+थ (त्थ) — जुत्थ[7]
स+थ (स्थ) — अस्थि[8]
च+छ (च्छ)क्ष — दच्छिन[9] दक्षिण
अच्छकुमार[10] अक्षकुमार, रच्छ[11] रक्ष
दच्छ[12] दक्ष, रच्छक[13] रक्षक
राच्छसी[14] राक्षसी सुलच्छन[15] सुलक्षण

नासिक्य व्यंजनों के योग से मध्य स्थानीय व्यंजन-संयुक्तता ङ ढ, ढ, फ र ल, व श् ष तथा ह को छोड़कर सभी व्यंजनों के साथ संयुक्तता उपलब्ध है यथा–

संकट[16], संकर[17] मगन[18] सुभग[19] आदि ।
कंटक[20] कंठ[21] दंड[22] अरहु[23], घमंडु[24] आदि ।
गुंजत[25] मंजीर[26] कुंजर[27] बिरंचि[28], कंचन[29] आदि ।
कंप[30], कंपति[31] संपति[32] [illegible][33] संपुट[34] आदि ।
जगदंबा[35], अंबर[36] अल्वन[37], दंभ[38], समुहि[39] संभारी
संता[40] संतोषी[41] हनुमंतहि[42] भगवंत[43] बसंत[44]

१—रा० लं० १७।१६ २—रा० उ० ११।११ ३—रा० कि० १३।११ ४—रा० ल ११।१६ ५—रा० कि० १।१, ६—रा० लं० ११०।१२, ७—आ० म० १४।११ ८—रा० कि० ७।२३ ९—रा० लं० १२।२७ १०—रा० सु० १२।१२ ११—रा० उ० १३।१६ १२—रा० उ० १३।१५ १३—रा० लं० १०८।२०, १४—रा० सु० १।११ १५—रा० बा० ७।२८, १६—बरवै रा० ४७।१, १७—रा० बा० २४।२ १८—रा० उ० १५।१० १९—पा० म० १२०।१, २०—रा० अयो० ३१।१९ २१—रा० कि० १०।२९ २२—रा० उ० १९।४, २३—रा० अयो० ४२।५, २४—रा० बा० २४७।२ २५—रा० कि० १३।२ २ —आ० म० १०४।१ २७—रा० अयो० ३२६।१३ २८—रा० लं० २७।१९ २९—रा० बा० १२।६ ३०—रा० लं० १४।१ ३१—रा० लं० ५।२३, ३२—रा० कि० १५।१० ३३—रा० अयो० १२४।१४ ३४—रा० अयो० ३१६।११, ३५—रा० उ० २४।१८ ३६—रा० उ० १३।२८ ३७—रा० उ० १४।२३ ३८—रा० अर० १६।२३ ३ —रा० लं० ११८।१६ ४०—रा० उ० १८।१ ४१—रा० सु० ७।८ ४२—रा० लं० १२०।७ ४३—रा० लं० १२१।१, ४४—रा० उ० १९।२८ ४५—रा० उ० २८।४

द्वित्व व्यजन—द्विव्यजनात्मक-सयोग मे अतगत द्वित्व व्यजन भी आते हैं। तुलसी की अवधी रचनाओ के अन्तगत इनका प्रयोग तो हुआ है किन्तु प्रचुर मात्रा म नहीं। रामचरितमानस के अतगत 'सुदर तथा 'लका' काण्डो मे द्विव्यजनो का प्रयोग कुछ अधिक हुआ है। पावतीमगल जानकी मगल तथा बरवै रामायण मे इनका प्रयोग नहीं के बराबर है। प्राय क, ग्, च ज ट, त द, न, प्, ल के द्वित्व रूप प्रयुक्त हुए हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

च+च् (च्च) — सच्चिदानन्द[1], खच्चर[2], साक्षात्कार[3]
ज्+ज् (ज्ज) — कज्जलगिरि[4], अमज्जन[5], कज्जल[6], मज्जि[7]
मज्जनु[8], निमज्जन[9], निलज्ज[10]
ल+ल् (ल्ल्) — बल्लभ[11], भिल्लनि[12], भुजबल्ली[13], मिल्ल[14]
ट+ट् (ट्ट) — झट्टा[15], अट्टहास[16], घट्टा[17], दाट्टहि[18]
द्+द (द्द) — कद्दपि[19]
त+त् (त्त) — बत्तिस[20], उत्तम[21], उत्तर[22], बिमत्त[23]
न+न् (न्न्) — सम्पन्न[24], प्रसन्न[25], भिन्न[26]
क+क (क्क) — चक्क[27], चिक्करहिं[28], कटक्कटइ[29]
प+प (प्प) — खप्पर[30], खप्परहि[31], बहप्पनु[32]
ग+ग् (ग्ग) —उग्ग[33]

२ ५ २ त्रि व्यजनात्मक सयोग

आलोच्य भाषा म त्रि-व्यजनात्मक सयोग अत्यन्त मात्रा म मिलते हैं। त्रि-व्यजनात्मक सयोग पद मध्य मे ही मिलते हैं। इस प्रकार के सयोग के अतगत

१—रा० उ० २५।२९ २—रा० सु० ४।२७, ३ पा० म० १०८।१२, ४ रा० ल० १९।८, ५—रा० बा० ५। ६—रा० अर० १८।८, ७—रा० बा० ४५।४, ८—रा० ल० १२०।२४ ९—रा० अयो० ३१२।९, १०—रा० सु० ९।१८, ११—रा० ल० ४२।१६, १२—रा० अयो० २८।१९ १३—रा० बा० ३२८।३९ १४—रा० अयो० ३२१।३, १५—रा० ल० ८७।३, १६—रा० सु० २५।२१, १७—रा० ल० ८७।४, १८—रा० ल० ८८।१८, १९—रा० अर० १३।२३ २०—रा० सु० २।१६, २१—रा० ल० २०।१, २२—रा० उ० ४।१०, २३—रा० उ० १३।१७, २४—रा० उ० २३।११ २५—रा० अयो० ३।१५, २६—रा० उ० १२।३७ २७—जा० म० छ० १३।४, २८—रा० ल० ८।।२३, २९—रा० ल० ८८।१५, ३०—रा० ल० ८८।१३, ३१—रा० ल० ८८।२३, ३२—रा० उ० १०।१६, ३३—रा० ल० ८८।२३

व्यंजन क्रम—(१) वर्गीय नासिक्य+स्पर्श+लुण्ठित। अघस्वर तथा (२) संघर्षी +स्पर्श+लुण्ठित, यथा—

न+त+र (न्त्र) — सुमन्त्र[1] कुमन्त्र[2] स्वतन्त्र[3]
न+द+र (न्द्र) — रामचन्द्र[4] चन्द्रिका[5] इन्द्रजीत[6]
न+द+व (न्द्व) — द्वन्द्व[7]
स्+त+र् (स्त्र) — अस्त्र[8] शस्त्र[9]

२ ६ अक्षर वितरण

आलोच्य भाषा में अक्षर इस प्रकार निर्मित हैं, यथा—

[सकेत अ= स्वर व=व्यंजन]

(१) अ—केवल एक ही स्वर अक्षर रूप में प्राप्त होता है, यथा—
अई[1], नई[11] नए[12], जए[13] मए[14]।

(२) अ+व—एक स्वर और एक व्यंजन के योग से अक्षर का निर्माण होता है, यथा—
अन्न[15] अल्प[16] इच्छा[17] अच्छा[18]

(३) व+अ - एक व्यंजन तथा एक स्वर के योग से अक्षर निर्माण, यथा—
साई[19] पाए[20] मए[21], भए[22]

(४) व+अ+व—एक व्यंजन, एक स्वर तथा एक व्यंजन के योग से शब्द का निर्माण होता है, यथा—
सजन[23] (स ज) मजन[24] (म ज) घटटा[25] (घट) ठटटा[26] (ठट)
भटटा[27] (भट) रुण्ड[28] (रुण) मुण्ड[29] (मुण) सर[30] (सर) घर[31]
(घर) गव[32] (गर) भुमि[33] (भुर) चम[34] (चर)

१—रा० अर० २।१।९ २—रा० अयो० ५।२ ३—रा० अर० १९।५ ४—रा० अयो ११६ ५—पा० म० छ० ११४ ६—रा० उ० ५८।७ ७—रा० उ० १४।३९, ८—रा० लं० ९२।६ ९—रा० लं० ९२।६ १०—पा० म० २९।२ ११—पा० म० १७।१, १२—जा० म० २०।२, १३—जा० म० ११२।१ १४ पा० म० २२।२ १५—रा० बा० ६८।११ १६—रा० बा० १४।३ १७—रा० लं० ११८। = १८—रा० बा० ८।७ १९—रा० बा० ८९।१२ २०—रा० लं० ५।८, २१—जा० म० ३०।२ २२—पा० म० २२।२ २३—रा० कि० ११।२६, २४—रा० उ० ३०।१६ २५—रा० लं० ८७।४ २६—रा० लं० ७९।२२ २७—रा० लं० ८७।३ २८—रा० लं० ८८।२ २९—रा० लं० ८८।१९, ३०—रा० लं० ७७।८ ३१—रा० लं० ८०।२१ ३२—रा० लं० ७८।१९, ३३—रा० लं० ८७।१८, ३४ रा० लं० ८७।२८

(५) यदि तुलसी की अवधी में फुसफुसाहट वाले स्वरों के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया जाए तो निम्न प्रकार अक्षर निर्माण स्वीकार किया जा सकता है-

अ+क+अ (फुसफुसाहट)—एक स्वर+एक व्यंजन+एक फुसफुसाहट वाले स्वर के योग से अक्षर निर्माण प्राप्त है, यथा—

मिलिएसि[1], पठएसि[2]

आलोच्य भाषा के शब्दों में अक्षर वितरण इस प्रकार है, यथा—

(१) एकाक्षरी शब्दों में —इस कोटि के शब्दों में अक्षर निर्माण इस प्रकार मिलता है, यथा—

(अ)—इस कोटि के शब्द अत्यल्प हैं, यथा—आ[3]

(आ)—का[4]=क्या, तो[5]=तुम, तैं[6]=तुम

जे[7]=जो (सम्बन्धवाचक सर्वनाम)

को[8]=कौन, हा[9]=सम्बोधन

रे[10]=सम्बोधन, मैं[11]

हौं[12]=मैं मो[13]=मैं

सो[14]=वह ते[15]=वे, ता[16]=वह, ये[17]=यह

जो[18]=(सम्बन्ध वाचक सर्वनाम)

२—द्वयक्षरी शब्द—

(१) अ अ—इस कोटि के शब्दों की संख्या अत्यल्प है, यथा—

आई[19], आए[20]

(२) अ क अ—इस कोटि के शब्द पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है, जैसे—

अज[21], आनी[22], आसा[23], आहि[24]

(३) कक अ कअ—इस कोटि के शब्द अधिक नहीं हैं उदाहरणार्थ—

स्याम[25], बयारी[26], तुन[27]

१—रा० सु० १८।१७, २—रा० सु० १९।२, ३—रा० सु० ४३।१८, ४—बरवै रा० २०।२ ५—रा० अयो० १५।२ ६—रा० सु० ११।१८, ७—रा० बा० १२।१, ८—पा० म ६४।२, ९—जा० म० १०३।१, १० रा० अर० २९।१९, ११—रा० अर० २।२४ १२—रा० बा० ९६।२४, १३—रा० अर० २६।२८, १४—रा० उ० ८।१२, १५—रा० अयो० १६।६, १६—रा० उ० १२८।१५, १७—रा० बा० ६३।३, १८—रा० बा० २।१४, १९—रा० सु० ५३।१२ २०—रा० कि० २०।९ २१—रा० उ० ७२।६ २२—रा० कि० १८।४, २३—रा० कि० १६।१२ २४—रा० लं० २३।३, २५—रा० सु० ५२।३ २६—रा० कि० १५।१३, २७—रा० अर० १५।१६

(४) कअ अ अ—इस वर्ग के श[illegible] की संख्या सीमित है यथा—
"याउ[1] स्याइ[2]

(५) कअ अ—इस वर्ग [illegible] पर्याप्त मात्रा में हैं यथा—
काउ[3] हिए माई[4]

(६) कअ कअ—इस कोटि के शब्द भी पर्याप्त मात्रा में सुलभ हैं यथा—
सुत[5] य[illegible] दान[6], बास[7] साज[8], पुर[9]

(७) कअक कअ—इस प्रकार के शब्द सरल सुलभ हैं यथा—
रुड[10] मुंड[11] सड[12]

३—चयनारी—

(१) अ कअ कअ—इस कोटि में शब्द पर्याप्त हैं यथा—
अकाजु[13] अजित[14] आधीन[15] अजसु[16]

(२) कअ कअ कअ—
मूरति[17] सुगति[18] कमल[19], बचन[20] चरण[21], नगर[22],
कपाल[23] सपथ[24]

(३) कअ कअ अ—इस वर्ग में कुछ शब्द उपलब्ध हैं यथा—
[illegible]हेउ[25] =दहेज, सुहाइ[26] सुभाऊ[27]

(४) कअ अ कअ—इस कोटि की शब्दावली सीमित है यथा—
भुआल[28] =भूपाल, कुँअरि[29] कुँअर[30]

(५) अ कअ अ—इस वर्ग के शब्द अत्यल्प मिलते हैं यथा—
अमिअ[31] =अमृत अतिशै[32] [illegible] उपाई[33] =उपाय

१–रा० कि० २।१८, २–जा० म० १४०।२ ३–बरव रा० २२।१, ४–जा० म० छं० ५।१ ५–रा० मु० १३।१४ ६–रा० अयो० १९।१५ ७–जा० म० १३९।१ ८–जा० म० १४४।२ ९–रा० अर० १३।२३ १०–रा० अयो० ३११।५ ११ रा० अर० १।८ १२–रा० लं० ८८।२१ १३–रा० लं० ८८।१९ १४–रा० लं० ८३।६ १५–रा० अयो० २२ १५ १६–रा० लं० ११०।१२ १७–रा० अयो० ३३।६, १८–रा अयो० ३३।११ १९–जा० म० २०।१, २०–रा बा० २४।१७ २१ रा० कि० १७।३ २२–रा० बा० १।२०, २३–रा० बा० ३।२३ २४–रा० कि० १६।२१, २५–रा० अर० २ ।२९ २६–रा० सु० १३।१८ २७–रा० सु० ५४।१३ २८–रा० अयो० १।१६ २९–रा० अयो० १।१९ ३०–रा० अयो० ३०।२। ३१—पा० म० १।१२ ३२–रा० बा० ३५०।३ ३३–रा० बा० ८।१४ ३४–बरव रा० ३६।२ ३५–रा० मु० ४१।१

(६) अक क अ क अ—इस वर्ग के शब्दों की मात्रा पर्याप्त है यथा—
अन्तर[1], अम्बर[2], अगार[3], अगद[4]

(७) क अ क क अ क अ – इस ध्वनि क्रम के शब्दों का अभाव नहीं है, यथा—
सकर[5], पकज[6], सकुल[7]

(८) अ क अ क क अ—इस कोटि के शब्द सरल सुलभ नहीं हैं, यथा—
अस त[8], असका[9]

(९) क क अ क अ क क अ—इस वर्ग के शब्द अत्यल्प हैं, यथा—
प्रसग[10], प्रचड[11]

(१०) क अ क अ क क अ—इस ध्वनि क्रम के शब्द भी अधिक मात्रा में नहीं हैं, यथा—
कुसग[12], पतग[13], तरग[14], तिपग[15], ताटक[16]

४—चतुरक्षरी शब्द

(१) अ क अ क अ क अ—इस कोटि के शब्द यथेष्ठ मात्रा में प्राप्त हैं, यथा
अनुरूप[17], अवगुन[18], अनामय[19]
अबिबेका[20] =अविवेक, आचरज[21] =आश्चर्य,
उपबास[22]

(२) अ क अ अ क अ—इस कोटि में शब्द अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं, यथा—
अँधियार[23] उताइल[24] =उतावला

(३) क अ क अ क अ क अ—इस कोटि की शब्दावली अच्छी सख्या में है, यथा—
मनोहर[25], सरासन[26]

१—रा० सु० ५८।१२, २—रा० अ० ११७।१२, ३—रा० सु० १२।१५, ४—रा० ल० १९।७ ५—रा० कि० १।८ ६—रा० बा० १७।१९, ७—रा० ल० १२१।२०, ८—रा० उ० १३०।३०, ९—रा० बा० १२।१५ १०—रा० बा० १०।३२, ११—रा० अ० ८०।१५, १२—रा० कि० १५।३२, १३—रा० कि० १५।३०, १४—रा० उ० ३।३० १५—रा० ल० १३।१२ १६—रा० ल० १।१७ १७—पा० म० १४।२ १८—रा० कि० ९।१२ १९—रा० ल० ११०।११, २०—रा० बा० १५।४, २१-रा० अयो० ३८।८ २२—बरवै रा० ५२।१ २३—बरवै रा० ३९।२ २४ रा० अ० २९।८९ २५—रा० बा० ३५५।२ २६—जा० म० ६१।१।

(४) क अ क अ क अ क अ—इस कोटि के शब्द अत्यल्प हैं यथा—
मंदोदरी[1]

(५) क अ क अ क अ क क अ—
मकरंदा[2] हनुमंत[3] जामवंत[4] भगवंत[5]

(६) अ क अ क क अ क अ—इस कोटि के अत्यल्प शब्द हैं यथा—
अमंगल[6]

५—पंचमाक्षरी शब्द—

(१) अ क अ क अ क अ क अ—इस कोटि के शब्द अधिक नहीं हैं यथा—
अपनपन जमरावति[8] अमरावलि[9]

(२) क अ क अ क अ क अ क अ—इस वर्ग के शब्द अधिक नहीं प्रयुक्त हुए हैं यथा—
कठिनपन[10] सचराचर[11] बरदायक[12] परसपर[13], सुखदायक[14]

(३) क अ क अ क अ क क अ क अ—इस कोटि के शब्दों का अधिक प्रयोग नहीं मिलता यथा—
दसकंदर[15] रघुनंदन[16]

पाँच से अधिक अक्षरों वाले शब्द आलोच्य भाषा में बहुत ही कम हैं और जो हैं भी वे सामासिक हैं, यथा—

करुणानिधान[17], मंगलायतन[18]

तुलसी की अवधी रचनाओं में द्वयक्षरी तथा त्र्यक्षरी शब्दों की बहुलता है। चतुरक्षरी शब्द भी पर्याप्त संख्या में मिल जाते हैं। किन्तु द्वयक्षरी तथा त्र्यक्षरी शब्दों का अपेक्षा कम। पंचमाक्षरी शब्दों का प्रयोग अत्यल्प है।

१–रा० लं० ८।१३ २–रा० उ० २३।८ ३–रा० सु० ८।७ ४–रा० लं० १।१०, ५–रा० उ० १९।२८, ६–रा० बा० १०।३ ७–जा० म० ५२।२ ८–रा० उ० २७।१० ९–रा० बा० १६।३, १०–जा० म० ४८।२, ११–रा० कि० ३।१९ १२–रा० बा० २५।१८, १३–रा० अयो० २४।६, १४–रा० अयो० २१।८ १५–रा० सु० ५५।५ १६–जा० म० २८।२ १७–रा० बा० १८।१४ १८–रा० बा० ३६१।२८।

३ शब्द-रचना-विधान

३०—आलोच्य सामग्री मे, रचना की दृष्टि से, सुलभ शब्दावली के दो स्रोत हैं—

१—धातु—ऐसे शब्द जिकी रचना धातु के व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से होती है अर्थात वे शब्द जिनकी प्रकृति क्रिया धातु मे हो, यथा—

चलन[1] मिलन[1], बठन[1] देखन[1] कहन[1], मारन[1] आदि शब्दों की शब्द—प्रकृतियाँ क्रमश चल मिल बठ देख कह, मार, आदि धातुयें हैं।

२—अधातु (रूढ शब्द)—ऐसे शब्द जिनकी रचना अधातु (रूढ शब्द) में व्युत्पादक प्रत्ययो के योग से हो अर्थात वे शब्द जिनकी प्रकृति धात्वितर रूप मे दृष्टगत होती है। इनकी रचना रूढ शब्दो पर आधारित है यथा—

लोहारिन, अहीरिन[1], तँबोलिन[1], दरजिनि[1], आपन[11], लरिकाई[11], ढिठाई[11], आदि शब्दों की प्रकृतियाँ क्रमश लोहार अहीर, बोली, दरजी, आप, लरिका (लडका), ढीठ, आदि धात्वितर रूप (रूढ शब्द) मे हैं। उपर्युक्त शब्द प्रकृतियो स निर्मित शब्द समूह का अध्ययन दो प्रकार से कर सकते हैं—

१–इतिहास के आधार पर २–रचना के आधार पर

यदि एतिहासिक दृष्टि स आलोच्य शब्दावली का वर्गीकरण करना चाहें तो तत्सम, अर्द्ध तत्सम तद्भव तथा विदेशी (अरबी फारसी) आदि वर्गों मे विभाजित कर सकते हैं यथा—

तत्सम शब्द—

तुलसी ने एक ओर जहाँ तत्सम रूपो को श्लोकों एव स्तुतो में ज्यों का त्यों

ग्रहण करके देववाणी के प्रति अपनी पौराणिक परम्परागत श्रद्धा को व्यक्त करते हुए संस्कृत के पक्षपातियों को संतुष्ट किया तो दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग की जन भाषा-मोह को अक्षुण्ण रख अपने आराध्य राम के यशोगान को जन जीवन तक पहुँचा कर अपने समन्वयात्मक दृष्टिकोण का परिचय दिया है तत्सम शब्द श्लोकों तथा स्तुता के अतिरिक्त फुटकर रूप में भी पर्याप्त मात्रा में प्रयुक्त हैं। अवधी की अन्य रचनाओं की अपेक्षा मानस में तत्सम शब्दों का अनुपात कहीं अधिक है, यथा—

ब्रह्म[1] ऋद्धि[2] श्रुति[3], भ्राता[4], प्राक्तन[5] प्रथम[6] धर्म[7], मर्दु[8], सिद्धि[9]

तत्सम सामासिक पद भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त हैं। इस प्रकार के पदों का प्रयोग मानस में व्यापक रूप से मिलता है। बरवै रामायण, रामलला नहछू में ऐसे पद अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हैं यथा—

देवलोक[10] मंगलोचन[11], ऋद्धि सिद्ध[12] मोदमय[13] नृप समाज[14] गिरिग्रह[15]

अर्ध तत्सम शब्द—तत्सम शब्दों में किंचित ध्वन्यात्मक परिवर्तन होने से उन्हें हम अर्द्धतत्सम कोटि में रखते हैं। आलोच्य सामग्री में इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में मिलता है, यथा—

मुकुता[16] परम[17] भरतव[18], करम[19] रतन[20] भगति[21] दिसि[22] मुरछा[23]

तद्भव शब्द—

तद्भव शब्दों में ही प्रत्येक भाषा के स्वभाविक रूप के दर्शन होते हैं। भाषा को सरल एवं सुबोध बनाने के लिए तुलसी ने तद्भव शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है। अतएव आलोच्य सामग्री में तद्भव शब्दों का बाहुल्य है यथा—

आखर[24] देह[25], बाउरि[26] भिखारि[27], सभी[28] जीभ[29] घरी[30], दहज[31]

१–रा० कि० ६।३१ २–रा० ल० न० २०।४ ३–रा० कि० ७।१२ ४–रा० अर० ५।२६ ५–रा० अयो० ३१८।२ ६–जा० म० ६९।१ ७–जा० म० २३।२ ८–पा० म० ३०।२ ९–रा० ल० न० १४।२ १० रा० ल० न० २।३ ११–रा० ल० न० ८।२ १२ रा० ल० न० २०।४ १३–पा० म० छ० ९।१ १४–जा० म० ८९।२ १५–पा० म० ८।२ १६–जा० म० ५३।२ १७–रा० बा० ३।१८ १८–रा० बा० ९२।२ १९–रा० ल० न० २।४ २०–पा० म० ४७।२ २१–रा० कि० १३।१४ २२–रा० उ० २८।२५ २३–रा० अर० ४३।१७ २४–बरवै रा० ४९।२ २५–रा० ल० ९६।९ २६–पा० म० १७।१ २७–रा० कि० १६।२२ २८–जा० म० ८५।१ २९–बरवै रा० २७।२ ३०–पा० म० ७४।१ ३१–पा० म० छ० १५।३

विदेशी शब्दावली—अन्य रचनाओं की अपेक्षा 'मानस' में विदेशी (अरबी, फारसी) शब्दों का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग हुआ है, यथा—

गरीब[1], बाज[2], (अनुस्वार छंदानुरोध से), फौज[3], साहिब[4], निवाज[5], बजाज[6], सेराफ[7], गुमान[8] हजार[9], बाजार[1], दर[11] ।

(२) रचना के आधार पर—

प्रस्तुत अध्याय में सांकालिक दृष्टि से शब्द रचना विधान पर विस्तार पूर्वक विचार किया जा रहा है। रचना के आधार पर शब्दावली को प्रमुखतः तीन वर्गों में विभाजित कर अध्ययन किया जा सकता है—

(१) मूल (२) यौगिक और (३) सामासिक

२ १ मूल

वह प्रकृति तत्व जो अपना ध्वन्यात्मक रूप परिवर्तित किए बिना (बिना प्रत्यय-योग के) स्वतन्त्र शब्द के रूप में भाषा में स्थान ग्रहण करता है और अर्थ की दृष्टि से जिसका विभाजन पुनः सम्भव न हो। यह भाषा की अविभाज्य इकाई होती है। प्रत्यय रहित होने के कारण प्रकृति और मूल शब्द एक रूप होते हैं। केवल प्रकृति ही अभिप्राय द्योतन में पूर्ण समर्थ होती है। शब्द प्रकृति (मूल शब्द) धातु और अधातु रूप में हो सकती है। किंतु आलोच्य भाषा में कितने ही विदेशी (अरबी, फारसी) तथा प्रादेशिक भाषाओं के शब्द आ गए हैं। जिनके कारण धातु-निर्णय में दुरूहता उत्पन्न हो गई है। ऐसे मूल शब्द जो धातु रूप में दृष्टिगोचर होते हैं, अत्यल्प हैं, यथा—

पठ[12], मार[13] ।

ऐसे मूल शब्द जो अधातु रूप में दृष्टिगोचर होते हैं अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं और संज्ञा, सर्वनाम विशेषण, अव्यय आदि शब्दावली के अधिकांश भाग का निर्माण करते हैं। रचना की दृष्टि से तद्भव तथा अन्य इतर शब्दों को अधातुज मानकर मूल शब्द के अन्तर्गत परिगणित किया गया है यथा—

छाँह[14] आग[15], काम[16] साप[17], नाम[18] दिन[19], मैं[20], तुम्ह[21] ।

१–रा० बा० २५।३ २–रा० अर० ११।१२ ३–रा० लं० ७६।२४ ४–रा० बा० १३।१४ ५–रा० बा० १३।१३ ६–रा० उ० २८।२१ ७–रा० उ० २८।२२ ८–रा० लं० नं० १३।४ ९–रा० लं० नं० १६।४ १०–रा० उ० २८।१७ ११–रा० लं० ११५।११ १२–रा० कि० ६।९ १३–रा० लं० ५३।११ १४ बरवै रा० १८।२ १५–बरवै रा० २३।२ १६–पा० म० २९।१ १७–रा० कि० ६।२५ १८–बरवै रा० ६६।१ १९–रा० अयो० ३२४।१ २०–रा० कि० २।१९ २१–पा० म० १५।१

३ २—यौगिक शब्द

यौगिक शब्द की सरचना प्रकृति एव प्रत्यय के योग से होती है । धातुओं और मूल शब्दों में व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से नवीन-नवीन अर्थों के द्योतक शब्दों की सरचना होती है । यह व्युत्पत्ति विचार दो दृष्टियों से सम्भव है— (१) ऐतिहासिक दृष्टि से तथा (२) वर्णनात्मक दृष्टि से । प्रस्तुत अध्याय म केवल वर्णनात्मक दृष्टि स विचार किया जा रहा है ।

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं—(१) व्याकरणिक एव (२) व्युत्पादक । व्याकरणिक प्रत्ययों का विवेचन पद विचार के अन्तर्गत होगा । यहाँ केवल व्युत्पादक प्रत्ययों पर विचार प्रस्तुत है । (२) व्युत्पादक प्रत्यय वे हैं जो धातु अथवा प्रातिपदिक के पूर्व अथवा परभाग म जुड़कर यौगिक शब्दों की रचना करते हैं । कभी कभी शब्द के पूर्व तथा पर दोनों ही भागों म ये प्रत्यय जुड़कर नए नए शब्दों का निर्माण करते हैं ।

ये व्युत्पादक प्रत्यय दो प्रकार के हैं—

(१) पूर्व प्रत्यय जिसे संस्कृत म उपसर्ग कहते हैं ।

(२) पर प्रत्यय—ये दो प्रकार के होते हैं कृत तथा तद्धित ।

प्रत्ययों का योग धातु रूप तथा अधातु रूप (रूढ़ शब्द) दोनों प्रकार की प्रकृतियों मे होता है । आलोच्य सामग्री म प्रत्ययों का सर्वाधिक योग अधातु रूपों (रूढ़ शब्दों) मे हुआ है ।

(१) पूर्व प्रत्यय (उपसर्ग)—

तुलसी की अवधी म ऐसे अनेक शब्द सुलभ हैं जिनकी सरचना पूर्व प्रत्ययों के योग से हुई है । आलोच्य भाषा के शब्दों को मुख्यत दो वर्गों म रख सकते हैं—

(अ) ऐसे शब्द जिनम ऐतिहासिक दृष्टि स पूर्व प्रत्यय और प्रकृति स्पष्ट है । शब्द प्रकृति तथा पूर्व प्रत्यय इस प्रकार घुल मिल गए हैं कि उन्ह पूर्व प्रत्यय रूप म पृथक करना असम्भव है—

निचोल[1] उदास[2] अनख[3] अखिल, अघम[5] अधिकार[6] आसीत निसर (निसरी[8]) ।

(ब) ऐसे शब्द जिनमे तात्कालिक दृष्टि स भी पूर्व प्रत्यय और प्रकृति स्पष्ट हैं यथा—

१–पा० म० ११।१ २–पा० म० २८।२ ३–रा० बा० २८।१ ४–रा० उ० २९।१५ ५–रा० बा० १८।४ ६–रा० सु० ५९।१२ ७–रा० कि० १३।१२ ८–रा० क ६।१४

।नुराग[1], अनुग्रह[2], कुमति[3], कुसगति[4], कुमोग[5], कुमुख[6], कुमग ,

तुलसी की अवधी म रचना की दृष्टि से पूव प्रत्ययो को तीन वर्गों मे विभाजित किया गया है—[7]

(अ) वे पूव प्रत्यय जो सज्ञा, विशेषण अथवा धातु से पूव जुडकर तदवर्गीय शब्दावली व्युत्पन्न करते हैं।

(ब) वे पूव प्रत्यय जो सज्ञा, विशेषण या धातु के साथ जुडकर भिन्न वर्गीय शब्दावली की रचना करते है।

(स) वे पूव प्रत्यय जो उपयुक्त दोनो वर्गों की शब्दावली का निर्माण करते हैं।

पूव प्रत्ययो का यौगिक विधान एव व्युत्पन्न शब्दावली अवधी मे प्रत्ययो का सयोग सज्ञा, विशेषण, क्रिया विशेषण तथा धातुओ के साथ होता है और उनके योग से सज्ञा, विशेषण क्रिया विशेषण आदि शब्दावली व्युत्पन्न होती है। इसका सागोपाग विवेचन इस प्रकार है—

(१) पूव प्रत्यय	+	सज्ञा	—	सज्ञा	अथ
अ–		विवेक		अविवेक[8]	हीनता
अ–		दाया		अदाया[9]	"
अ–		सौच		असौच[9]	"
अ–		सुभ		असुभ[11]	"
अ–		गुन		अगुन[12]	"
अ–		सरन		असरन[13]	"
अ–		जाचक		अजाचक[14]	"
आ–		तप		आतप[15]	"
अप–		मान माना		अपमाना[16]	"
अप–		बाद		अपवाद[1]	"
अव–		आराधन		अवराधन[18]	"
अव–		गुन		अवगुन[19]	"

१–रा० बा० ११।२२ २–रा० बा० ११३ ३–रा० अयो० ७०।२ ४–रा० बा० ३।१९ ५–रा० उ० १४।२४ ६–रा० अयो० ४३।१३ ७–रा० अयो० ३१५।१० ८–रा० ल० १६।६ ९–रा० ल० १६।६ १०–रा० ल० १६।६ ११ रा० अयो० ३८।१६ १२–रा० बा० ५।५ १३–रा० उ० १८।५ १४–रा० उ० १२।१८ १५–रा० कि० ११२६ १६—रा० सु० १०।१ १७–पा० म० ४।१ १८—पा० म० २०।२ १९–रा० उ० १।११

अवि–	चल	अविचल[१]	हीनता
अन–	हित	अनहित[२]	"
अन–	मल	अनमल[३]	,
अनु–	राग	अनुराग[४]	श्रेष्ठता
अनु–	ग्रह	अनुग्रह[५]	
अनु–	सासन	अनुसासन[६]	अभाव
अनु–	मान	अनुमान[७]	
क–	पूत	कपूत[८]	,
कु–	मग	कुमग[९]	"
कु–	जुगुति	कुजुगुति[१०]	,
कु–	मित्र	कुमित्र[११]	,
कु–	कवि	कुकवि[१२]	,
स–	गुन	सगुन[१३]	श्रेष्ठता
स–	रोष	सरोष[१४]	हीनता
सु–	बानी	सुबानी[१५]	श्रेष्ठता
सु–	तीरथ	सुतीरथ[१६]	"
सु–	कृपा	सुकृपा[१७]	
सु–	पथ	सुपथ[१८]	
सु–	राज	सुराज[१९]	
सु–	रुचि	सुरुचि[२०]	"
सु–	धरम	सुधरम[२१]	,
सु–	लोचनि	सुलोचनि[२२]	
सु–	बास	सुबास[२३]	
बि–	बुध	बिबुध[२४] (समासवत प्रयोग)	
वि–	योग	वियोग वियोगी[२५]	

१—रा० लं० १०७।१५ २—रा० अयो० १९।४ ३—रा० अयो० १६।१४ ४—बरव रा० ६३।२ ५—जा० म० २५।२ ६—रा० उ० १७।१४ ७—बरव रा० २।१ ८—रा० कि० १५।२७, ९—रा० अयो० ३११।१०, १०—पा० म० ६६।२ ११—रा० कि० ७।१६ १२—रा० अर १०।९, १३—रा० उ० ९।२३ १४—पा० म० ५१।२, १५—रा० अयो० ३२१।७ १६—रा० अयो० ६।२ १७—रा० सु० १४।१८ १८ रा० कि० ७।७ १९—रा० कि० १८।६ २०—रा० बा० १।२२ २१—रा० अयो० ३१८।१४ २२—रा० अर० २५।२० २३—रा० बा० १।२२ २४—रा० अयो० १२।१० २५—बरव रा० ८०।१

वि–	मुक्त	विमुक्त[१]	श्रेष्ठता
बि–	राग	बिराग[२]	"
दुर–	आसा	दुरासा[३]	हीनता
दुर–	वाद	दुर्वाद[४]	"
परि–	तोष	परितोष[५]	"
परि–	जन	परिजन[६]	परायाभाव
परि–	हास	परिहास[७]	हीनता
प्र–	बोधु	प्रबोधु[८]	श्रेष्ठता
प्र–	सग	प्रसग[९]	क्रम
प्र–	मोद	प्रमोद[१०]	श्रेष्ठता
सद–	गुर	सदगुर[११]	"
सद–	गुन	सदगुन[१२]	"
सत–	धर्म	सद्धम[१३]	"
सत–	कर्मा	सतकर्मा[१४]	श्रेष्ठता
उ–	सास	उसास[१५]	"
उप–	बन	उपबन[१६]	स्थान-वाचक
नि–	बास	निबास निवास[१७]	"
निर्–	आदर	निरादर[१८]	"
अन–	अहिवात	अनअहिवात-अनअहिवातु[१९]	
(२) पूर्वप्रत्यय +	संज्ञा	विशेषण	अर्थ
अ–	पार	अपार[२०]	श्रेष्ठता
अ–	गुन	अगुन[२१]	हीनता
अ–	मान	अमान[२२]	"
अ–	नाम	अनाम[२३]	अभाव

१—रा० उ० १५।९ २—बरवं० रा० ४८।१, ३—रा० बा० २४, ४—रा० क० १०८।३० ५–पा० म० २८।१ ६–पा० म० ३०।२, ७—रा० अयो० ३२।१०, ८—रा० अयो० १८।१८, ९—रा० अयो० २२।११ १०—रा० बा० ३५।१६ ११—रा० कि० १७।१९, १२—रा० उ० २।४० १३–रा० कि० १५।२८, १४–रा० अर० २१।१६, १५—रा० अयो० ०।१९ १६—रा० उ० २६।८, १७–रा० अयो० १२।११ १८—रा० ० १४।१८ १९—रा० अर० २५।१८, २०–रा० बा० २३।१८ २१—पा० म० ४९।२, २२—पा० म० ६०।२ २३–ग० क० ११०।११

अ-	साढ	असाढ[1]	श्रेष्ठता
अभि-	मत	अभिमत[2]	,,
स-	गुन	सगुन[3]	,,
स-	बिनय	सबिनय[4]	,,
स-	नेमा	सनेमा[5]	
स-	नाथा (-नाथ)	सनाथा[6]	,,
स-	जल	सजल[7]	,,
स-	भीत	सभीत[8]	,,
स-	रस	सरस[9]	,,
अनु-	रूप	अनुरूप[10]	,,
प्र-	बल	प्रबल[11]	श्रेष्ठता
दुर-	लभ	दुर्लभ[12]	हीनता
कु-	चाली (चालि)	कुचाली[13]	
नि-	रस	निरस[14]	
नि-	काम	निकाम[15]	
निर-	दभ	निदभ[16]	
निर-	गुन	निर्गुन[17]	
निर-	लेप	निरलेप[18]	
सु-	चाली (चालि)	सुचाली[19]	श्रेष्ठता
सु-	फल	सुफल[20]	,,
बि-	बाकी	बिबाकी[21]	
बि-	कल	बिकल[22]	अभाव
बि-	सेष	बिसेष बिसेषु[23]	श्रेष्ठता
बि-	रथ	बिरथ[24]	हीनता

१—रा० ल० १११।२९ २—रा० अयो० ५।८ ३—रा० अर० १३।२६, ४ रा० अयो० ३११।८ ५—रा० अयो० ३२३।१ ६—रा० लं० १ ८।१५, ७—रा० उ० १७।२० ८—जा म० ३४।१ ९—रा० अर० ८।७ १०—रा० अर० १७।१७ ११—रा० ल० १०९।११ १२—रा० उ० २५।८, १३—रा० अयो० १४।८, १४—रा० बा० २।१० १५—रा० अर० ९।५ १६—रा० उ० २१।१३ १७—रा० उ० १३।१ १८—रा० अयो० ३१७।१५ १९—रा० अयो० ३१९।१० २०—रा० कि० ९।६ २१—रा० बा० २४।८ २२—रा० कि० ८।८ २ पा० म० ८४।२, २४—रा० सु० १०।१०

(३) पूर्व प्रत्यय +	संज्ञा	क्रिया विशेषण
अ—	भय	अभय[1]
अनु—	दिन	अनुदिन[2]
स—	भय	सभय[3]
स—	कोप	सकोप[4]
स—	प्रेम	सप्रेम[5]
स—	प्रीति	सप्रीति[6]
स—	जग	सजग[7]
कु—	भाँति	कुभाँति[8]
(४) पूर्व प्रत्यय +	विशेषण	विशेषण
अ—	लौकिक	अलौकिक[9]
अ—	साध्य	असाध्य[10]
अ—	विरल	अविरल[11]
अन—	वद्य	अनवद्य[12]
वि—	मूढ	विमूढ[13]
(५) पूर्व प्रत्यय +	विशेषण	संज्ञा
अ—	मृत	अमृत[14]
(६) पूर्व प्रत्यय +	धातु	विशेषण
अ—	चल	अचल[15]
अन—	मिल	अनमिल[16]
स—	जग	सजग[17]
सु—	जान	सुजान[18]
दु—	सह	दुसह[19]

अस्तु तुलसी की अवधी मे प्रमुख पूर्व प्रत्यय अ—, आ— अन—, अनु—, अव— अप—, अभि— स— सु—, नि— निर—, क—, कु—, प्र—, दुर— वि—, सद—, उप—आदि हैं।

१—रा० कि० २०। २—पा० म० ९।२, ३—रा० अर० २।२१, ४—रा० सु० ५७।२७, ५—रा० बा० ३६१।२६ ६—रा० बा० ४।२६ ७—रा० अयो० २।१९ ८—रा० अयो० ३९।१५, ९—रा० अयो० २।२५ १०—रा० अयो० ३४।१७, ११—रा० अर० १३।२१ १२—रा० ल० १११।२९, १३—रा० अर० १।३ १४—रा० अयो० ४२।६ १५—रा० ल० ७।२० १६—रा० बा० १५।११ १७ रा० अयो० २२।१९ १८—जा० म० छं० ३।४, १९—रा० कि० १।२६

(२) पर प्रत्यय—जो प्रत्यय धातु तथा अधातु (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि) के अन्त में जुड़कर तत्सम्बन्धी नवीन शब्दावली का निर्माण करते हैं, पर प्रत्यय कहलाते हैं। कतिपय परप्रत्यय धातु में संलग्न होकर संज्ञा, विशेषण आदि की रचना करते हैं, यथा—

लड़+आई=लड़ाई चल+अत=चलत आदि। कुछ प्रत्यय रूढ़ शब्दों में संयुक्त होकर संज्ञा विशेषण क्रिया विशेषण आदि का निर्माण करते हैं। अतः स्पष्ट है कि आलोच्य भाषा में दो प्रकार के परप्रत्यय प्रयुक्त हुए हैं—

(१) कृत—जो धातुओं में संयुक्त होकर संज्ञा विशेषण आदि का निर्माण करते हैं।

(२) तद्धित—जो रूढ़ शब्दों में संयुक्त होकर अनुपयोगी संज्ञा विशेषण धातु आदि को व्युत्पन्न करते हैं जैसे—चतुर+आई=चतुराई भीख+आरी=भिखारी, धन+ई=धनी आदि।

(अ) कृत परप्रत्यय-आलोच्य भाषा में प्रयुक्त परप्रत्यय (कृत) इस प्रकार हैं-

(१) अन — न के योग से संज्ञाओं की रचना होती है–

धातु	+पर प्रत्यय	क्रियार्थक संज्ञा
चल	–अन	चलन[1]
रह्	–अन	रहन[2]
मिल	–अन	मिलन[3]
कर	–अन	करन[4]
खेल	–अन	खेलन[5]
कह	–अन	कहन[6]
पाल	–अन	पालन[7]
चेत	–अन	चेतन[8]
बठ	–अन	बठन[9]
देख	–अन	देखन[10]
दल	–अन	दलन[11]
छाड़ (– छोड़)	–अन	छाड़न[12]

१ रा० अयो ३१८।१२ २–रा उ० १९।६ ३–रा० उ० १२१।२६ ४–रा० ल० ७।३ ५—पा० म० ७।१७ ६–रा० उ० १७।६ ७–रा० ल० १५।१२, –रा० बा० ६।१९, ९—रा० अर० २।९ १०—रा ल० १०८।१९ ११ रा० यो० ३२६।१२ १२—रा० ल० २८।१९

हर्	–अन	हरन[1]
मार्	–अन	मारन[2]
ले	–न	लेन[3]

(२) अन प्रत्यय के योग से संज्ञा का निर्माण होता है, यथा—

धातु +	परप्रत्यय	संज्ञा
सुमिर	–अन	सुमिरन[4]
लग्	–अन	लगन[5]
राख	–अन	राखन[6]
बिनास्	–अन	बिनासन[7]
बँध (-बाँध)	–अन	बधन[8]
भज्	–अन	भजन[9]

(३) आवन प्रत्यय के योग से संज्ञाओं का निर्माण होता है, यथा—

धातु +	परप्रत्यय	संज्ञा
सोह	–आवन	सोहावन[10]
देख	–आवन	देखावन[11]
सिख	–आवन	सिखावन[12]
बचा	–आवन	बचावन[13]

(४) अना – ना प्रत्यय के योग से संज्ञा शब्द बने हैं यथा—

धातु +	परप्रत्यय	संज्ञा
मर्	–अना	मरना[14]
सराह्	–अना	सराहना[15]
चर	–अना	चरना[16]
रच्	–अना	रचना[17]
ताड	–अना	ताडना[18]
ले	–ना	लेना[19]
दे	–ना	देना[20]
जा	–ना	जाना[21]

१–रा० अर० १०।२८, २–रा० सु० १०।१३, ३–जा० म० ८।२, ४–बरवै रा० ६०।२, ५–रा० अयो० १८।१२ ६–रा० अर० २५।९ ७–रा० उ० १४।५ ८–रा० उ० १२१।३३, ९–रा० अयो० ४।१४, १०–जा० म० ८६।१ ११–जा० म० छ० ६।२ १२–रा० उ० ७।१५ १३–रा० सु० ५८।२० १४–रा० अर० २६।९, १५–पा० म० १५।२, १६–रा० कि० २।९ १७–रा० कि० २।३९, १८–रा० [illegible]० ५९।१२ १९–रा० सु० ३९।१३, २०–रा० उ० ३९।१३, २१–रा० बा० २२।५ ।

(५) अनी—नी—आनी—अनि—नि के योग से संज्ञायें बनती हैं यथा

धातु	+	परप्रत्यय	संज्ञा
कर		–अनी	करनी[1]
नव		–नि	नवनि[2]
कह्		–आनी	कहानी[3]
मिल		–अनि	मिलनि[4]
रह्		–अनि	रहनि[5]
पछिता		–नि	पछितानि[6]
बोल		–अनि	बोलनि[7]
बिलोक		–अनि	बिलोकनि[8]
कर		–अनि	करनि[9]
चल		–नी	चलनी[10]
मिल		–नी	मिलनी[11]
हो		–नी	होनी[12]

(६) आ —ना,—ता परप्रत्ययों के योग से कृदन्त संज्ञायें बनती हैं यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	कृदन्त संज्ञा
देख		आ	देखा[13]
मार		–आ	मारा[14]
सीख्		–आ	सीखा[15]
जा		–ना	जाना[16]
आ		–ता	आता[17]
जा		–ता	जाता[18]

(७) अन तथा —अन परप्रत्ययों के योग से कृत्त वाचक संज्ञायें बनती हैं यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	कृत्त वाचक संज्ञायें
मज		–अन	मजन[19]
रज्		–अन	रजन[20]

१–रा० अर० २२।६ २–रा० अर० २५।१३ ३–रा० बा० २१।१३ ४–रा० बा० ४२।१७ ५–रा० अयो० ३१४।६ ६–रा० अयो० १०।१५ ७–रा० उ० १९।७ ८–रा० उ० १९।७ ९–जा० म० २७।२ १०–रा० उ० १९।७ ११–रा० उ० २९।८ १२–रा० बा० ३।६ १३–रा० ल० ८८।१९ १४–रा० कि० ९।२० १५–रा० अयो० ४७।६ १६–रा० सु० २२।५ १७–रा० उ० २०।६, १८–रा० उ० २० ६ १९–रा० उ० ३०।१९ २०–रा० ल० ११३।३७ ।

हर्	–अन	हरन[1]
दल	–अन	दलन[2]
तार	–अन	तारन[3]
खड	–अन	खडन[4]
दह्	–अन	दहन[5]
हर	–अना	हरना[6]
पाल	–अक	पालक[7]
पोष्	–अक	पोषक[8]
निंद (निंदा)	–अक	निंदक[9]
सोष	–अक	सोषक[10]

(८) वार-वारा, हार-हारा प्रत्ययों के योग से निर्मित कर्त्तृ वाचक संज्ञायें बनती हैं, यथा—

धातु +	परप्रत्यय	कर्त्तृ वाचक संज्ञायें
रख (+अ)	–वार	रखवार[11]
रख (+अ)	–वारा	रखवारा[12]
राख (+अनि)	–हार	राखनिहार[13]
निबाह (+अनि)	–हारा	निबाहनिहारा[14]

(९) एरा के योग से भी अत्यल्प शब्द संरचित हैं यथा—

धातु +	परप्रत्यय	संज्ञा
बस	–एरा	बसेरा[15]

(१०) अत—इत के योग से कृदन्त विशेषणों की रचना हुई है यथा—

धातु +	परप्रत्यय	विशेषण (कृदन्त)
सोह	–अत	सोहत[16]
निरख	–अत	निरखत[17]
हँस	–अत	हँसत[18]
चल	–अत	चलत[19]

१—रा० अर० २९।३ २—पा० म० १९।२ ३—रा० ल० १ १।३, ४—रा० ल० १११।४१, ५—रा बा० १।८ ६—रा० बा० २।६ ७—रा० ल० ७।८ ८—रा० बा० ७।३१, ९—रा० उ० १२१। ७ १०—रा० बा० ८।३१ ११—रा० बा० ८४।२२, १२—रा० सु० ५३।१३ १३ जा० म २५।२ १४—रा० अयो० २४।८, १५—रा० ल० १० ५।१८ १६—बरव रा० १७ २ १७—बरवै रा० १२।१, १८—जा० म० १०९।१ १९—रा० सु० ६।१२ ।

(ब) तद्धित परप्रत्यय—आलोच्य भाषा की शब्दावली में निम्न प्रत्यय निकाले जा सकते हैं—

(१) आई ई इ प्रत्ययों के योग से संज्ञाएँ संरचित हैं यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	संज्ञा
लोग	—आई	लोगाई[1]
तरुण	—ई	तरुणी, तरुना[2]
निसिचर	—ई	निसिचरी[3]

(२) इनी–नी–नि–इन–इनि प्रत्ययों के योग से संज्ञाएं बनी हैं यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	संज्ञा
कुमुद	—इनी	कुमुदिनी[4]
चाँद	—नी	चाँदनी[5]
तवाली (-तबालि)	—नि	तवालिनि[6]
पातकी	—नि	पातकिनि[7]
दरजी (दरजि)	—नि	दरजिनि[8]
मोची (-मोचि)	—नि	मोचिनि[9]
सेवक	—नि	सेवकनि[10]
नाऊ (-नाउ)	—नि	नाउनि[11]
साँप	—इन	साँपिन[12]
अहीर	—इनि	अहीरिनि[13]
लोहार	—इनि	लोहारिनि[14]

(३) '–निया के योग से भी कतिपय शब्द बने हैं, यथा—

माली (मलि)	—निया	मलिनिया[15]
नाऊ (नउ)	—निया	नउनिया[16]

(४) –इया के योग से स्त्री० शब्दों का निर्माण यथा—

अनुहार	—इया	अनुहरिया[17]
उजिआर	—इया	उजिअरिया[18]

१—रा० अयो० ११।६ २—रा० बा० ११।३ ३—रा० लं० १०७।६ ४—रा० उ० ९।२९ ५—बरव रा० ४१।१ ६—रा० न० न० ६।१, ७ रा० अयो० २२।१७, ८—रा० ल० न० ६।३, ९—रा० लं० न० ७।१ १०—रा० बा० २४।१७, ११—रा० ▪ न० १०।१, १२—रा० अयो० १३।१६ १३—रा० लं० न० ५।३ १४—रा० ▫ न० ५।२ १५—रा० लं० न० ७।३ १६—रा० लं० न० ८।३ १७—बरव ▫ २।२ १८—बरव रा० ३७।१ ।

(५) '–इक–क' के योग से संज्ञाएँ निर्मित हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	कर्तृवाचक संज्ञा
रस	–इक	रसिक[1]
पथ	–इक	पथिक[2]
सेवा (सेव)	–क	सेवक[3]
निंदा (निंद)	–क	निंदक[4]
वधा (वध)	–क	वधक[5]
बाधा (बाध)	–क	बाधक[6]
उपास	–क	उपासक[7]

(६) '–हारा-हारी प्रत्यय के योग से कर्तृवाचक संज्ञायें निर्मित हैं, यथा–

संज्ञा +	परप्रत्यय	कर्तृवाचक संज्ञा
श्रम	–हारी	श्रमहारी[8]
तोपनि	–हारा	तोपनिहारा[9]

(७) '—आरी पर प्रत्यय के योग से, यथा—

भीख (भिख)	–आरी	भिखारी[10]

(८) '—ई' परप्रत्यय से बनी कर्तृवाचक संज्ञायें, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	कर्तृवाचक संज्ञा अथवा विशेषण
उपकार	–ई	उपकारी[11]
नेग	–ई	नेगी[12]
अधिकार	–ई	अधिकारी[13]
गुन	–ई	गुनी[14]
बास	–ई	बासी[15]

(९) '—पन परप्रत्यय के योग से भाववाचक संज्ञायें निर्मित हुई हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	संज्ञा (भाववाचक)
कुटिल	–पन	कुटिलपन[16]
जरठ	–पनु	जरठपन जरठपनु[17]

१—रा० बा० ९।५, २—रा० उ० २९।१४, ३—रा० उ० २२।१४ ४—रा० उ० १२१।१७, ५—रा० बा० १२।८, ६—पा० म० ३२।१, ७—रा० बा० १८।५ ८—रा० सु० १।१८, ९—रा० अयो० ४१।१९ १०—रा० अर० १७।२९ ११—रा० उ० २७।१३ १२—रा० बा० ३५३।११ १३—रा० बा० ३०।८ १४—रा० उ० ७४।१० १५—रा० उ० ४।१३ १६—रा० अयो० १८।१७ १७—रा० अयो० २।१४।

संज्ञा +	परप्रत्यय	संज्ञा (भाववाचक)
बड़ा	–पन	बड़प्पन-बड़प्पनु[1]
कठोर	–पन्	कठोरपन्[2]
बाल	–पन्	बालपन[3]
सर्वनाम +	**परप्रत्यय**	**संज्ञा (भाववाचक)**
अपन	–पन्	अपनपन[4]

(१०) —ता पर प्रत्यय के योग से बनी भाववाचक संज्ञायें, यथा—

विशेषण +	परप्रत्यय	संज्ञा (भाववाचक)
श्याम	–ता	श्यामता[5]
विकल	–ता	विकलता[6]
कठिन	–ता	कठिनता[7]
विषम	–ता	विषमता[8]
सीतल	–ता	सीतलता[9]
मनोहर	–ता	मनोहरता[10]
हीन	–ता	हीनता[11]

(११) —आई पर प्रत्यय के योग से निर्मित भाववाचक संज्ञाएँ यथा—

संज्ञा । विशेषण +	परप्रत्यय	संज्ञा (भाववाचक)
सुंदर	–आई	सुंदराई[12]
भल (भला)	–आई	भलाई[13]
बड़ (बड़ा)	–आई	बड़ाई[14]
सेवक	–आई	सेवकाई[15]
तरुण (तरुन)	–आई	तरुनाई[16]
प्रभु (-ता)	–आई	प्रभुताई[17]

(१२) –ई परप्रत्यय के योग बने विशेषण इस प्रकार हैं यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	विशेषण
घन	–ई	घनी[18]

१—रा० बा० १०।१६ २—रा० अयो० ४९।५, ३—रा० बा० ३०।१९, ४—जा० म० ५८।२ ५ रा० लं० ९२। ४ ६—रा० लं० ६।१ ७—रा० अयो० ४१।२ ८—रा० उ० ? ।१८ ९—बरव रा० ३३।१ १०—जा० म० ३२।१, ११—रा० उ० ?२। १२—रा० मु० १५।२० १३—रा० बा० ७।४ १४—रा० लं० ११४।८, १५—रा० कि० ७।३२ १६—रा० अर० ५।३८ १७—रा० उ० ?।३ १८—रा० उ० ?।२ ।

संज्ञा +	परप्रत्यय	विशेषण
विजय	–ई	विजयी[1]
विनय	–ई	विनयी[2]

(१३) '–आरी' परप्रत्यय के योग से बने विशेषण, यथा—

दुख	–आरी	दुखारी[3]

(१४) '–वत' पर प्रत्यय के योग से बने विशेषण, यथा—

बिरह	–वत	बिरहवत[4]
भाग्य	–वत	भाग्यवत[5]
बल	–वत	बलवत[6]
क्रोध	–वत	क्रोधवत[7]

(१५) '–र' परप्रत्यय के योग से निर्मित विशेषण यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	विशेषण
रुचि	–र	रुचिर[8]
मुख	–र	मुखर[9]
मधु	–र	मधुर[10]

(१६) '–ऊ' तथा '–ई प्रत्यय के योग से बने विशेषण—

बजार (बाजार)	–ऊ	बजारू[11]
भार	–ई	भारी[12]
गाढ	–ई	गाढी[13]
बिचार	–ई	बिचारी[14]

(१७) '–वान के योग से बने विशेषण अत्यल्प हैं यथा—

बल	–वान	बलवान[15]

(१८) '–ऐ मी –जे अउथि' परप्रत्यय के योग से तिथिवाचक संज्ञाएँ बनती हैं, जैसे—

पाँच	–ऐ	पाँचै[16]
नौ	–मी	नौमी[17]

१–रा० उ० २५।१३, २–रा० उ० २५।१३, ३–रा० अर० २९।१२, ४–रा० उ० १२।२०, ५–रा० अर० १२।२४ ६–रा० अर० १९।१९ ७–रा० अर० २८।३३ ८–रा० उ० २७।६ ९–रा० उ० २८।५ १०–रा० लं० ५।११ ११–रा० उ० २८।१६ १२–रा० अर० २९।११ १३–रा सु० १४।१ १४–रा० सु० ७।२ १५–रा० उ० ११८।२८, १६–पा० म० ५।१ १७–रा०

दो (—दृ)	—इ	दुइ[1]
चार (—च)	—अउवि	चउवि[2]

क्रियाधार व्युत्पादक परप्रत्यय—

ये प्रत्यय संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया विशेषण शब्दों में जुड़कर नाम धातुओं का निर्माण करते हैं। —० —आ प्रत्ययों के योग से नाम धातुएँ व्युत्पन्न हुई हैं यथा—

(१)	संज्ञा +	परप्रत्यय	नाम धातु	
	उत्पन	—०	उत्पेन (उत्पेना[1])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	विरोध	—०	विरोध (विरोधि[2])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	सनमान	—०	सनमान (सनमाने)	भूतकालिक कृदन्त रूप
	गढ़	—०	गढ़ (गढ़इ[4])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	आदर	—०	आदर (आदरी)	भूतकालिक कृदन्त रूप
	दुलार	—०	दुलार (दुलारी)	भूतकालिक कृदन्त रूप
	बिस्तार	—०	बिस्तार (बिस्तारी[5])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	दरस (—दर्श)	—०	दरस (दरसे[6])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	जनम	—०	जनम (जनमे[11])	भूतकालिक कृदन्त रूप
(२)	सर्वनाम +	परप्रत्यय	नाम धातु	
	अपना	—०	अपना (अपनाई[11])	भूतकालिक कृदन्त रूप
(३)	विशेषण +	परप्रत्यय	नाम धातु	
	अधिक	—आ	अधिका (अधिकान[11])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	विपुल (—बहुत)	—आ	बहुना (बहुनाई[1])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	दृढ़	—आ	दृढ़ा (दृढ़ाई[11])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	विपुल	—आ	बिपुला (बिपुलाई[11])	भूतकालिक कृदन्त रूप
	क्रिया विशेषण +	परप्रत्यय	नाम धातु	
	निअर — नियर	—आ	निअरा (निअराया[1])	भूतकालिक कृदन्त रूप

१—रा० बा० २७।५ २ रा० सु० ३८।१२ ३—रा० अयो० २।१४, ४—रा० अर० २०।१६ ५—रा० बा० २९।१५ ६—रा० अयो० २५।१८ ७—रा० उ० १३।१८ ८—रा० बा० ३१४।८ ९—रा० लं० ८९।१२, १०—रा० कि० ३।१८ ११—रा० बा० १२।१ १ —रा० अयो० १८।११ १३—रा० बा० ३५९।२० १४—रा० लं० १८।८ १५—रा० सु० ५६।९ १६ रा० सु० ५६।१ १७—रा० कि० ३।१०

तुलसी की अवधी रचनाओं में ऐसे शब्द भी उपलब्ध हैं जिनमें पूर्व प्रत्यय एवं परप्रत्यय दोनों का योग एक ही शब्द प्रकृति के साथ हुआ है। उदाहरणार्थ शब्द इस प्रकार हैं—

पूव प्रत्यय +	शब्द प्रकृति +	परप्रत्यय	सज्ञा । विशेषण
सु-	कुमार	-ई	सुकुमारी[1]
सु-	चाल	-ई	सुचाली[2]
कु-	चाल	-ई	कुचाली[3]
अ-	विकार	-ई	अविकारी[4]
अ+वि	नास	-ई	अविनासी[5]
स्व-	अथ	-ई	स्वारथी[6]
वि-	राग	-ई	विरागी[7]
अ-	भाग	-ई	अभागी[8]
अनु-	राग	-ई	अनुरागी[9]
कु-	सेवा (-सेव)	-क	कुसेवक[10]
अ-	नाथ	-नि	अनाथनि[11]
सु-	करम	-आ	सुकरमा[12]

तुलसी की अवधी के यौगिक शब्द रचना विधान में प्रयुक्त पूर्व एवं परप्रत्ययों का समाविष्ट योग निम्न चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

पूव प्रत्यय	प्रकृति	प्रथम परप्रत्यय	ततीय परप्रत्यय	उदाहरण
	+			स-पूत=सपूत
				क-पूत=कपूत
	+			अनु-राग-ई=अनुरागी
				कु-चाल-ई=कुचाली
	+			सु-सीत-ल-ता-आई =सुसीतलताई
	+			सीत-ल-ता=सीतलता
	+			निठुर-आई=निठुराई

१-रा० लं० न० १५।४, २-रा० अयो० ३१९।१२ ३-रा० अयो० २०।७, ४-रा० बा० २३।१३, ५-रा० लं० ११०।९ ६-रा० लं० ११०।३ ७-रा० लं० ७।१२, ८-रा० उ० १२१।१० ९-रा० बा० ३४६ १० रा० लं० २८।७, ११-रा० उ० १४।१५ १२-रा० बा० २।२२

आलोच्य भाषा म प्रकृति म तीन परप्रत्ययो तक का योग सम्भव हुआ है किन्तु तीन प्रत्ययो के योग उदाहरण की दृष्टि से नगण्य हैं। सर्वाधिक प्रयोग एक या दो पर प्रत्ययो के योग से सरचित शब्दावली का हुआ है।

३ ३ सामासिक

दो या दो से अधिक मूल शब्दो के योग स बने वृहत्तर शब्द को समास कहते हैं। सामासिक शब्दो के मध्य कोई सयोजक अथवा विभाजक शब्द नही रहता है। अर्थात जहाँ प्रातिपदिक या धातु प्रत्यय विहीन मूल शब्द रचना तथा प्रत्यय युक्त स्थिति म यौगिक शब्द रचना करते हैं वहाँ दूसरी तरफ दो या दो स अधिक प्रातिपदिक अथवा धातुयें सयुक्त होकर वहत्तर शब्द (समास) रचना करते हैं। आलोच्य भाषा की मूल प्रवत्ति दो शब्द प्रकृतिया के योग स निर्मित समास की ओर है। किन्तु जहाँ कही सस्कृत छाया के दर्शन होते हैं वहा समासो की छटा देखने म आती है।

दो प्रातिपदिको के योग से व्युत्पन्न समास इस प्रकार हैं, यथा -

प्रातिपदिक +	प्रातिपदिक	समास
कवि	कोविद	कवि–कोविद[1]
माया	मोह	माया–मोह[2]
प्रीति	रीति	प्रीति–रीति[3]
दुख	दोष	दुख–दोष
सुर	भूप	सुर–भूप[5]
सोक	रोग	सोक–रोग[6]
पितु	मातु	पितु–मातु[7]
निस	दिन	निस–दिन[8]
असन	बसन	असन–बसन[9]
माय	बाप	माय–बाप[10]
हाट	बाट	हाट–बाट[11]
अस्त्र	शस्त्र	अस्त्र–शस्त्र[12]
नरक	स्वग	नरक–स्वग[13]
नर	नारी	नर–नारी[14]

१—रा० बा० १४।३९ २—रा० कि० ३।३ ३—रा० बा० ३५४।१४ ४—रा० बा० ७।६ ५—रा० अर० १२।१०, ६—रा० उ० २०।२० ७—प० म० २२।२ -रा० अर० १२।१६ ९—रा० अयो० ३२४।७ १०—वरव रा० ५०।१, ११-रा० यो० ११।५ १२—रा० ल १४।२ १३-रा० उ० १२१।१९ १४—रा० ० २२।१४।

प्रातिपदिक	+	धातु	समास
भू		धर	भूधर[१]
करन[१]		बेध	करनबेध[१]
रजनी		चर	रजनीचर[१]
धातु	+	धातु	समास
रचि		पचि	रचि पचि[१]
कह		सुन	कह सुन[१]
उठ		बठ	उठ बैठ[१]
हिल		मिल	हिल मिल[१]

अध्ययन की सुविधा के लिये उपयुक्त समास रचना को निम्न वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है—

१—समस्त पद संज्ञा, २—समस्त पद क्रिया

३—समस्त विशेषण, ४—समस्त पद अव्यय

१—समस्त पद क्रिया—कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं—

असन बसन[८] गुन गान[९], मोद विनोद[१]

२—समस्त पद क्रिया—कुछ उदाहरण यहाँ दृष्टव्य हैं—

कह सुन[११], उठ बठ[११], देत लेत[११]

३—समस्त पद विशेषण—

नील-पीत[१] =नीला पीला

दुइ-दुइ[११] =दो दो

४—समस्त पद अव्यय—

दिनहुँ दिन[११] =दिनादिन

इत उत[११] =इधर उधर

भीतर-बाहर[१६] =भीतर बाहर

जहँ-तहँ[११] =जहाँ-तहाँ

१—रा० अयो० १।७ २—रा० अयो० १०।११ ३—रा० सु० १८।११ ४—रा० अयो० १८।१७ ५—रा० अयो—३१२।१८, ६—रा० कि० ९।२, ७—रा० लं० नं० १८।३, ८—रा० अयो० २२४।७, ९—रा० [illegible]० ६०।२६, १०—रा० बा० ३०।२ ११—रा० अयो० ३१।१८ १२—रा० कि० ९।२, १३—रा०

आलोच्य भाषा में ऐतिहासिक दृष्टि से निम्नलिखित भेदों के अन्तगत रखे जा सकते हैं। सख्या की दृष्टि से तत्सम+तत्सम शब्दों से बने समासों की बहुलता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं यथा—

(अ) तत्सम+तत्सम—

कृपाधाम[1] सुख धाम[2], सुतवध[3], वधनिधन[4] गगनचर[5], राजसमाज[6]

ब्रह्म अस्त्र नृपनारी[7] भवताप[8] राजघाट[9], नृपसमाज[10], मुष्टि प्रहार[11]

(आ) तत्सम+अर्धतत्सम—कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं जैसे—

कृतजुग[12] मुनिपतिनी[13] गजमुकुता[14] राजधरम[15], मुनिगत[1], सुरकाज[16]

अहकोप[17]

(इ) तत्सम+अर्धतत्सम—कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं, यथा—

मनिगन[1] करमबस[18] तिमनि[19]

(ई) अर्ध तत्सम+तत्सम—कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं यथा—

तीरथराज[20] जनमफल[21], गुननिधि[22] चरनपीठ[23] गनपति[24]

(उ) अर्ध तत्सम+तद्भव—जैसे- राजदुआर[25] तिमरिस[26]

तद्भव+तद्भव- कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं जैसे—

माइ बाप[1] हाट बाट[27] घर घर[28]

अर्ध तत्सम+विदेशी—कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—बदीखाना[29]

विदेशी+विदेशी—गरीब नवाज=दीन बन्धु[1]

अर्थ प्रक्रिया की दृष्टि से समास रचना विचार-दो शब्दों की समास रचना में सम्मिलित होने वाले दोनों अवयवों में से कभी दोनों अवयव समानार्थी होते हैं तो कभी उनमें एक व्यतिरेकी या अन्यार्थी होता है यथा—

१—रा० ल ११७।२ २—रा ल० १२१।३१ ३—रा० सु० १८।१ ४—रा० सु० १९।६ ५ रा० सु० ३।६ ६—जा० म० ८।२, ७ रा० सु० १९।१९, ८—रा० अर० २५।४, ९—रा उ० १४।२ १०—रा० उ० २९।४ ११—जा० म० ८९।२ १२—रा० कि० ८।६ १३—रा० उ० २३।१२, १४—रा० उ० १३।२६ १५—रा० ल० न० ४।१ १६—रा० अयो० ३१६।१, १७—रा० अयो० ४११।७ १८—रा० अर० २७।१२, १९—रा० उ० ८१।९ २०—रा० अयो० ६।७, २१ रा० अयो० १२।७ २२—पा० म० ६।२ २३—रा० बा० २।२२ २४—जा० म० ५६।२ २५—रा० सु० १७।५ २—रा० अयो० ३१६।९ २७—रा० अयो० ६।१० २८—रा० उ० २८।१५ २९—रा० अर० २५।५ ३०— बरवै रा० ५०।१ ३१—रा० अयो ११।५ ३२—पा० म० ३०।७ ३३—रा० उ० ९०।८, ३४—रा० बा० १८।९।

(१) समानार्थी (एकार्थी)

कुसल खेम[1], कवि कोविद[2], असन बसन[3], गिरि मेरु[4], मोद विनोद[5], बादु बिबादु[6], सुधि बुधि[7], जीव जंतु[8], मोद प्रमोद[9] आदि ।

(२) अनुकार—बहुर बहोरि[10]

(३) व्यतिरेकी अथधारी—

हरिहर[11], सुरनर[12], नर नारि[13], जलथल[14], पिता पुत्र[15], लोग लुगाई[16]

(४) चर अचर[17], जड़ चेतन[18], शत्रु मित्र[19], पाप पुण्य[20], दुख सुख[21], साधु असाधु[22]

परम्परागत वर्गीकरण—तुलसी की अवधी भाषा में सभी परम्परागत प्रमुख समास इस प्रकार हैं—

ऋद्धि सिद्धि[23], कवि कोविद[24], सुख दुख[25], साधु असाधु[26], खग मृग[27], सत्रु मित्र[28]

दो से अधिक पदों से विरचित समास, यथा—

साधु असाधु सुजाति कुजाति[29], छिति जल पावक गगन समीरा[30]
दुख सुख पाप पुण्य दिन राती[31] । माया ब्रह्म जीव जगदीसा[32] ।
सरग नरक अनुराग विरागा[33] । रधि सिधि सम्पति गिरि गृह[34] ।
गुरु पितु मातु स्वामि[35] । तप तीरथ मख दान[36] ।
खग मृग तरु तृन गिरि बन बागा[37] । देव दनुज नर नाग खग[38] ।

(२) तत्पुरुष समास—कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

(अ) कमल-मनोहर[39], बधुन्ह समेत[40] सन सहित[41], आदि ।

१–रा० अयो० २४।४, २–पा० म० ८।२, ३–रा० ल० १७।११ ४–रा० बा० १२।२१, ५–रा० बा० ३५०।२३, ६–पा० म० ६५।१, ७–पा० म० २९।१, ८–रा० सु० ३।३, ९–रा० बा० ३४६।१, १०–रा० उ० २६।१३, ११–रा० बा० ३।२१, १२–रा० अर० १४।१७, १३–पा० म० ५७।२ १४–रा० बा० ८।७, १५–रा० अर० १७।९, १६–रा० अयो० ११।६, १७–रा० अयो० ३२१।१२, १८–रा० बा० ७।३३ १९–रा० कि० ७।३५, २०–रा० बा० ६।९, २१–रा० बा० ६।९, २२–रा० बा० ७।१९, २३–रा० ल० म० २०।४, २४–रा० बा० १४।३१, २५–रा० कि० ७।३५ २६–रा० बा० ७।१९ २७–रा० अयो० ३२१।११ २८–रा० कि० ७।३५, २९ रा० बा० ६।१०, ३०–रा० कि० ११।७ ३१–रा० बा० ६।९ ३२–रा० बा० ६।१३, ३३–रा० बा० ६।१७ ३४–पा० म० ८।२ ३५–रा० अयो० ३१५।९ ३६–बरव रा० ५२।१ ३७–रा० अयो० ३१२।४ ३८–रा० बा० ७।३७ ३९–रा० अर० १०।१० ४०–रा० बा० ३४८।२० ४१–रा० ल० ११।२

(आ) करण—साच विकल[१], पूरन काम[२], मोह जीवन[३] आदि।
(इ)-सम्प्रदान—नयन अमिअ, सुवनामृत[५], चित्रसाला[७] आदि।
(ई)-अपादान—जलहीन, धनहीन[८], पतिहीन[९], विषय विमुख[१०]
(उ)-दीन हित[११], सुखधाम[१२], कोप ग्रह[१३] आतहित[१४], छविधाम[१५]
(ऊ) अधिकरण—रनधीर[१६] प्रेम मगन[१७], सनेह मगन[१८], रनिवासु[१९] आदि।

(३) अव्ययीभाव समास—प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं—
जथाजागु[२] जथामति[२१], जथा थिर[२२], निधरक[२३], निरमय[२४]

तुलसी की अवधी म ऐसे भी शब्द दृष्टव्य हैं जिनम प्रति का उपयोग न कर मणा की ही द्विरुक्ति करके अव्ययीभाव समास बनाए गए हैं। सज्ञा की द्विरुक्ति मिटाने के लिए ही प्रति' का उपयोग किया जाता है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

दिन दिन[२५] रोम रोम[२६], घर घर[२७] तीर तीर[२८], अग अग[२९]

(४) कर्मधारय समास—कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—
(अ) विशेषण पूर्वपद—बाल विधु[३], महावृष्टि[३१], महाबल[३२], महारस[३३] महाधुनि[३४], वक्रगति[३५]।
(आ) विशेषणोत्तर पद—पुरुषोत्तम[३६], मुनिवर[३७], नागमहा[३८]।
(इ) उपमान पूर्वपद—कमल कुल[३९]
(ई) उपमानोत्तर पद—पद कज[४], पद सरोज[४] मुख कमल[४] चरण-सरोज[४३] चरन नलिन[४४] आदि

१—रा० अयो० ३९।४ २—रा० अर० ३०।१३ ३—रा० बा० २१६ ४—रा० बा० ३।२ ५—रा० सु० १३।१३ ६—रा० उ० २७।२५, ७—पा० म० ६०।१, ८—रा० कि० १८।१६ ९—पा० म० २७।१ १०—जा० म० ४५।१ ११—रा० अर० ८।११ १२—रा० ल० ११।१ १३—रा० अयो० २२।१८, १४—रा० बा० ४।२९ १५—रा ल १११।२२ १६—रा० कि० ७।२० १७—रा० अर० १०।८२ १८—रा० बा० २५।१५ १९—रा० बा० ३५८।३, २०—रा० उ० ६।१ २१—जा० म० २।२ २२—रा० कि० १४।४, २३—रा० अयो० ४१।१ २४—रा० अर० २९।२ २ —रा० बा० ३६०।७, २६—पा० म० ११२।२ २७—पा म० ४०।१ २८—रा० उ० २९।७ २९—रा० ल० १५।७ ३०—पा० म० १९।२ ३१—रा० कि० १५।१३, ३२ रा० कि० ७।२२ ३३—रा० उ० १३।२४ ३४—रा० कि० ८।४ ३५—रा० अयो० ४२।१०, ३६—रा० उ० १३।७ ३७—जा० म० ९।२ [illegible] १११।७ ३९—रा० बा० १८।१९ ४०—रा० बा० ११।७ ४१—रा० बा० २८।१ ४२—रा० उ [illegible] ४४—रा० उ० १७।८ ४४—रा० उ० ०।१

(५) द्विगु समास–त्रिभुवन[1], सतखडा[2], सहस सीस[3], पटकध[4] आदि ।

(६) बहुव्रीहि समास–नीलकठ[5], दससीसा[5], दसकधर[6], दसानन[7] आदि ।

तुलसी की अवधी रचनाओ मे विशेष रूप से 'रामचरितमानस' म सस्कृत के लम्बे-लम्बे समासों का प्रयोग है। 'बरवै रामायण', 'रामलला नहछू', 'जानकी मगल', 'पार्वती मगल' म इस प्रकार के लम्बे-लम्बे समासो का प्रयोग अप्राप्य है। तुलसी ने लगभग सभी प्रकार के समासो का प्रयोग पर्याप्त मात्रा म किया है। उनके तत्पुरुष समास व्यापकता एव जटिलता की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

१–रा० अयो० २।७, २–रा० अर० १३।३०, ३–रा० बा० १७।१३ ४–रा० उ० ५।४३ ५–पा० म० २७।२ ६–रा० स० ५५।१३ ७–रा० सु० १०।१०

४ | सज्ञा-रूप-रचना

४ ०

तुलसी की अवधी रचनाओ म सज्ञा रूप-सरचना प्रातिपदिका मे लिंग-वचन कारक सम्बन्धदर्शी विभक्ति प्रत्यया क योग से हुई है। आलोच्य सामग्री म सज्ञा रूप सरचना का स्पष्ट करने क लिये प्रातिपदिक अश तथा विभक्ति-प्रत्ययो के सम्बन्ध म विचार किया जा रहा है। शब्द रचना की दृष्टि से य प्रातिपदिक तीन प्रकार के उपलब्ध हैं—रूढ यौगिक और सामासिक। रूढ यौगिक और सामासिक प्रातिपदिको का सविस्तार विवेचन शब्द रचना विधान (विषय क्रम ३) के अन्तगत किया गया है। अध्ययन की सुविधा का दृष्टि से इसे चार वर्गों म विभाजित किया जा सकता है—

१—प्रातिपदिक अश ४—लिंग ३—वचन और ४—कारक

४ १ प्रातिपदिक अश

किसी सज्ञा के समस्त रूपो मे प्राप्त प्रकृति-तत्व (अभिधायवाचक) ही प्रातिपदिक अश होता है। रूप रचना प्रातिपदिक अश म लिंग वचन-कारक सम्बन्धदर्शी विभक्ति प्रत्यया के योग से होती है। अन्त्य ध्वनि की दृष्टि से प्रातिपदिको क निम्न प्रकार उपलब्ध हैं—

(१) अ—आलोच्य सामग्री म प्राप्त समस्त सज्ञा शब्दो क लगभग ६०% प्रयोग इसी वग म आते हैं। अनुपात की दृष्टि से बरव रामायण म इनका प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक हुआ है यथा—

तात[1], राम[2] दान[3] फल[4] नाक[5] रमस[6]

पन (प्रण), राज कुल[7], नाग[8] बात[11], हित[12]

१—रा० सु० ६।१५ २—रा० सु० ५७।२७ ३—रा० अयो० ८।८ ४—जा० म० ५३।२ ५—जा० म० ६६।२ ६—रा० बा० १४।३ ७—जा० म० ६ ।२१, ८—रा० अयो० ३२।२०, ९—रा० अयो० १५।६ १०—रा० सु० ३।३३, ११—जा० म० ५८।१ १२—रा० उ० १२१।३२।

(२) आ--आकारान्त सज्ञा शब्दो का प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है किन्तु अकारान्त सज्ञाओ की अपेक्षा इनका प्रतिशत कम है, यथा--

जटा[1], सुधा[2], समा[3], कविता[4], कथा[5], ममता[6], सारदा[7], बिपदा[8]।

(३) इ--इस वर्ग के शब्द भी प्रचुर मात्रा म उपलब्ध हैं, यथा--

लटि[9], छवि[10], मुनि[11], सिधि[12] भूमि[13], दुलहिनि[14], मूरति[15], राति[16]

(४) ई--ईकारान्त सज्ञाओ का भी पर्याप्त मात्रा मे प्रयोग हुआ है, यथा--

हाथी[17], रिसी[18], गाडी[19], सारथी[20], जबाली[21], सखी[22], चादनी[23], गली[24] भाई[25], बदेही[26]

(५) उ--उकारान्त सज्ञाओं की भी अच्छी सख्या मिल जाती है यथा--

गुरु[27] बिधु[28], मृत्यु[29], प्रभु[30], मधु[31], इदु[32]

(६) ऊ--ऊकारान्त सज्ञाओं का प्रयोग उकारान्त सज्ञाओ की तुलना म कम है, यथा--

साधू[33], कद्[34] बधू[35], बछरू (बछडा)[36], नाऊ[37], बहरू[38], आँसू[39]

(७) ओ--हियो[40] (हृदय), बघाउनो[41] मरामो[42] खरो[43] (=तिनका या खर)

(८) औ--आलोच्य सामग्री म एक मात्र शब्द उपलब्ध है, यथा--

समौ[44] (समउ-समय), भौ[45]

ओकारान्त प्रातिपदिक ब्रजभाषा की प्रकृति के अनुकूल ही प्रयुक्त हुए हैं जिन्हें ब्रजभाषा के ही विशुद्ध रूप स्वीकार करना अधिक समीचीन जान पडता है।

१--रा० कि० ९।६, २--रा० अर० २।१२ ३--रा० ल० न० १८।३ ४--रा० बा० १०।२३ ५--रा० बा० १०।२२, ६--रा० बा० १६।४ ७--रा० ल० न० १।१, ८--रा० उ० १४।२६, ९--जा० म० ५४।१, १०--जा० म० ४४।२, ११--रा० ल० न० १९।४, १२--रा० ल० न० २०।४, १३--रा० ब० १७।१४, १४--रा० बा० ३५०।६, १५--रा० अयो० ९१।१४ १६--पा० म० ३०।२, १७-रा० ल० न० १६।३, १८--पा० म० ११।१ १९--रा० ल० न० १७।१, २०--पा० म० छ० १३।२ २१--रा० अयो० ३१९।११ २२--पा० म० १०९।१, २३--बरव रा० ४१।१, २४--पा० म० १०९।२, २५--रा० ल० १२।१० २६-रा० उ० १२१।२१ २७--बरव रा० ४१।२ २८--जा० म० १९।२ २९--रा० सु० ५३।८, ३०--रा० उ० ५।११ ३१--रा० सु० ३।१२ ३२--रा० उ० १२१।४२ ३३--रा० बा० ५।१७ ३४--रा० अयो० १९।१७, ३५--रा० बा० ३५५।१५, ३६--रा० अयो० ३६।१६ ३७--रा० ल० न० १७।१ ३८--रा० ल० न० १।२ ३९--रा० अयो० १३।१२ ४०--रा० उ० ८४।२० ४१--पा० म० छ० ९।४ ४२--रा० अयो० २१३।९ ४३--रा० अयो ३१४।९, ४४--जा० म० ८६।" ४५--रा० ल० न० ८।३।

अन्त्य स्वरों में परिवर्तन—

आलोच्य सामग्री में अन्त्य स्वरों की स्थिति बड़ी परिवर्तनशील है। अधिकांशतः छन्दानुरोध से दीर्घ स्वरान्त संज्ञाएँ ह्रस्व स्वरान्त और ह्रस्व स्वरान्त संज्ञाएँ दीर्घ स्वरान्त हो गई हैं यथा—

आ>अ गग[1] भरोस[2] आस[3] रस[4] जमुन[5] सरित[6]

वस्तुतः ये रूप आकारान्त प्रातिपदिक ही हैं छन्दानुरोध से अकारान्त हो गए हैं।

अ>आ दासा[7] मोरा[8] सतोषा[9] भगवाना[10] मारा[11] ग्रामा[12] अभिमाना[13], सुधामा[14], क्रोधा[15] परिनामा[16]

उपयुक्त सभी प्रातिपदिक मूलतः हैं तो अकारान्त किन्तु छन्दानुरोध से आकारान्त हो गए हैं। इस प्रकार के अकारान्त रूप तुलसी की अवधी रचनाओं में सुलभ हैं। अतएव इन रूपों की गणना अकारान्त प्रातिपदिकों के अन्तर्गत हो भी जा सकती है।

तुलसी काव्य में ऐसे संज्ञा प्रातिपदिक भी प्राप्त हैं जो वस्तुतः हैं अकारान्त किन्तु कहीं-कहीं पर उनका प्रयोग उकारान्त एवं उकारान्त रूपों में भी हुआ है। ऐसा जान पड़ता है कि अकारान्त पु० संज्ञा शब्द तत्कालीन जन भाषा (अवधी) में उकारान्त रूप में उच्चरित होते रहे होंगे। जिन्हें तुलसी ने अपनी रचनाओं में स्थान दिया। यह प्रवृत्ति आज भी अवधी में सजीव है इस प्रकार के प्रयोगों को वैकल्पिक प्रयोग माना जा सकता है। ये (उकारान्त शब्द ही चरणान्त में आकर छन्दानुरोध से उकारान्त भी हो गए हैं यथा—

—अ —उ बचरु[17] सुतु[18] दुखु[19] बीजु[20] समाजु[21] फलु[22] दाबु[23] जतनु[24] स्वारथु[25], प्रातु[26] (प्रात) बेपु[27] नरेसु[28]

१—रा० अयो० ८७।१० २—रा० बा० ७।७ ३—बरव रा० ४४।८ ४—रा० अयो० २१।१३ ५—रा० अयो० ६९।१ ६—रा० बा० ३५८।१८ ७—रा० अर० २९।५ ८—रा० कि० १८।११ ९—रा० कि० १,।६, १०—रा० उ० ६१।१२ ११—रा० सु० १२।२० १२—रा० सु० ८। १३—रा० कि० १०।१५, १४—रा० कि० ७।५८ १५—रा० सु० १९।६, १६—रा० अयो० २३।१२ १७—रा० सु० १४।१३ १८—रा० अयो० २१।८, १९—रा० अयो० १९।१७ २०—रा० अयो० १९।१२, २१—रा० अयो० २३।१३ २२—रा० अयो० २१।१० २३—रा० अयो० ११।१० २४—रा० लं० ७।११ २५—रा० अयो० ३१५।६ २६—रा० अयो० ३३।१७ २७—गी० मं० ५४।१ २८—रा० अर० २५।१३

-अ -उ -ऊ प्रतापू[1], देसू[2], मीचू[3] (मृत्यु) राजू[4], नामू[5], कलेसू[6]

अकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक कहीं कहीं पर इकारान्त तथा ईकारान्त रूप में भी प्रयुक्त हुए हैं। ऐसा जान पड़ता है कि अकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द जन भाषा (अवधी) में इकारान्त रूप में उच्चरित होते रहे होंगे, जिन्हें तुलसी ने अपनी अवधी रचनाओं में स्थान दिया। यह प्रवृत्ति आज भी अवधी में प्राप्त है। इस प्रकार के प्रयोग वैकल्पिक प्रयोग प्रतीत होते हैं। ये (इकारान्त) शब्द ही चरणान्त में पड़कर छन्दानुरोध से ईकारान्त भी हो गए हैं। अन्य रचनाओं की अपेक्षा यह प्रवृत्ति 'मानस' में अधिक व्यापक रूप में प्राप्त है, यथा—

-अ > -इ फनि[7], खानि[8], दुलहिनि[9], मूरि[10] (जड़), मुरि[11] (घल), किंकिनि[12]

-अ > -इ- ई पाती[13] (पत्र), करतूती[14], देही[15] (देह), बहिनी[16]

ईकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक इकारान्त हो गए हैं, यथा—

ई > -इ रानि[17], नारि[18], बैरि[19], स्वामि[20], भाइ[21]

इकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक ईकारान्त हो गए हैं, यथा—

इ > -ई प्रीती[22], नीती[23], बिभूती[24], रीती[25], रासी[26], खरारी[27] (शिव)

४ २ लिंग-विधान

आलोच्य सामग्री में संज्ञा या तो पुल्लिंग में प्राप्त होती है या फिर स्त्रीलिंग में। इन दोनों लिंगों के अन्तर्गत सम्पूर्ण प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक संज्ञाएँ आती हैं। नैसर्गिक लिंग विधान का नितान्त अभाव है। लिंग निर्धारण में कोई निश्चित नियम नहीं बनाए जा सकते। फिर भी दो आधार बनाए जा सकते हैं। पहला है शब्द गठन अर्थात अन्त्य स्वरों के आधार पर कुछ लिंगाभास मिल जाता है और दूसरा है प्रयोग अर्थात वाक्यगत प्रयोगों के आधार पर लिंग का पता चलता है।

अकारान्त (या व्यंजनान्त) संज्ञाओं का लिंग निर्धारण करना अति दुष्कर है। इस प्रकार की संज्ञाएँ दोनों लिंगों में ही पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।

१-रा० बा० २४।१२, २-रा० अयो० ४९।१ ३-रा० बा० ,।१२ ४-रा० अयो० ४२।१, ५-रा० बा० २६।११ ६-रा० अयो० ७५।१५ ७-पा० म० ६०।१ ८-रा० कि० १।२, ९-जा० म० ५८।२ १०-रा० अयो० ३१-।१८ ११-रा० अयो० ३१८।१७ १२-रा० लं० नं० ११।३ १३-रा० सु० ५२।१५ १४-रा० अयो० १५।११ १५-रा० बा० ३१०।२ १६-रा० अर० १७।५, १७-रा० अयो० २५।२१, १८-रा० उ० १६।१ १९-रा० अयो० १४ १९, २०-रा० बा० १५।७ २१-रा० ल० न० १२।४ २२-रा बा० २८।१० २३-रा० अर० १७।४ २४-रा० अयो० ३१५।१४, २५-रा० बा० ३२०।२ २६-रा० बा० २६।२ २७-रा० कि० २९।१५।

उदाहरणार्थ—

अकारान्त पुल्लिंग संज्ञा रूप—

जल[1] थल[2] नभ[3], मेघ[4] सर[5] जग[6] नरेस[7]

अकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञा रूप—

सेज[8], सीय[9] जमाल[10] बरात[11] मीन[12]।

आकारान्त (–आ) संज्ञाएँ प्राय पुल्लिंग हैं (स्त्रीलिंग में भी प्राप्त होती हैं) यथा–

सुता[13] मना[14] माया[15] ?या[16] माया[17] ममता[18] मुद्रिका[19]

आदि तत्सम नाम जबकि—या में अन्त होने वाली संज्ञाएं प्राय स्त्रीलिंग हैं यथा—मलिनिया[20] बरिनिया[21] नउनिया[22] आदि।

उकारान्त और ऊकारान्त संज्ञायें प्राय पुल्लिंग हैं जबकि इकारान्त और ईकारान्त संज्ञायें प्राय स्त्रीलिंग हैं। ब्रज भाषा के प्रभाव से जो ओकारान्त शब्द प्रयुक्त हुए हैं वे सब पुल्लिंग ही हैं। वाक्यों में क्रिया रूपों द्वारा संज्ञाओं का लिंग स्पष्ट होता है यथा—

तेहि निसि नींद परी नहिं काहू।[23] मंगल रचना रची बनाई।[24]
मुनि मन कीन्ह प्रणाम वचन आसिस दई।[25]
अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी।[26] कपट छुरी उर पाहन टेई।[27]
सिंदूर बदन होम लावा होन लागी भावरी।[28]
बर दुलहिनिहि लिवाइ सखी कोहबर गई।[29]
नाउनि अति गुनखानि तो बगि बोलाई हो।[30]
मानहु रोष तरंगिनि बाढ़ी।[31]

सामान्य रूप से कर्ता के लिंग के अनुसार क्रिया का लिंग परिवर्तित होता है किन्तु 'मानस' में एक स्थल पर कर्ता स्त्रीलिंग में होते हुए भी क्रिया पुल्लिंग में है।

१–रा० बा० ८।२ २–रा० बा० ८।२ ३ रा० अर० १२।२९ ४–रा० बा० १।८ ५–रा० कि० १६।९ ६–रा० बा० ५।१२ ७–रा० अयो० ४।१ ८–रा० अयो० ३८६।९ ९–जा० मं० १२।११, १०–जा० मं० १२०।१ ११–जा० मं० छं० १५।१ १२–पा० मं० ६७।१ १ –रा० बा० ५८।२ १४–रा० अर० ११।६ १५–रा० बा० १४।१० १६–रा० सु० ५२।१४, १७–रा० अर० १५।३ १८–रा० लं० १४।११ १९–रा० अर० १३।१ २०–रा० लं० न० ८। २१–रा० लं० न० ८।३ २२–रा० ल० न० ८।४ २३–रा० अयो० ३७।१५ २४–रा० बा० ४५।३ २५–पा० मं० ११।२, २६–रा० अयो० ३१।१ २७ रा० अयो० २२।२ २८–जा० मं० छं० १८।३ ९ जा मं० १४६।२ ३०–रा० लं० न० १०।१, ३१–रा० अयो० ३४।२।

इसका प्रमुख कारण यही जान पडता है कि प्राचीन अवधी में कर्मणि प्रयोगो मे कर्म के अनुसार ही क्रिया का रूप परिवर्तित होता रहा होगा, यथा—

मम वचन जब सीता बोला[1] ।

इस प्रकार यदि क्रिया रूप स्त्रीलिंग (प्राय इकारान्त अथवा ईकारान्त) हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि सज्ञा स्त्रीलिंग है अन्यथा पुल्लिंग, यथा—

अस कहि रघुपति चाप चढावा[2] । प्रभु सुभाय परिजनन्हि ह सुनावा[3] ।

इहा अर्धनिसि रावनु जागा[4] । देव ह समाचार तब पाए[5] ।

इसके अतिरिक्त विशेषण रूपो से भी लिंग का स्पष्टीकरण होता है—

स्त्रीलिंग—रजनी अधियारी[6] घटा अतिकारी[7], ऊँचि रुचि[8],

बीचि टहल[9], राति निमली[10] प्रीति गाढी[11]

कथा पावनी[12], मति पोची[13], जीभ बिचारी[14], प्रीति—

थोरी[15], जीभ दूजी[16]

पुल्लिग—पडित मूढ[17], पद पावन[18] दीन वचन[19], कृश गान[20], काल कराल[21]

पुरुष वाचक सम्ब ध कारकीय रूपो (सर्वनाम) से भी सज्ञाओ का लिंग स्पष्ट होता है। अनुपात की दृष्टि से मानस मे यह प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। मोरि—मोरी (छन्दानुरोध से), तोरि—तोरी (छन्दानुरोध से), राउरि—राउरी (छन्दानुरोध से), तुम्हारि—तुम्हरी—तुम्हारी आदि से स्त्रीलिंग सज्ञाओ का बोध होता है, यथा—

सुनहु प्रान पति बिनती मोरी[22] । भाषा भनित मोरि मति मोरी[23] ।

तुम अति कीन्ह मोरि सेवकाई[24] । सुग्रीवहु सुधि मोरि बिसारी[25] ।

चल न चातुरी मोरि[26] । अतकाल गति तोरि[27] ।

सुनु मथरा बात फुरि तोरी[28] । कहु तिय होहिं सयानि सुनहिं सिख राउरि[29] ।

राम निकाइ रावरी है सबही का ठीव[30] ।

१—रा० अर० २८।९ २—रा० सु० ५८।११ ३—रा० उ० १९।१० ४ रा० ल० १००।१३, ५—रा० बा० ८८।७ ६—रा० अर० ४४।१४ ७ रा० ल० १३।१० ८—रा० बा० ८।१३ ९—रा० उ १८।३ १०—रा० उ० १०९।२ ११—रा० सु० १४।१ १२—रा० उ० १५।१ १३—रा० अयो० ९२।१ १४—रा० सु० ७।२, १५—रा० बा० २८।१६, १६—रा० अयो० १६।२ १७—रा बा २८।१२, १८ जा० म० २।२ १९—जा० म० २६।२ २० रा० उ० १।२२ २१—बरवै रा० ४५।१, २२—रा० ल० १४।१४ २३—रा० बा० १५।१३, २४ रा० उ० १६।७ २५—रा० कि० १८।७ २६—रा कि० ९।२२, २७—रा कि ९।२४ २८—रा० अयो० २०।१ २९—पा० म० ६३।१, ३०—रा० बा० २।२१ ग

हैं तुम्हारि सेवा बस राऊ[1] । जरि तुम्हारि चह सवनि उखारी
नाथ सकल सम्पदा तम्हारी[2] । जानउ महिमा कछुक तुम्हारी ।
तम्हरी कृपाँ सुलभ सोउ मोरे[3] । मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही[4] ।

इसी प्रकार मोर—मोरा मोर तोर—तोरा (छन्दानुरोध से) तोर राउर, तुम्हार—तुम्हारा आदि से पुल्लिंग सज्ञाओं का पता चलता है यथा

मोर अहार जहा लगि चारा । मोर याउ मैं पूछउ साईं[6] ।
जानत प्रिया एक मन मोरा[7] । प्रियाहीन डरपत मन मोरा ।[8]
मैं सेवक रघुपति पति मोरे[9] । कहु कछु लाप न तोरे[10] ।
जाहु पुर रहहु हतउ सुत तोरा[11] । मा विधि घटब काज मैं तोरे[12] ।
राउर राउर नामु जसु[13] । गिरिजाहि लग हमार जितनु सुख[14] ।
नर कपि भालु अहार हमारा[15] । आवा काल तुम्हार[16] ।

साथ ही सम्बन्ध कारक के परसर्गों द्वारा भी लिंग बोध होता है यथा—

स्त्रीबोधक—कनक पकज की कली[17] । सोइ करतूति विभीषन केरी ।
गिरजा रघुपति के यह रीति[18] । सूपनिखा रावन के बहिनी ।

पुंलिंग बोधक—रघुपति कर सदेसु अब[2] ।
समय सिंधु गहि पद प्रभु केरे[2] । धुआ देखि खर दूषन केरा[2] ।
रिपु के दल कपिन्ह तब जाने[2] । ताके भय रघुवीर कृपाला ।

पुल्लिंग सज्ञाओं को स्त्रीलिंग बनाते समय उनकी अन्त्य ध्वनियों में अनेक प्रकार के परिवर्तन होते हैं जिन्हें इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है-

१—आकारान्त पु० सज्ञाओं में—आ के स्थान पर निम्न प्रत्ययों का योग देखा जा सकता है—

—ई सखा — सखी दुरा — दुरी[2]

१—रा० अयो० २११६ २—रा० अयो० १०११४ —रा० बा० ३६०।११ ४—रा० अर० १ ।१० ५—रा० बा० १४।२१ —रा० सु० ८९।१ ७—रा० सु० ६।५ ८—रा० कि० २।१४ ९ रा० सु० १४।२ १—रा० कि० १४।७ ११ रा० अर० ११।॰॰ १२ रा० अयो० ७।३८ १३—रा० सु ५४।१३ १४—रा० कि० ८।२ १५—रा० अयो० ३।१७ १६—पा० म० १८ २ १७—रा० २० ८।२ १८—रा० सु० ४२।२० १९—रा० उ० १०९।३२ २०—रा बा० २९।१३ २१—रा० उ० ।११ २२—रा० अर १७।१ २—रा० सु० १४। २ २४—रा० सु० ५९।१ २५—रा अ० २।१९ २६—रा० सु० ५ ।३, २७—रा कि० ९।२३ २८—पा० म १४८।०

–इनि दूल्हा – दुलहिनि[1]

–इनी लरिका (लड़का) – लरिकिनी[2]

–इयाँ – बरुना – बरुनियाँ[3]

२–ईकारान्त पुल्लिग संज्ञाओ मे '–ई' का '–इ' मे परिवर्तन होकर आगे निम्न प्रत्ययो का योग होता है, यथा–

–नि दरजी – दरजिनि[4], तँबोली – तँबोलिनि[5]

मोची – मोचिनि[6] जोगी – जोगिनि[7]

–निया माली – मलिनिया[8]

३–ऊकारान्त पुल्लिग संज्ञाओ मे '–ऊ' का परिवर्तन 'उ' मे होकर आगे '–नि' या निया प्रत्यय का योग होता है–

नि नाऊ – नाउनि[9]

–निया नाऊ – नउनिया[10]

४–अकारान्त पुल्लिग संज्ञाओ मे '–अ' के स्थान पर निम्न प्रत्ययो का योग प्राप्त है यथा–

–इ देव – देवि[11], कुमार – कुमारि[12]

कुअर – कुअरि[13]

–ई मराल – मराली[14]

सजन – सजनी[15], चाँद – चादनी[16]

–इनि अहीर – अहीरिनि[17]

लोहार – लोहारिनि[18] पिसाच – पिसाचिनि[19]

–आई लोग – लोगाई[20]

–इनी सेवक – सेवकिनी[21]

–इया उजिआर – उजिअरिया[22], अनुहार – अनुहरिया[23]

–नि पहराव – पहिरावनि[24]

–इन साँप – साँपिन[25]

–आ प्रिय – प्रिया[26]

१–पा० म० ८०।१ २–रा० बा० ३५५।१५ ३–रा० ल० न० ८।१ ४–रा० ल० न० ६।१ ५–रा० ल० न० ६।१, ६–रा० ल० न० ७।१, ७–रा० ल० ८८।१३ ८–रा० ल० न० ७।३, ९–रा० ल० न० १०।१ १०–रा० ल० न० ८।३ ११–रा० बा० ४८।१, १२–पा० म० छ० ५।२ १३–पा० म० ९।१, १४–रा० अयो० २०।८, १५–रा० अयो० १३।१ १६–बरवै रा० ४।१, १७–रा० ल० न० ५।३, १८–रा० ल० न० ५।२, १९–पा० म० ५०।२ २०–रा० अयो० ११।६ २१–रा० उ० ३४।९ २ –बरवै रा० ३७।१ २ –बरवै रा० ३।२ २४–जा० म० १९।१।१, २५–रा० अयो० १३।१७ २६–रा० अयो० ३२ १८।

४ ३ वचन-विधान

वचन विधान की दृष्टि से आलोच्य भाषा में संज्ञाओं के दो रूप मिलते हैं। एक रूप से एकत्व का बोध होता है तो दूसरे से एक से अधिक का। इन्हीं दोनों रूपों को क्रमश संज्ञा का एक वचन और बहुवचन रूप कहा जा सकता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संज्ञा—रूपों में पाए जाने वाले वचन के विभक्ति-प्रत्ययों को कारक-सम्बन्धों के द्योतन विभक्ति-प्रत्ययों से पृथक करके नहीं देखा जा सकता है। अतएव इस प्रकार के विभक्ति प्रत्ययों को कारक-विधान (४ ४) के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा रहा है।

कहीं-कहीं विश्लिष्ट विधा से अर्थात पृथक से गन—गण लोग लोग आदि शब्द जोड़ कर भी एक वचन से बहुवचन का बोध कराया गया है यथा—

(१) गन-गण—आलहिं वास के माडव मनिगन पूरन हो।[1]
मुदित जनकपुर परिजन नृपगन लाजहिं।[2]
प्रेम मगन प्रेमगन तन न सँभारहिं।[3]

(२) लोगू— सुनि कठोर कवि जानहिं लोगू।[4] (कवि लोग)

इसके अतिरिक्त निम्न प्रणालियों से भी बहुवचनत्व का द्योतन किया गया है यथा—

(१) इकारान्त संज्ञाओं में अनुस्वार के योग से यथा—
मानु निधान विलोकि लायन लाह लूटति नागरी।[5]
बहुरि बहुरि भेंटहिं महतारीं।[6] चलिहि बरात सुनत सब रानी।
सिंदूर बदन होम लावा होन लागी भाँवरी।[8]

(२) पुनरुक्ति द्वारा यथा—गृह गृह प्रति मनि दीप बिराजहिं।[9]
ऊपर लोक अंग अंग विश्रामा।[10]
समाचार सब सखि ह जाइ घर घर कहे।[11]
दिन दिन प्रति अति होहिं सोहाए।[12]
राम रोम छबि निंदति काम मनोजनि।[13]
सुख समाज लखि रानि ह आनद छिनु छिनु।[14]

१—रा० ल० न० ३।२ २—जा० म० ९७।२ ३—रा० म ३६।२ ४—रा० अयो० २१८।४ ५—जा० म० छं० १२।१, ६—रा० बा० ३३४।१५ ७—रा० बा० ३३४।३ ८—जा० म० छं० १८।३ ९—रा० उ० २७।१६ १०—रा० ल० १५।२, ११—पा० म० ३०।१ १२—रा० अर० १३।४ १३—जा० म० ९५।१, १४—जा० म० ११०।२।

(३) परसर्गों द्वारा—पर हित हानि लाभ जिन्ह केरें ।[1]
सिय रघुबर के भए उनींदे नैन ।[2] ए किरीट दसकंधर केरें ।[3]

(४) विशेषणों द्वारा यथा—किए सकल नर नारि बिसोकी ।[4]
बरषहिं बिबिध प्रसून ।[5] रूप धरें जनु चारिउ बेदा ।[6]
सुजस होहिं तिहुँ पुर अति पावन[7]।
दहु दिसि धावहिं कोटिन्ह रावन ।[8]
तनु पोषक नारि नरा सगरे ।[9]

(५) क्रिया रूपों द्वारा, यथा—लै लै नाउँ सुआसिन मंगल गावहिं ।[10]
बाजहिं निसान सुगान नभ चढ़ि बसह बिधु भूषन चले ।[11]
बरषहिं सुमन जय जय करहिं ।[12]
बर दुलहिनिहि लिवाइ सखी कोहबर गईं ।[13]
मन भावत विधि कीन्ह मुदित भामिनि भई ।[14]
बार बार भेंटहिं महतारी ।[15]
राजन भीहें हाथी धानिन्ह हार हो ।[16]

४४ कारक विधान

४४० कारक संज्ञा (अथवा सर्वनाम) का वह रूप होता है जो वाक्य में किसी अन्य पद से अपना संबंध प्रकाशित करता है। आलोच्य भाषा में सर्वनाम दो प्रकार के मिलते हैं। अस्तु संज्ञाओं के दो कारक हैं—(१) मूल और (२) तिर्यक। निर्विभक्तिक रूपों को मूलकारक के अन्तर्गत स्थान दिया गया है जबकि अन्य रूपों (परसर्ग रहित या परसर्ग सहित) को तिर्यक कारक में। इन दोनों प्रकार के कारक-रूपों के द्वारा वाक्य में अनेक प्रकार के सम्बन्ध प्रकट किए जाते हैं यथा—कर्तृत्व, कर्मत्व करणत्व आदि। निम्न विषयक्रमों में उपर्युक्त कथन को सोदाहरण स्पष्ट किया जा सकता है —

४४१ मूल रूप (निर्विभक्तिक प्रयोग)

ऐसे रूप जिनमें तात्कालिक दृष्टि से विभक्तियों (व्याकरणिक प्रत्ययों) का योग नहीं जान पड़ता है उन्हें निर्विभक्तिक मान कारके प्रातिपदिकों में परिगणित

१—रा० बा० ४।३ २—बरवै रा० १९।२, ३—रा० ल० ३।२९ ४—रा० उ० ६।१२ ५—जा० मं० ११२।१ ६—रा० उ० ३२।९ ७—रा० ल० ७।१६ ८—रा० ल० ९६।१ ९—रा० उ० १०२।१९ १०—जा० मं० १४३।१ ११—पा० मं० छं० १२।१ १२—पा० मं० छं० १२।२ १३—जा० मं० १४६।२, १४—जा० मं० १४६।१ १५—रा० बा० ३३७।१२, १६—रा० क० न० १६।३

कर लिया गया है यद्यपि ऐतिहासिक दृष्टि से इस प्रकार के प्रयोग सविभक्तिक ही रहे हैं। जहाँ तक कारक सम्बन्धों के प्रकाशन का प्रश्न है निर्विभक्तिक प्रयोगों से मुख्यत कर्ता और कभी-कभी कर्म का ही स्पष्ट ज्ञान है, वश छन्दानुरोध से जहाँ परसर्ग लोप मिलता है वहाँ अन्य कारक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति सम्बन्धित परसर्गों की योजना करने पर ही होता है और इस प्रकार के परसर्गाकांक्षी निर्विभक्तिक प्रयोग या सविभक्तिक प्रयोग नियक के अन्तर्गत विश्लेषित हुए हैं।

मूल रूप का कर्ता एवं कर्म में प्रयोग—

(क) कर्ता—मानहु समर सुर जय पाई।[1]
मय विलोकत रामहिं।[2] रामचन्द्र बैठहिं सिंघासन।[3]
प्रभु प्रेरित लछिमन पहिराए।[4] बड बरनि न रतकथा।[5]
बचन न आवत।[6] नृपति कीन्ह सनमान।
मुनि जतनु कराही।[8] मुनिपद कमल परे द्वौ भाइ।[9]
सुत बिलोकि हरषी महतारी।[10] सुनि महिमा रानिन्ह धरजु आयउ।[11]

(ख) कर्म—(प्राय अचेतन संज्ञाओं का प्रयोग)
बचन बोले दीन दयाल।[12] कही कथा सर्व संगति जस।[13]
देखहु आपनि मूरति।[14] छबि देखि मदन मए पुरजन।[15]
विनती सचिव करहिं कर जोरी।[16] रिपु रन जीति सुजस सुर गायउ।[17]

चेतन संज्ञाओं का प्रयोग—
तुम्ह देख कप लु रघुराई।[18] सिव समिरि मुनि सान।[19]
दइ जनक तानिह कुअर कुअरि व्याहि।[20]
पितहि जुहार रहन बलि साई।[21]

(ग) सम्बोधन— संज्ञा का यह वह रूप है जिसमें प्राणी विशेष यत्किञ्चित भावुकतावश, अचेतन पदार्थों का भी सम्बोधित किया जाता है। विशेष महत्वपूर्ण बात यह है कि इसके साथ विस्मयादि बोधक चिह्नों का प्रयोग तथा कारक चिह्नों का पूर्णत अभाव होता है। तुलसी की अवधी रचनाओं में सम्बोधन को व्यक्त करने

१—रा० बा० ३५०।१ २—जा० म० २७।२ —रा० उ० १०।१० ४—रा० उ० १७।१३ ५—रा० ल० १११।३१ ६—रा सु० १४।१३ ७—जा० म० १ ।२ ८—रा० कि० १०।५ ९—रा० अर० १२।१९ १०—रा० ल० १२।११ ११—जा० म० ७८।१ १२—रा० ल० ११३।४४ १३—रा० सु० १ ।२ १४—बरव० रा० १८।२, १५—जा० म० ५५।१ १६—रा० अयो० ५१९ १७—रा० उ० ।० १८—रा० उ० ।१६ १९—पा० म० ७५।१ २० जा० म० १७।२ २१—रा० अयो० ८३।९

की दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं—(अ) व स्थल जहा सस्कृत सनारूपों का प्रयोग हुआ है—प्राय ऐसे स्थलों पर सना के मूलरूप को विकृत न कर उनके पूर्व रे री हा, हे ए आदि सम्बोधन बोधक शब्दों का प्रयोग हुआ है। (ब) दूसरे व स्थल जहाँ केवल मूल रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं। उक्त दोनों प्रवृत्तियाँ के उदाहरण क्रमश इस प्रकार हैं—

(अ) हे—हे खग मृग।[1]
हे विधि दीन बधु रघुराया।[2] हे मधुकर श्रेनी[3]
हा— हा गुन खानि जानकी सीता।[4] हा लछिमन तुम्हार नहिं दाया।[5]
हा रघुकुल सरोज दिन नायक।[6] हा जग एक बीर रघुराया।[7]
रे रे कपि बबर खव सव।[8] रे कपिपात बोलु सभारी।[9]
राम मनुज बस रे मठ बगा।[1]
रे रे—रे रे दुष्ट ठाढ किन होई।[11]
सना के मूलरूप का प्रयोग—
राम कहा प्रनामु कर सीता।[11] अब घर जाहु सखा सब।[13]
मित प्रद सुनु सुनु राजकुमारी।[14]
सिय तुव अग रग मिलि अधिक उदोत।[15]
सुनहु प्रानपति बिनती मोरी।[16] रानी कहहिं बिलोकहु सजनी।[10]
अगद कहहिं सुनहु हनुमना।[18] जनम जनम रघुनदन तुलसी देहु।[19]
कतिपय स्थलों पर सस्कृत से प्रभावित रूप भी प्रयुक्त हुए हैं यथा—
सीत पुत्रि करसि जनि त्राता।[1]
धिग धिग जीवन दव सरीर हरे।[11] जय राम सदा सुख धाम हरे।[11]
भव वारन दारन सिंह प्रभो।[11] गुन सागर नागर नाथ विभो।[1]

६४ २–तियक रूप (तिमक कारक)—मूल रूपों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के समस्त रूपों को तियक माना गया है। इन रूपों की सामान्य विशेषता

१—रा० अर० ३०।३३ २—रा० अर० १०।७ ३—रा० अर० ३०।३३ ४—रा० अर० ३०।१२ ५—रा० अर० २१।५ ६—रा० अर० २९।४ ७—रा० अर० २९।११ ८—रा० ल० २५।१९ ९—रा० ल० २११ १०—रा० ल० २६।९ ११—रा० अर० २९।२१ १२—रा० ल १२०।१०, १३—रा० उ० ,।७ १४—रा० उ० ८।१, १५—बरव रा० १०।१ १६—रा० ल० १४। ४ १७—रा० बा० ३५८।६ १८—रा० उ० १३।२० १९—बरव रा० ६८ २ २०—रा० अर० २९।१७ २१—रा० ल० ११११३५ २२—रा ल० ११,।१, २३—रा० उ० ११।१३ २४—रा० ...

यह है कि इनका प्रयोग परसर्गों के साथ होता है। परसग योजना के सम्बन्ध मे यह तथ्य उल्लेखनीय है कि कर्त्ता को छोड़कर अन्य कारक सम्बन्धो की अभिव्यक्ति के लिए प्राय परसग योजना का आश्रय लिया गया है। परसग रहित और परसग सहित प्रयोगो का देखकर तत्कालीन प्रवत्ति के सम्बन्ध म हम ये निष्कष निकाल सकते हैं—(१) यद्यपि परसग प्रयोग का प्रवत्ति का आरम्भ हो चुका था किन्तु फिर भी यह आवश्यक न था कि परसर्गों का प्रयोग कर के ही कारक सम्बन्ध प्रकाशित किए जायें। वाक्य गठन स कारक सम्ब ध स्वय प्रकाशित हो सकते हैं अर्थात् वकल्पिक प्रयोग भी हो सकते थ। (२) वस्तुत परसग प्रयोग की प्रवत्ति का प्रचलन था जहां कही परसग रहित प्रयोग मिलते हैं वहां परसर्गों का लोप छन्दानुरोध से हुआ है क्योकि सम्बन्धित परसर्गों की योजना किए बिना कारक सम्बन्ध स्पष्ट नही होते है और (३) विभक्तियो (व्याकरणिक प्रत्ययो) के योग से भी विविध प्रकार के कारक सम्बन्ध स्पष्ट किए गए हैं। इस प्रकार के प्रयोग सश्लिष्ट है जबकि उपयुक्त प्रयोग विश्लिष्ट है। य सश्लिष्ट प्रयोग प्राय परसग रहित मिलते है। आलोच्य सामग्री मे यत्र तत्र परसग रहित प्रयोग भी सुलभ हो जाते हैं। निम्न विषय क्रमो म स्पष्टीकरण किया जा रहा है।

४ ४ २ १ परसग रहित प्रयोग (विश्लिष्ट रूप) —

एकवचन—तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोर।[१] (करण)
राम कृपां नासहिं सब रोगा।[२] (करण) गावत गीत मनोहर बानी।[३] (करण)
प्रभु प्रसाद सिव सबहिं निबाही।[४] (') जो जगु जोगु भूप अभिषका।[५] (सम्प्रदान)
प्रभु के बचन सीस धरि सीता।[६] (अधिकरण)
फिरहिं भवन प्रिय आसिस पाई। (')
राउर नगर कोलाहल होई। ( ) जानि सगुन मन हरषि अति।[९] (अधिकरण)
हरषि नगर निसान बहु बाजे।[१०] ( ) प्रबसि नगर कीज सब काजा।[११] (')

तुलसी ने सर्वाधिक प्रयोग सम्बन्ध रूपो का किया है। तत्पुरुष समास की सम्भावना क कारण सम्ब ध कारक क निर्विभक्तिक रूपो के स्पष्टीकरण म दुरुहता उत्पन्न हो गई है—
देखी नयन स्याम मृदगाता।[१२] (सम्ब घ) राम छवि नि-ति।[१३] (सम्ब घ)

१—रा० बा० १ १२१, २—रा० उ० १२२।९ ३—रा० बा० २४।३, ४—रा० अयो० ४।७ ५—रा० अयो० ६।८ ६—रा० —० १०९।१ ७—रा० अयो० १६।२ ८—रा० अयो० रा० अयो ९—रा० उ० १।२४ १०—रा उ० ९।८ ११—रा० — ५।१ १२—रा० ल० १०८।२ १३—जा० म० ९५।१।

राम कृपा नासहि ।[१] (सम्बंध)
गगा जल कर लसत ।[२] (")
पुर लोग राम तन चितवहि ।[३] (")
बहुवचन—चरन बदि पायोधि सिधावा । (कर्म)
हृदय सुमिरि सब सिद्ध बोलाई ।[४] ( )
दइ जनक तीनिहुँ कुअँरि कुअँर ।[५] (")
मनिगन बसन बिमान भराया । (करण)
मरिगे रतन पदारथ सूप हजार हो ।[६] ( )
चहुँ दिसि तिन्हके उपवन सुंदर ।[७] (अधिकरण)

परसग रहित प्रयोग (संश्लिष्ट रूप)—

(१) एकवचन—राजहि तुम्ह पर प्रेम बिसषी ।[८] (=राजा का) कर्ता
अधहि लोचन लाभु सोहावा ।[९] (=अध को) कर्ता
धारिहि बात पितहि दुख भारी ।[१०] *(=पिता को) कर्ता*
चोरहि चाँदनि राति न भावा ।[११] (कर्ता)
देखत रामहि भए सुखारे ।[१२] (कर्म)
तब लछिमन सीतहि लै आए ।[१३] ( )
कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी ।[१४] (')
रानिहि जानि ससोच ।[१५] (')
हृदय आउ सिय राम धरे धनु माथहिं ।[१६] ( )
संभु समय तेहि रामहि देखा ।[१७] (')
सोइ सिव काग भुसुंडहि दीन्हा ।[१८] ( )
विधिहि मनाव राउ मन माही ।[१९] ( )
गिरिजहि लगे हमार जिवनु ।[२०] ( )
[illegible] गयउ रामहि ।[२१] ( )

१—रा० उ० १२२।९ २—रा० ल० न० ३।३ ३—जा० म ८०।१ ४—रा० सु० ६०।१६ ५—रा० बा० ३०७।१/ जा० म० १७१। ७—रा० ल ११७।६ ८—रा० ल० न १६।४ ९—रा० अ० २९।८, १०—रा० बा० ३५०।,४, ११—रा० बा० ०३।२ १२—रा० अयो ४२।११, १ —रा० अयो० ११।१४ १४—रा० बा० ३४८।१ १५—रा० अर० २१।२, १६—रा० अयो० २३।१ १७—जा० म० ७५।२ १८—पा० म० १।२ १९—रा० बा० ५०।१ २०—रा० बा० ३०।७ २१—रा० अयो० ४८।११ २२—पा म १८।२ २३—जा० म० ८।१ ।

	सीता कह सुधि प्रभुहि सुनावी ।[1]	(कर्म)
	तौ काउ नपहि न दत ।[2]	(सम्प्रदान)
	समुहि कीन्ह प्रणाम ।[3]	(")
	सासु ह सर्वनि मिली बदेही ।[4]	(')
	जात सराहत मनहि ।[5]	(अधिकरण)
	रामु मनहि मुसकाई ।[6]	(')
	निज काजहि लागि ।[7]	(")
	नृपहि मोदु सुनि सचिव सुभाषा ।[8]	(सम्बन्ध)
	रामहि तिलक कालि जो होई ।[9]	( )
	तीनि काल को ग्यान कौसिकहि ।[10]	(सम्बन्ध)
	उमहि नाम तब भयउ अपरना ।[11]	(')
बहुवचन--	आजु सरन्ह मोहि दीन्ह अहारा ।[12]	(कर्ता)
	कपिन्ह पट भूषन पाए ।[13]	( )
	पुरवासिन्ह तब राम जुहारे ।[14]	( )
	कलि के कबिन्ह करउँ परनामा ।[15]	(कर्म)
	कपिन्ह देखावत नगर मनाहर ।[16]	( )
	नारि परस्पर कहहिं दखि दोउ भाइन्ह ।[17]	( )
	बिधु महि पूरि मयूखन्हि रबि ।[18]	(करण)
	बनाइ बहु भर्जान्ह सचे ।[19]	( )
	विप्रन्ह दान विविध विध दीन्हे ।[20]	(सम्प्रदान)
	बठे राम द्विजन्ह सिर नाई ।[21]	( )
	कानन्हि कनक फूल छवि देही ।[22]	(अधिकरण)
	कमल करन्हि लिए मातु ।[23]	( )
	कटि निषग बर कमलन्हि धर धनु सायक ।[24]	( )
	मनिन्ह मति अति भोर ।[25]	(सम्बन्ध)
	फनिकन्ह जनु सिर मनि उरगोई ।[26]	( )

१–रा० सु० २।८ २-जा० म० ७५।२ ३–रा० ल० ११९।२८ ४–रा० उ० ७।१ ५ रा० बा० २६०।२३ ६–रा० बा० ३५०।२४ ७–रा० अयो० ६।१० ८–रा० अयो ५।१३ ९–रा० अयो० १९।११ १०—जा० म० ७७।१ ११—रा० बा० ७४।१४ १२–रा० सु० २।५ १३–रा० लं० ११८।१९ १४–रा० उ० ३।७, १५–रा० बा० १४।७ १६–रा० उ० ४।२ १७-जा० म० ५६।१ १८—रा० उ [illegible] १९– [illegible] २०–रा० उ० १२।१३ २१–रा० उ० [illegible] —रा० बा० ९।३ २३—रा० बा० [illegible] १८ [illegible] ५८।१, [illegible] बा ८।२४ २६–रा० लं० ८।२० ।

४ ४ २ २ परसग सहित प्रयोग—एकवचन—

को —	चित चहत चद्र ललाम को[१] ।	(कम)
	गौरिहिं निहोरत घाम को[२] ।	(„)
कह —	देइ सुअरघ राम कहँ लेइ बैठाइ हो[३] ।	(,)
	बाल वद्ध कहँ सग न लावहि[४] ।	(„)
	तेहि सर हतौ मूढ कहँ काली[५] ।	(„)
कहु —	जब सुग्रीव राम कहु देखा[६] ।	(„)
	जब लगि भजन न राम कहु[७] ।	(„)
सन —	सठ सन विनय कुटिल सन प्रीती[८] ।	(करण)
	जनक सुता सन बोलेउ[९] ।	(„)
	बडे भाग अउण सम सन होय[१०] ।	(„)
ते —	फूल बान ते मनसिज वेधत आनि[११] ।	(„)
तें —	सगतें जती कुमन्त्र तें राजा[१२] ।	(„)
	माया तें असि रचि नहिं जोई[१३] ।	(„)
से —	ग्यान अनल मन कसे अनलें से[१४] ।	(„)
सो —	भटत भुज भरि भाइ भरतें सो[१५] ।	(„)
कहँ —	तिलक विभीषनें कहँ पुनि सारयो[१६] ।	(सम्प्रदान)
	सीता सहित अवध कहुँ[१७] ।	(„)
	मुनि निज आश्रम कहु पग धारा[१८]	(„)
हित —	स्वारथ परमारथ हित एक उपाय[१९] ।	(„)
हेतु —	घम हतु अवतरेहु गोसाई[२०] ।	(,)
लागि—	हित लागि कहौं[२१] ।	(„)
महँ —	मन महँ बहुत भाँति सुख मानी[२२] ।	(अधिकरण)
	तुलसी जनि धरहु गग मह साँच[२३] ।	(,)

१—पा० म० छ० ८।२ २—पा० म० छ० ४।१, —रा० ल० न० ४।२, ४—रा० सु० १।७ ५—रा० कि० १८।१०, ६—रा० कि० ४।११ ७—रा० सु० ४६।१९ ८—रा० सु० ५८।३ ९—रा० अर० २३।१९ १०—बरव रा० ६३।२ ११—बरवै रा० ४०।२ १२—रा० अर २१।१९, १३—रा० सुं० १३।६ १४—रा० अयो० १७।१४ १५—रा० अयो० ३१७।७ १६—रा० ल० ११८।८ १७—रा० ल० १२०। ९ १८—रा० सु० ५७।१४, १९—बरव रा० ४५।? २०—रा० कि० । १—पा० म छ० ६।८, २२—रा० उ० २।३ २३—बरव रा० २४।१

महु	—	मनि महु प्रगट भूमि कह पाई[1] ।	(अधिकरण)
		सीता जल जलनिधि महुँ जाई[2] ।	,
माहि—माही		नप समथिअ मन माहि[3] ।	,
(छन्दानुरोध से)		दामिनि दमक रह घन माही ।	
		नहि दरिद्र सम दुख जग माही[5] ।	„
महि	—	रन महि परे निसाचर मार[6] ।	
माप	—	सभा माप पर करि[7] ।	,
		मुनि मग माप अचल होइ बैठा[8] ।	,
पर	—	प्रभु तरुवर कपि डार पर[9] ।	„
		मुख पर कहि विधि करौं बड़ाई[10] ।	
पहि—पाही		सती समीप महेस पहि[11] ।	
(छन्दानुरोध स)		मम गए कुभज रिषि पाही[12] ।	,
सो	—	सुनि सिव सो मुखवचन[13] ।	,
त – तें	—	निरगुन त यह नाम बड[14] ।	(अपादान)
		तुम्ह सहित गिरि तें गिरी[15] ।	,
		कहेउ नाम बड ब्रह्म राम तें[16] ।	
-क	—	आज अवधपुर आनँद नहछू रामक हो[17] ।	(सम्बन्ध)
		मित्रक दुख रज मरु समाना[18] ।	
की	—	तुलसी कथा रघुनाथ की[19] ।	
		फिरि फिरि चितव राम की ओरा[20] ।	,
कइ	—	सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौ[21] ।	
		भामिनि भयउ दूध कइ माखी[22]।	
क	—	देखहु आपनि मूरति सिय क छाँह[23] ।	,
		दुलह कै महतारी[24] ।	„

१—रा० ल० १२।१० २—रा० कि० १४।१५ ३—रा० अयो० २३।२०, ४—रा० कि० १४।३, ५—रा० उ १२१।२६ ६—रा० लं० ११९।२० ७—रा० ल ४।१६ ८—रा० अर० १०।२९ ९—रा० बा० २९।१७ १०—रा० उ० १६।८, ११—रा० बा० ५३।१९ १२—रा० बा० ४८।२ १३—रा० उ० ५।१७ १४—रा० बा २३।१८ १५—रा० बा० ९६।२१ १६—रा० बा० २३।१९ १८—रा० लं० न० १३।१ १८—रा० कि० ७।४ १९—रा० बा० १०।२२ २०—रा० उ० १८।४, २१—रा० ल० १२।१७ २२—रा० अयो० १९।१४, २३—बरव रा० १८।२ २४—रा० लं० न० १९।१

कर	—	रिपु कर रूप सकल तैं गावा[1] ।	(सम्बन्ध)
केरि-केरी	—	सीता केरि करी रखबारी[2] ।	"
(छन्दानुरोध से)		चरि कैकइ केरि[3] ।	"
		पुनि कहु खबरि विभीषन केरी[4] ।	"
		सोइ करतूति विभीषन केरी[5] ।	"
		सो महिमा समुझत प्रभु केरी[6] ।	"
		सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी[7] ।	"
बहुवचन—			
कहँ	—	बाल वृद्ध कहँ संग न लावहिं[8] ।	(कर्म)
कहुँ	—	जब सुग्रीव सबनि कहुँ देखा[9] ।	"
		यहि कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा[10] ।	
सन	—	कहि प्रिय बचन सखिन्ह सन[11] ।	(करण)
		कृपा सिंधु सोइ कपिन्ह सन[12] ।	"
		सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा[13] ।	"
तें	—	जप जोग धर्म समूह तें[14] ।	"
मह	—	सब इन्द्रिन्ह महँ इन्द्र बिलोचनि लेखहिं[15] ।	(अधिकरण)
		पवन महँ प्रन त्यागे[16] ।	"
		जोग भोग मह राखेउ गोईं[17] ।	"
माही	—	सुर नर असुर नाग खग माही[18] ।	"
पर	—	बरषि सुमन लरिकन पर छोहू[19] ।	"
हेतु	—	सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए[20] ।	(सम्प्रदान)
हित	—	बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार[21] ।	"
कहँ	—	दान अनेक दुजन्ह कहँ दीन्हे[22] ।	"
के	—	सिय रघुबर के भए उनीद नैन[4] ।	(सम्बन्ध)

१–रा० लं० १६।७ २–रा० अर० २७।१७ ३–रा० अयो० १२।१८ ४–रा० सु० ५३।७ ५–रा० बा० २९।१३ ६–रा० उ० २२।५ ७–रा० अयो० ७।१३ ८–रा० सु० १।७ ९–रा० कि० ४।११, १०–रा० सु० १।७ ११–जा० म० ७३।१ १२–रा० लं० ११७।१९ १३–रा० लं० १२०।५ १४–रा० अर० ६।३, १५–जा० म० १३३।२ १६–जा० म० ७०।१, १८–रा० बा० १७।३ १८–रा० अर० २३।१, १९ रा० बा० ३६०।१३ २०–रा० सु० ५९।६, २१–रा० बा० ९२।४, २२–रा० लं० २४।२, ४–बरव रा० १९।२

क — कह तपसिन्ह क बात बहोरी।[1] (सम्बन्ध)
कर — कोटि जनम कर पातक।[2]
केर — तन्ह कर मुनिन्ह केर मताया।[3]
सुन्त असन्तन केर सुभाऊ।[4]

४.२३ विभक्तियाँ—(१) मूल एकवचन—

—उ यत्र-तत्र केवल अकारान्त पुल्लिंग शब्दों में —अ —उ में परिवर्तित मिलता है। अन्य स्वरान्त शब्द अपने प्रातिपदिक रूप में ही मूल कारक बन कर प्रयुक्त होते हैं, यथा—

कर्ता (एक वचन)—

—उ राम सभा रघुराजु विराजा।[5] (कर्ता)
धाए रामु सरासन साजी।[6]
यहाँ अध निसि रावनु आगा।[7]
कन्हइ न मरमु महान।[8]
सकट परेउ नरमु।[9]

कहीं कहीं कर्ता मूल एकवचन में अनुनासिकता का योग मिलता है, यथा—

"— कौसल्याँ अस बाहु बिचारा।[10]
चोक चाह सुमित्राँ पूरी।[11]
रायँ कौसिकहि पूजि।[12]
तब सीताँ पूजो सुरसरी।[13]
राम काजु सुग्रीवँ बिसारा।[14]
मैनाँ सुभ आरती उतारी।[15]

तुलसी ग्रन्थ में प्रयुक्त इस प्रकार की अनुनासिकता जिसका व्यवहार कर्ता कारक एवं अन्य कारकों के साथ प्राप्त है, के सम्बन्ध में दो बातों पर विचार किया जा सकता है—

(१) तुलसी ने अपने सभी ग्रन्थों (अवधी तथा ब्रज) के अन्तर्गत इस प्रकार की अनुनासिकता का प्रयोग किया है जो केवल एक वचन संज्ञा रूपों में ही मिलते हैं। इस अनुनासिकता को विभक्ति रूप में स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रकार

१—रा० सु० ५३।१८ २—रा० लं० न० १।४ ३—रा० ~० १ ०।७ ४—रा० उ० ३९।१ ५—रा० बा० २।२ ६—रा० अर० २७।२० ७—रा० लं० १००।१३ ८—रा० अयो० ३८।१८ ९—रा० अयो० ४०।१८ १०—रा० अयो० ४९।१५ ११—रा० अयो० ८।८ १२—जा० मं० १२३।१ १३—रा० लं० १२१।१५ १४—रा० कि० १९।२ १५—रा० बा० ९८।३ ।

के कथन की पुष्टि इस प्रकार से भी हो जाती है कि तुलसी के पूववर्ती कवियो (जायसी आदि) ने भी अनुनासिकता का प्रयोग सभी कारको मे किया है। ऐसा लगता है कि यह प्रवत्ति तुलसी के समय तक चल रही थी। इस अनुनासिकता के विभक्तिरूप मे स्वीकार करने की बात डा० देवकीनदन श्रीवास्तव के इस कथन से भी पष्ट सस्कृत सज्ञाओ के कतिपय विभक्ति रूपो के साथ प्रयुक्त होने वाले अनुस्वार का अवशेष है।[१]

(२) ये अनुनासिक रूप वैकल्पिक रूप मे स्वीकार किए जा सकते हैं क्योंकि इस प्रकार की अनुनासिकता केवल गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित 'रामचरित मानस' म ही प्रयुक्त हुई है। 'मानस' के अन्य सस्करणो म इस प्रकार की अनुनासिकता का पूण अभाव है। उच्चारण भिन्नि के अन्तर से भी कभी कभी शब्दो मे अनायास ही अनुनासिकता आ जाती है। यदि एक व्यक्ति 'सुमित्रा' बोलता है तो अन्य 'सुमित्राँ' के रूप म भी उच्चारण कर सकता है दूसरी बात यह भी है कि तुलसी काव्य मे एक ही सज्ञा रूप अनुनासिकता सहित एव अनुनासिकता रहित दोनो ही रूपो म प्रयुक्त हैं। जिसके आधार पर इन्हें वैकल्पिक रूप मान सकते हैं।

(२) मूल बहुवचन--

—न्ह —न्हि, नि, —ए विभक्तियो के योग से रूप सरचना होती ह—

कर्ता (बहुवचन)—

समाचार सब सखिन्ह जाय घर घर कहे।[२] सकल द्विजन्ह मिलि नायऊ माथा।[३]
आज सुरन्ह मिल दीन्ह अहारा।[४] पुनि सब विप्रन्ह आयसु दीन्हा।[५]
मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई।[६] भालु कपिन्ह तब भूपन पाए।

—न्हि-बदि मागधन्हि गुन गुन गाए।[७] बहु रोग वियोगिन्हि लोग हए।[८]

—नि—सृष्टि हतु सब ग्रथनि गाए।[९]

आकारान्त सज्ञा—

—ए—केवल आकारान्त सज्ञा रूपो म इसका योग देखा जाता है यथा—
थार महुँ जानिहहिं सयाने।[१०] विपुल बाजने बाजन लागे।[११]

उपर्युक्त मूल बहुवचन रूपो के अतिरिक्त शून्य ( ) विभक्ति प्रत्यय के योग से निर्मित बहुवचन रूप भी परिगणित किए जा सकते हैं यथा—

---

१ - डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव तुलसी की भाषा प० ४० २-बा० म० २०।१
३-रा० उ० ४।९ ४-रा० सु० २।४, ५-रा० उ० १२।१० ६-रा० सु० १ ।१९
७-रा० उ० ११८।१९ ८-रा० बा० ३६८।१०, ९-रा० उ० १४।१७ १०-रा०
सु० ४०।६, ११-रा० बा० १।११ १२-रा० ब० ३४८।४,

—० भूप निसाथ प्रत जाग ए[१] मार्जि म ।[१]
गिरगि मनर मर नारि बिहँसि मुग माहहिं
नाथहिं मनन बिमार ।[१] कल्यान मुनि नर पार ह हो ।
लोम अधिक मुग मोवहि ता ।[१] मलिन रतन[?] म ।[१]

मूल बहुवचन म स्त्री एव प० माना हो प्रकार म मना स्त्रो म अरव स्वर के अनुनासिकीकरण की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है यथा—

गुनम मय मारि मार्थ प्रानी । गनी गजामिन संग गौरि सुठि माहनि ।
मरन जनना रहि या ।[१] उठा नारी हँसि मिन कहि ।[१]

नियक एकवचन—मम
—हि—ही हृदय आनि निर राम पर धनु मायहि ।[११]
(छन्दानुरोध म) बिनव पुरी मुनिर्मतहि सिरिरि गतनाथहि ।[१२]
कुलगुरु जानिकिहि न आवउ ।[१] बिस्वहि राम बिधानहि नाथ लगाय ।[१]
रामहि मालि कहउ का राऊ ।[१] रानिहि जाहि मनाय गनी समुनावे ।[११]
गोद लिय कौसल्या बैठी रामहि हू
पितहि बुलाइ कहहु बलि सोई ।[१] (कैकेई)
विधिहि मनाय राम मन माहीं ।[११] हँसहि नागर कर जानकही ।[१]
—हि मैंटि उमहि गिरिराज ।[११]
चली लिवाइ जानकिहि मा अन मावत ।[११]
—ए—ए अयत्न उ हरणो म अकारान्त पल्लिग धार्तों म अ का लोप होकर ए-एँ का योग मिलता है
चोरें चाह सुमित्रा पुरी ।[११]
चोरें पूर चार ।[१] पठए भरत भूप ननिअउरें ।[११]

करण-हि प्रभु मिल्त अनजहि ।[११]
तो माउ नृपहिन्ह दन दाम परिमाननि ।[१]

१—पा० म० छ० ७।१ २—गा म० ५७। ३—पा० म० ५०।२, ४—रा० ल० म० २०।४ ५ रा० ल० म० १७।८ ६—गी ल० न० १६।४ ७—रा० अर० १६।१० ८—पा० म० ।२४।१ ९—रा० उ० ।५ १०—बरव रा० १९।१ ११—पा म० ११२, १२—पा० म० ११२ १३—जा० म० छ० १ ।३ १४—पा० म० ३१।२ १५—रा० अया० ९।६ १६—जा० म० ७५। १७—रा० ल० न० ९।३ १८—रा० अया ४३।१ १९—रा० अयो ८८।११ २०—रा०बा० ।३ २१—पा० म० १४५।१ २२—जा० म० १०६।२, २३—रा० अयो० ८।५ २४—२५ जा० म० १८ ।१ २६—रा० अया० १८।३ २६—रा० उ० ८।२१ २७—जा० म० ७४।२

—हि लखनहिं भेंटि प्रनामु कर ।[1] रामहि मिलत ककई ।[2]
तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे ।[3] राम कृपा नासहि सब रोगा[4]

सम्प्रदान हि सभुहि कीन्ह प्रणाम ।[5]
भयउ कौसिल्यहि विधि अति दाहिन ।[6]
राजु देहु सुग्रीवहि जाइ ।[7]
होइहि सतत पियहि पियारी ।[8] गुरहिं सुनायउ जाइ ।

—हिं धनु चढाई कौतुकहिं कान लगि तानिउ ।[9]

सम्बन्ध—

—हि तीन काल को ग्यान कौसिकहि करतल ।[10]
नपहि मोदु सुनि सचिव सुभाषा ।[11] देखि उमहि तप खीन सरीरा ।[12]
सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौ ।[13] उमहि नाम तब भयउ उपरना ।[14]

अधिकरण—

—हि सुनि मुनि सुजस मनहि मन राऊ ।[15] निज काजहि लागा ।[1]
—हिं राम मनहिं मुसकाहिं ।[16] बातहिं बात करषि बढि आई ।[17]
-ए-ए + हुँ (बलात्मक शब्दाथ)
हिएँ हेरि हठ तजहु ।[1] पूरि रहा सपनेहु अघ नाहीं ।[18]
सपनेहुँ तो पर कोपु न मोही ।[19]
जानि परं सिय हियरे जब कुम्हिलाइ ।[20]
उर धरि धीर धीरजु गयउ दुआरे ।[21]

यत्र तत्र अनुनासिकता का प्रयोग करके भी अधिकरण कारक स्पष्ट किया गया है—

सभा आइ मंत्रि ह तेहि बूझा ।[22] करहु हरषि हिय रामहि टीका ।[23]
मारे जियँ भरोस दढ नाहीं ।[1]

१-रा० अयो० ३१८।१० २-रा० उ० ६।२९ ३-रा० य १४।२१ ४-रा० ० ११२।१ ५-रा० बा० १ ९।२६ ६-रा० अयो० १४।५ ७-रा० कि० ११।१८, ८-रा० बा० ६७।६, ९-रा० अयो० २।२०, १०-जा० म० १०३।२ ११-जा म० ७७।१ १२-रा० अयो० ५।१३, १३-रा० सु० ४।१३ १४ रा० सु० २।८ १५-रा० बा० ७८।१४ १६-रा बा ३६।३ १७ रा० बो० ६।१० १८ रा० बा० ४५०।२४ १ -रा० ल० १८।७ २०-पा० म० ५६।१, २१-रा० लं० ४१।६ २२-रा० अयो० १४।१ २३-बरवै-रा० १२।२ २४-रा० अयो० ३९।७ २५-रा० उ० ८।२५ २६-रा० अयो० ५।६ २७-रा० अर० १०।११

विषय बहुवचन —रम—
— ह्—न्हि— ही (छन्दानराध स) तथा—नि
कलिक बनि ह बन्हु परिनामा ।[1] बपिह् बाँधि दा दुउ दुग नाना ।[2]
नारि परसपर मर्हि दनि दोउ भाइन्ह ।[3]
पर भूमि निसिचरन्ह ज मार ।
आग्र पुनि पनि भाइ ह् नैना ।[4] गिरि बैठे कपिन्ह निहारी ।[5]
मुन्हि बध ह् सागु न गाई ।[6] रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि ।[6]
चरनन्हि लगि हरषु अति तही ।
—न्हि पर अपवादविवाद विदूषित बानिहि ।[8]
पावन करन् सा गाइ भवस नबानिहि ।[11]
कुलगुरु जानकिहि न आयऊ ।[11]
हंसहि बक दादुर चातकही ।[11] मोहि जान अति अभिमान बस प्रभु,
कहउ राखु सरीरहा ।[1] श्रम कवन हठि सठ काटि सुरतरु
बारि बरहि बबूरही ।[1] हंसहि मलिन खल विमल बतकही ।[11]
—ए हाट बाट चौहट पुर द्वारें ।[1]
करण—
—नि सुषमा धरि नवल जन रूप फलनि फरी ।[1]
दान बरम गुननि भरे ।[1]
न—न्हि मात न भवनि मिली बदहा ।
नन ह् करति गुमान ।[11] दांत ह् कटि त्यान ह मीजि ।[11]
पूछसि लाग ह् महँ ।[11] बिधुमहि पूरि मयसन्हि रचि ।[1]
बनाइ बहु बजन्हि सबे ।[11] बिनु पवन्हि त्म चहहि उड़ाना ।[11]
सम्प्रदान—
—न्ह विप्रन्ह दान विविधि विधि दीन्हे ।[1]

१-रा० बा० १४१७ २-रा० सु० ५४१७ ३-आ० म० ५६११ ४-रा० म० ५०१ ५-रा० बा० ३५६११ ६-रा० अर० २९१४९ ■ रा० बा० ३५८। ८-रा मु० ८१४८ ९-रा० उ० ७१२ १० पा० म० ६१२ ११-पा० म० ६१२ १२-आ० म० ९०११ १३-रा० बा० ९१३ १४-रा० कि० १०११६ १५-रा० कि० १०११५ १ -रा० बा० ९१६ १७-रा बा० ३६६१८ १८-पा० म० १२५१२ १९-रा० ० १ १२ २०-रा० उ० ७१ २१-रा० ल न० । १४ २२-रा ल ८११२२ २३-रा० यो० १३१३ २४-रा० उ० २ ११२ -रा० उ० २८१२४ -रा० बा ८८११० २७-रा० उ० १२१ ३

मग लोगन्ह सुख देत ।[१] बैठे राम द्विजन्ह सिर नाई ।[२]

- न्हि बकसीस जाचकन्हि दीन्हा ।[३]

प्रभु सुभाउ परिजनन्हि सुनावा ।[४]

—न्हि आनि देहि नल नीलहि ।[५]

—न—नि राजन दीन्हे हाथी रानिन्ह हार हो ।[६]

सम्बन्ध—

—न्ह मनिन्ह मति अति थोरि ।[७] फनिकन्ह जनु सिर मनि उरगोई ।[८]

मोतिन्ह झालरि ।[९] बधुन्ह सहित सुत चारिउ ।[१०]

अधिकरण—

न्हि चले सकल चरनन्हि सिर नाई ।[११]

कमल करन्हि लिए हाथ ।[१२] कर कमलन्हि धरे धनु सायक ।[१३]

न नि रिपि पगन मातु मेलत भए ।[१४] कर कमलनि जयमाल जानकिहि ।[१५]

४४ १ परसर्ग—

संज्ञा (अथवा सर्वनाम) तिर्यक रूपों के साथ विविध प्रकार के परसर्गों के प्रयोग से अनेक प्रकार के कारक सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है। विविध कारक सम्बन्धों को स्पष्ट करने की यह विशिष्ट विधा है। परसर्गों के पूर्व संज्ञाओं के निर्विभक्ति और सविभक्तिक दोनों ही प्रकार के रूपों का प्रयोग हुआ है। केवल सम्बन्ध कारकीय आकारान्त परसर्गों में लिंग वचन का प्रभाव देखा जाता है।

अनुसंधित्सु ने अवधी की रचनाओं में परसर्गों के प्रयोग के सम्बन्ध में परीक्षण किया और उससे जो परिणाम हुए वे इस प्रकार हैं—

'रामचरित मानस' के अन्तर्गत 'अयोध्याकाण्ड' की प्रथम चार सौ पंक्तियों का परीक्षण किया जिनमें संज्ञाओं का प्रयोग ४२८ बार हुआ है। प्रयुक्त परसर्गों की संख्या १८ है जिनमें १ परसर्गों का प्रयोग संज्ञा के साथ तथा ६ परसर्गों का प्रयोग सर्वनाम के साथ हुआ है। सम्पूर्ण प्रयुक्त परसर्गों में केवल एक परसर्ग का प्रयोग सविभक्तिक रूप के साथ प्राप्त है अन्य सभी परसर्ग निर्विभक्तिक रूपों के साथ प्रयुक्त हुए हैं।

पार्वती मंगल की प्रथम दो सौ पंक्तियों में संज्ञाओं का प्रयोग दो सौ ल्स

१—जा० म० १८।२ २—रा० उ० १२।४ ३ रा० बा० ३०८।६ ४—रा० उ० २०।१० ५—रा० ल० ११२३, ६—रा० ल० १६।३ ७—रा० ल० ८।२१ ८—रा० बा० ३१८।८ ९—रा० ल० न० ३।२ १०—जा० म० १८४।७ ११—रा० कि० १९।१४ १२—रा० बा० ३४६।१८ १३—जा० म० ५४।१ १४—पा० म० १।११ १५—जा० म० १०७।१

बार किया गया है । सम्पूर्ण प्रयुक्त परसर्गों की संख्या इक्कीस है जिनमें पन्द्रह परसर्ग संज्ञा के साथ तथा छः परसर्गों का प्रयोग सर्वनाम के साथ हुआ है । इन संज्ञाओं तथा सर्वनामों के साथ प्रयुक्त परसर्गों में तीन परसर्ग सविभक्तिक एवं अठारह निर्विभक्तिक रूपों के साथ प्रयुक्त हुए हैं ।

सम्पूर्ण रामलला नहछू को परीक्षण के लिए लिया गया है। जिसमें प्रयुक्त संज्ञाओं की संख्या १४१ है। प्रयुक्त परसर्गों की संख्या २३ है जिनमें बीस परसर्ग संज्ञा के साथ तथा तीन परसर्ग सर्वनाम के साथ प्रयुक्त हुए हैं । सभी परसर्ग निर्विभक्तिक रूपों के साथ मिलते हैं ।

परीक्षण के लिए सम्पूर्ण 'बरवै रामायण' की सामग्री को लिया गया है जिनमें प्रयुक्त संज्ञाएँ १९४ हैं । प्रयुक्त परसर्ग ३१ हैं जिनमें २४ परसर्ग संज्ञा के साथ एवं ७ परसर्ग सर्वनाम के साथ प्रयुक्त हुए हैं । सभी परसर्ग निर्विभक्तिक रूपों के साथ प्रयुक्त हैं ।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि आलोच्य भाषा में परसर्गों का प्रयोग कम हुआ है । रामचरित मानस और पार्वती मंगल की तुलना में 'रामलला नहछू' और 'बरवै रामायण' में परसर्गों का प्रयोग अधिक है । सविभक्तिक रूपों के साथ परसर्गों का प्रयोग नहीं के बराबर है । प्रायः निर्विभक्तिक रूपों के साथ ही परसर्ग प्रयुक्त हुए हैं ।

कर्ता	–	
कर्म	–	कहँ कहुँ, को
करण	–	सन से–सें, सो-सों, ते–तें
सम्प्रदान	–	कह कहुँ हित हेतु–हेतू (छन्दानुरोध से) लगि लागि–लागी (छन्दानुरोध से)
अपादान	–	ते–तें सो सन
सम्बन्ध	–	क का कइ (स्त्री०) की (स्त्री०) के–कें–क, कर, केर–केरा, केरी–केरी केरे–केरें
अधिकरण	–	मह – महँ – माह – मँहि माँहि माँही माझ, मझारी पर, पइ, पहि–पाहीं

कर्म —

कहँ	-	देहि अरघ राम कहँ बैठाइ हो ।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
		तेहि सर हतौ मूढ कह काली ।[2]
		बाल वृद्ध कह संग न लावहिं ।[3]

१– रा० ल० न० ४।३, २– रा० कि० १८।१०, ३– रा० ल० ३।१४

मारेउ राउ ससिहु कहँ कोई ।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

कहुँ — रासु राम कहुँ जेहि तेहि भाँती ।[2] " "

जब लगि भजन न राम कहुँ ।[3] " "

जब सुग्रीव राम कहुँ देखा ।[4] " "

जब विष्णु भगत कहुँ देखि ।[5] " "

को — चित चहत चद्र ललाम को ।[6] " "

गौरिहि निहारत वाम को ।[7] " "

करण — कर्म के परसर्गो की अपेक्षा करण के परसर्गों का प्रयोग कुछ अधिक हुआ है, यथा—

सन — सठ सन विनय कुटिल सन प्रीती ।[8] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

वाम देव सन कामु वाम होइ बरतेउ ।[9] " "

नाथ राम सन तजहु विरोधा ।[1] " "

बड़े भाग अनुराग राम सन होई ।[11] " "

कहि प्रिय वचन सखि ह सन रानि विसूरन ।[12] (सविभक्तिक रूप के साथ)

कृपासिंधु सोई कपि ह सन ।[13] " "

करण के अन्य परसर्गो की अपेक्षा 'सन' का प्रयोग अधिक मिलता है ।

से — ये अल्प मात्रा में प्रयुक्त है—

ज्यों अनल मन कसे कनक से ।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

सो — प्रनति सदगुन सिन्धु सो ।[14] " "

सावन सरित सिंधु रुख सूप सो फेरई ।[15] " "

भेंटत भुज भरि भाइ भरत सो ।[1] " "

स — कहेउ दडवत प्रभु स।[16] " "

करब करब बिधि स जूझा ।[17] " "

जिमि कोउ करइ गरुण स जूझा ।[1] " "

१– रा० ल० १२।११ २–रा० अयो० ३४।५, ३– रा० सु० ४६।१९ ४– रा० कि० ४।११, ५– रा० कि० १३।२० ६– पा म० छ० ४।२ ७– पा० म० छ० ४।१, ८– रा० सु० ५८।३ ९– पा० म० २६।१ १०– रा० सु० ५७।८, ११– बरव० रा० ६३।२ १२– जा० म० ७३।१, १३ रा० ल० ११७।१९ १४– रा० अयो० ३१७।१४ १५– रा० ल० २। ०, १६– पा० म० ५९।२ १७– रा० अयो० ११६।७ १८– रा० उ० १९।२१ १९– रा० ल० ८।१६ २०– रा० लं० ५१।१५ ।

ते तें का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में मिलता है किन्तु "बरवै रामायण" तथा 'राम लला नहछू' में इनका पूर्ण अभाव है यथा–

ते – मो मोहि ते बढ़ बड़ अपराधू ।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
फूल बान ते मनसिज बेधत आइ ।[2]

तें – जिमि पाखंड बिवाद तें गुप्त होहिं सद्ग्रंथ ।[3]
माया तें असि रचि नहिं जाई ।[4]
ताहि श्रम तें नहिं मारेउँ ताऊ ।[5]
जप जोग धर्म समूह तें ।[6]
मम तें सनी कमल तें राजा ।
छवि तें अधिक सिय कीरति अभिराम ।[8] (सविभक्तिक रूप के साथ)

सम्प्रदान–

कहुँ का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक मिलता है यथा–

कहँ – तिन्ह कहँ मानहु हाम रस एहूँ ।[9] (सविभक्तिक रूप के साथ)
तिलक बिभीषण कहँ पुनि सारयो ।[10] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्ह ।[11] (सविभक्तिक रूप के साथ)

कहु – भए सागर कहु धरे ।[11] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
मुनि निज आश्रम कहुँ पग धारा ।[12]
तहि अंगद कहुँ लात उठाई ।[13]
सीता हरिन अवध कहु ।[14]
नरतनु भव बारिधि कहुँ बेरो ।[15]

हित – अत्यल्प प्राप्य हैं यथा–
स्वारथ परमारथ हित एक उपाय ।[17]

हेतु-हेतू – सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ।[18]
(छन्दानुरोध से) सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए ।[19]
सेतु हेतु अवतरेउ गोसाईं ।[20]

१– रा० अयो० ४२।१४ २– बरवै रा० ४०।२ ३– रा० कि० १४।१९ ४– रा० सु० १३।६ ५– रा० कि० ८।१० ६– रा० अर० ६।१३ ७– रा० अर० २१।१९ ८– बरवै रा० ३४।१ ९– रा० बा० ९।६ १०– रा० लं० ११८।८, ११– रा० उ० २४।२ १२ रा० उ० ८।१४ १३– रा० सु० ५७।२४ १४– रा० लं० १८।९ १५– रा० लं० १२०।१९ १६– रा० उ० ४४।१३ १७– बरवै रा० ४५।१ १८– रा० सु० ५९।६ १९– रा०

तेहि सरीर हर हेतु अरम्भउ बड़ तपु ।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
सबहि बनाए मगल हेतु ।[2] " "

लगि – बर दुलहिनि लगि जनक अपनपन खोइहि ।[3]

लागि–लागी – इस प्रकार के परसग "बरवै रामायण" तथा 'राम लला नहछू" में अप्राप्य हैं। 'मानस' में सरल सुलभ हैं, यथा—
(छदानुरोध से)
जो बर लागि करहु तपु तो लरिकाइअ ।[4] (निर्विभक्ति रूप के साथ)
हितलागि कहौं सुभाय सो बड़ विषम बैरी रावरो ।[5] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
तब हित लगि रहहु दीन हित लागी ।[6] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

अपादान—

इसके परसग करण कारक के परसर्गों जैसे ही हैं केवल व्याकरणिक अर्थ की दृष्टि से भिन्न हैं। इस प्रकार के परसर्गों में 'ते' तथा 'तें' का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है, यथा—

ते – प्रीतिबिनु मद ते गुनी । (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
उलटा जपत कोल ते भए रिषि राउ ।[7] " "
एहि सुख ते सत कोटि गुन ।[8] " "

तें – प्रान तें अधिक राम प्रिय मोरे ।[9] " "
घर तें खेलन मनहुँ अबहि आइ उठि ।[10] " "
उभय अगम जुग नाम तें ।[11] " "
ब्रह्म राम तें नाम बड़ ।[12] " "

सो – अत्यल्प उपलब्ध है, यथा—
सुनु सिवा सो सुख बचन ।[13] " "

सन – सकल रिषि ह सन हाइ असीसा ।[14] (सविभक्तिक रूप के साथ)

सम्बन्ध—

अनुपात की दृष्टि से 'क' परसग का प्रयोग अन्यों की अपेक्षा रामलला नहछू में अधिक प्राप्त है। वस्तुतः यह विभक्ति की भाँति संश्लिष्ट हुआ है

क – आज अवधपुर नहछू आनद रामक हो ।[15]

१–पा० म० २९।२ २–रा० उ० ९।४ ३–जा० म० ५८।२ ४–पा० म० ४६।१ ५–पा० म० छ० ६।४ ६–रा० अर० ८।११ ७–रा० अर० २१।२१ ८–बरवै रा० ६४।२ ९–रा० बा० ५०।१७ १०–रा० अया० १५।१५ ११–पा० म० ७१।२ १२–रा० बा० २३।२ १३–रा० बा० २५।१७, १४–रा० उ० ५।२७ १५–रा० उ० ५।२७, १६–रा० ल० न० ३।१ ।

मिलइ दस रज मद समाना ।[1]
जो यह साँची है सदा तो नीको तुलसीक ।[2]

का – यह परसग अपेक्षाकृत सबसे कम प्रयुक्त हुआ है । बरवै रामायण तथा रामलला नहछू में इसका पूर्ण अभाव है—
समाधानु करि सो सबही का ।[3] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

कइ – भामिनि भयउ दूध कइ माखी ।[4]
सीता कइ अधि प्रभुहि सुनावौ ।[5] "
उमा संत कइ इहइ बड़ाई ।[6]

की – तुलसी कथा रघुनाथ की ।[7] "
फिरि-फिरि चितव राम की ओरा ।[8] "
सीलसना ससि की रहि सब जग छाय ।[9]
जनि करहि कछु विपरीति जानत प्रीति
रीति न बात की ।[10] "
सिय मातु हरषी निरखि सुषमा अति
अलौकिक राम की ।[11] "

'की' परसग का प्रयोग यों तो अवधी की सभी रचनाओं में हुआ है पर विशेषतया 'मानस' में अधिक है ।

कै – जनक सुता के चरनन परी ।[12] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
सग लागे हैं करत सुफल मन लोचन ।[13] (सविभक्तिक रूप के साथ)
सिय रघुबर कै भए उनींदे नयन ।[14] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
कीन्ह आइ जग जननि जनम जिन्ह
के घर ।[15] (सविभक्तिक रूप के साथ)

कैं – सबकें उर अभिलाषु अस ।[16] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
रामचन्द्र कें काज ।[17]
बउरहि कें अनुराग भइउ बड़ि बाउरि ।[18] (सविभक्तिक रूप के साथ)

१–रा० कि० ७।४ २–रा० बा० २९।२४ख ३–रा० अयो० २९।९ ४–रा० अयो० १९।१४ ५–रा० सु० २।८ ६–रा० सु० ४।१३ ७–गी० बा० १०।२२ ८–रा० उ० १८।४ ९–बरवै रा० २३।१ १०–पा० म० छं० ८।१ ११–जा० म० छं० ९।३ १२–रा० सु० १।१ १३–जा० म० ३।१ १४–बरवै रा० १।२ १५–पा० म० ३।२ १६–रा० अयो० १।२१ १७–रा० उ० २३।४ १८–पा० म० ६०।२ ।

कै — यह परसर्ग भी अच्छी संख्या में प्रयुक्त हुआ है यथा—
देखहु आपनि मूरति सिय कै छाँह ।[1] (स्त्री०) (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
दुलह कै महतारि देखि मन हरषहिं ।[2] ,, ,,
देखत रुचिर वेष कै रचना ।[3] ,,
जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं ।[4] (सविभक्तिक रूप के साथ)
कहइ तपसिन्ह कै बात बहोरी ।[5] ,, ,,

तुलसी ने 'कै' की अपेक्षा 'कर' परसर्ग का अधिक प्रयोग किया है—

कर — रिपु कर रूप सकल तैं गावा ।[6] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना । ,, ,,
रामलला कर नहछू अति सुख गाइय हो ।[8]
एक जीभ कर लछिमन दूसर वेष[9] ,, ,,
कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्ह कर ।[10] ,,

केर-केरा — मन प्रसन्न सब केर ।[11] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
निसि सुंदरी केर सिंगारा ।[12] ,, ,,
तहँ करि मुनिन्ह केर संतोषा ।[13] (सविभक्तिक रूप के साथ)
केरा छंदानुरोध से प्रयुक्त हुआ है जो संख्या की दृष्टि से अत्यल्प है—
प्रभु यह गरल बंधु ससि केरा ।[14]
केरि-केरी (छंदानुरोध से) स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हैं—

केरि केरी — सीता केरि करो रखवारी ।[15] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
केरी केकइ केरि ।[16] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)
सोइ करतूति बिभीषन केरी ।[17] ,,
मुहँ भई कुमति कैकई केरी ।[18] ,,
सो महिमा समुझत प्रभु केरी ।[19] ,,
सगुन प्रतीति भेंट प्रभु केरी ।[20] ,,

१–बरवै रा० १८।२, २–रा० ल० न० १९ १ ३–रा वि० २।१२ ४–रा सु० ३।४, ५–रा० स० ४३।२५ ६–रा० ल १६।७ ७–रा० [illegible] ११ ८–रा ल न० १९।३, ९–बरवै रा० २७।२ १०–पा म० ७।१ ११–रा० उ० १।६ १२ रा० ल० १२।६ १३–रा० ल० १२०।७ १४–रा ल १२।१३, १५–रा० अर० २७।१७ १६–रा० अयो० १२।१८ १७–रा० बा० २९।३ १८–रा० अयो० २३।१०, १९–रा० उ० २२।४ २०–रा० अयो० ७।१२ ।

केरे – चरन कमल बदौ प्रभु केरे।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

केरें – ग किरीट रुसरवर केरें।[2] "

पर हित हानि लाभ जिन्ह करें।[3] (सविभक्तिक रूप के साथ)

अधिकरण—इस कोटि के परसर्गों में सर्वाधिक प्रयुक्त महँ तथा महुँ हैं। मांझ तथा मो परसर्ग अत्यल्प मात्रा में प्राप्त हैं। माँह महु तथा मध्य परसर्गों का रामलला नहछू में पूर्ण अभाव है।

महँ–महुँ – केहि गिनती महँ गिनती जस बन घास।

(निर्विभक्तिक रूप के साथ)

मुनि समूह महँ बैठ।[5]

मन महँ बहुत भाँति सुख मानी।[6] "

सब इन्द्रिन्ह महँ इन्द्रविलोचन लगहिं। (सविभक्तिक रूप के साथ)

तुलसी जनि पग धरहु गंग महँ साँच।[8] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

अब करि पइज पंच महुँ जो पन त्यागे।[9]

महु – सरिता जल जलनिधि महु जाई।[10] "

प्रचंड पावक महु जरे।[11] "

बिन काज राज समाज महु तजि लाज आपु

बिगोवहू।[12]

माह – जिमि मन माँह मनोरथ गोई।[13]

महिं – जीति समुख रामरं महिं।[14]

रन महिं पर निसाचर भार।[15]

माहि – सचराचर जग माहि।[16] "

नृप समाज मन माहि।[17] " "

छन्दानुरोध से माहि के स्थान पर माही का प्रयोग भी मिलता है यथा—

माही – जो तुम सत्त मानहु मन माही।[18] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

जिमि पर द्रोह संत मन माही।[19]

उमा राम हित सम जग माही।[20] "

१–रा० बा० १४।५ २–रा० लं० ३२।१९ ३–रा० बा० ४।३ ४–बरव रा० ५९।१ ५–रा० अर० १।१७ ६–रा० उ० ४।३ ७–जा० म० १२।२ ८–बरव रा० २४।१ ९–जा० म० ८४।१ १०–रा० कि० १६।१५ ११–रा० लं० १०९।२ १२–जा० म० छं० ८।२ १३–रा० अयो० ३१६।२ १४ रा० लं० ९।२३ १५–रा० लं० ११६।२० १६–रा० उ० २२।१८ १७–रा० अयो० ३३।२० १८–रा० म० ७।१८ १९–रा० उ० १५।२ २०–रा० कि० ४।२।१।

दामिनि दमक रह घन माही ।[1] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

मो – पर निंदक जो जग मो बिगरे ।[2]

माझ – हृति छन माझ निसाचर धारी ।[3]

जिमि दामिनि घन माझ समाही ।[4]

सभा माझ पन करि पद रोपा ।[5]

मझारी – गर्जि परे रिपु कटक मझारी ।[6]

परसग 'पर' का पावती मगल तथा जानकी मगल मे प्राय अभाव है। बरव रामायण तथा राम लला नहछू मे केवल एक एक स्थल पर प्रयुक्त हुआ है। मानस मे 'पर' का प्रयोग अधिक हुआ है—

पर – चांद सरग पर सोहत यहि अनुहारि [7] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

करहि सदा लरिकन पर छोहू ।[8] (सविभक्तिक रूप व साथ)

प्रभु तरुवर कपि डार पर ।[9] (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

सिंघासन पर त्रिभुवन साईं ।[10]

पह – काटे पह कदरी फरइ ।[11]

डाटेहि पइ नव नीच ,[12] (सविभक्तिक रूप के साथ)

पाहि-पाही – छन्दानुरोध से प्रयुक्त है।—

सती सभीत महेस पहि ।[13] (निर्विभक्तिक रूप व साथ)

मिलि दस पांच महेस पहि जाई ।[14]

कहेसि प्रनार प्रनत हित पाही ।[15]

१–रा० कि०, १४।३ २–रा० उ० १०२।२४ ३–रा० लं० ६९।२ ४–रा० लं० ६९।१२ ५–रा० लं० ३४।१६/१ ६–रा० लं० ४४।२३, ७–बरवै० रा० १७।२ ८–रा० बा० ३६०।१३ ९–रा० बा० २९।१७ १०–रा० लं० १२।१५ ११–रा० सु० ५८।१७ १२–रा० सु० ५८।२० १३–रा० बा० ५३।१९ १४–रा० अयो० २८।२, १५–रा० अर० २।२० ।

५ | सर्वनाम-रूप-रचना

५ १

आलोच्य सामग्री म सवनाम रूपो की विविधता के दर्शन होते हैं। इन रूपो के प्रातिपदिक अशो का निर्धारण कर पाना उतना सरल नहीं जितना कि सज्ञा रूपो के प्रातिपदिक अशा का निर्धारण करना है। लिंग वचन की दृष्टि से विभक्ति-प्रत्यय योजना जितनी स्पष्ट सज्ञा रूपो म है उतनी सवनाम रूपो म नहीं। प्राय सवनाम रूप (सम्बन्ध कारक रूपों को छोड कर) लिंग से अप्रभावित हैं। साथ ही बहु वचन के द्योतन के लिए विभक्ति प्रत्यय योजना न होकर पथक प्रातिपदिक अश (सवनाम) का प्रयोग है। मूलरूप (कर्त्तारूप) ही प्रातिपदिक माने जा सकते हैं। कर्त्ता को छोडकर अन्य कारक सम्बन्धो के स्पष्टीकरण के लिए तियक रूपो म विभक्तियों या परसर्गों अथवा दोनो का योग मिलता है। कारक-सम्बन्धों को स्पष्ट करने वाले विभक्ति प्रत्यय और परसग सज्ञा रूपो म प्राप्त होने वाले विभक्ति-प्रत्ययो और परसर्गों के ही समान हैं। इस दृष्टि से सवनाम रूप सज्ञा रूपो के सदश कहे जा सकते हैं। समस्त सवनामो को कायकारिता और रूप रचना की दृष्टि से इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

५ २ पुरुष वाचक सवनाम

५ २ १ उत्तम पुरुष—

निम्नलिखित रूप प्रयुक्त हैं

		एकवचन	बहुवचन
मूल रूप	—	मैं हौं।	हम।
तियक	—	मोहि–मोही मोहिं– मोहीं मा–मोहि।	हम–हमहि।
सम्बन्ध	—	मोर–मोरा मोरि–मोरी हमार–हमारा हमारि–हमारी।	मारे, मोरें।

मूल (एकवचन) — प्राय भूतकालिक कृदन्तीय क्रिया अथवा भविष्य कालिक क्रियाओ के कर्त्ता रूप में मैं का प्रयोग मिलता है—

मैं— मैं पुनि गयउ बधु सँग लागा ।[1] गगन पथ देखी मैं जाता ।[2]
मैं मनि मंद जानि नहिं पाई ।[3] रामु काजु करि फिरि मैं आवौं ।[4]

यत्र तत्र वर्तमानकालिक क्रिया के साथ भी प्रयोग मिलता है —

यह सपना मैं कहहुँ पुकारी ।[5] नाथ बालि अरु मैं दोउ भाई ।[6]

हौं — मैं के प्रयोग की अपेक्षा 'हौं' का प्रयोग कम है—

घर जाउ अपजस होउ जग जीवत विवाह न हौं करौं ।[7]

मूल(बहुवचन)—'हम' का प्रयोग बहुवचन मे प्रयुक्त क्रिया के कर्त्ता की भाँति मिलता है किन्तु किसी किसी स्थल पर एक वचन (आदरार्थ) मे भी प्रयुक्त हुआ है—

हम(बहुवचन)—दए मिलइ सीतहि साँवरो हम हरषि मगल गावही ।[8]
चरन हम अनुरागही ।[9] हम पितु बचन मानि बन आए ।[10]

एक वचन मे प्रयोग को हम कहाँ बिसरि तनु गए ।[11]
आपन चरित कहा हम गाई ।[12] अब उर राखेहु जो हम कहेऊ ।[13]

तिर्यक रूप—मोहि--मोही (छन्दानुरोध से) तथा मोंहि--मोंही (छन्दानुरोध से) तिर्यक रूपों का प्रयोग केवल कर्मकारक सम्बन्ध द्योतन के लिए व्यवहृत हुआ है। किन्तु विभिन्न परसर्गों से युक्त होकर ये रूप विभिन्न कारक सम्बन्ध प्रकट करते हैं। इनका प्रयोग परसर्ग युक्त तथा परसर्ग रहित दोनों रूपो में हुआ है—

अवगुन कवन नाथ मोहि मारा ।[14], पारबती तप प्रेम मोल मोहि दीन्हउ ।[15]
तारा बिय केहि लछिमन मोहि बताउ ।[16] अब सो मन्त्रु देहु प्रभु मोही ।[17]
भामिनि राम सपथ सत मोही ।[18] निभय चलसि न जानसि माही ।[19]

परसर्ग सहित प्रयोग—इनका प्रयोग परसर्ग रहित रूपों की अपेक्षा कम हुआ है-

मोहि पर—सपनेहुँ साँचेहुँ मोहि पर ।[20]

मोहि पाही—स्वामिनि कहेहु कथा मोहि पाही ।[21]
जा लगि तुम ऐहहु मोहि पाही ।[22]

१— रा० कि० ६।८ २—रा० कि० ५।७, ३—रा० अर० २।२४ ४—रा० सु० २।७, ५—रा० सु० ११।१३ ६—रा० कि० ६।१ ७—रा० बा० ९६।२४ ८—जा० म० छं० ७।२ ९—रा० उ० १३।४८ १०—रा० कि० २।२, ११—रा० उ० १७।२ १२—रा० कि० २।६, १३—रा० बा० ७७।१२, १४— रा० कि० ९।१२, १५—पा० म० ७३।२, १६—बरव रा० ३१।२ १७—रा० अर० १३।१५ १८—रा अयो० २६।१२, १९—रा० अर० २९।१२, २०—रा० बा० १५।२३ २१ —रा० अयो० २२।८ २२ —रा० बा० ५२।७ ।

मोहि कहँ – सब मोहि कहँ जान दृढ़ सेवा[1]।

मोहि ते – भा मोहि ते कछु बड़ अपराधू[2]।

मोहि सन – तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू[3]।

मोहि सन करहिं बिबिध बिधि क्रीडा[4]।

एकवचन तिर्यक रूप— मो का प्रयोग सब परसर्गों के साथ हुआ है—

मो पर – मो पर होहु कृपाल[5]।

मो पर करहिं सनेहु बिसेषी[6]।

मो पहिं – प्रभु मिलन अनुजहिं साहु मो पहिं[7]।

मो कहँ-कहु – भयउ तात मो कहु कल्याना[8]।

मो कहुँ होउ श्री खण्ड समाना[9]।

मो कहँ सकल भए बिपरीता[10]।

मो से-सों – मो से सठ पर करिहहिं दाया[11]।

राम सो स्वामि कुसेवक मोसो[12]।

मो सन – करिहहिं बिधि मो सन ए प्रीती[13]।

मो ते – को जग मलिन मति मोते[14]।

मो पहिं मो पहिं होहि न प्रीति उपकारा[15]।

मो सम – धन्य न मो सम आन[16]।

तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी[17]।

विकारी रूप के ब वचन हम का प्रयोग परसर्ग सहित तथा परसर्ग रहित रूप में हुआ है—

अगिनि ताप है हम कहँ संचरत आइ[18]।

हम सन सत्य मरम किन कहहू[19]।

तजे राम हम जानि कलेसू[20]।

उक्त हम तथा हौं मूल कर्ता कारक रूपों में प्रयुक्त हुए हैं किन्तु अर्थ की दृष्टि से कर्मकारक रूपों के अन्तर्गत स्वीकार किए जा सकते हैं—

हौं – कहि अपराध नाथ हौं त्यागी[21]।

१—रा० अर० १६।२० २ रा० अयो० ४२।१४ ३—रा० अयो० १९। , ४—रा० उ० ७७।१७ ५—रा० बा० १४।३४ ६—रा० अयो० १५।११ ७—रा० उ० ५।२१ ८ रा० सु० १४।४ ९—रा० लं० १०९।१६ १०—रा० सु० १ ।२ ११—रा० अर० १०।८ १२—रा बा० २८।३ १३—रा० कि० ४।१६ १४—रा० बा० २८।२२ १५—रा० उ० १२५।७ १६—रा० अर २६।२८ १७—रा० अर० १७।१८ १८—बरवै रा० ३३।२ १९—रा० बा० ७८।६ २०—रा० अयो० ७८ २१—रा सु० ३१।१८

तियक रूप हमहि' का प्रयोग बहुवचन म हुआ है किन्तु कहीं कहीं पर हमहि' एकवचन (आग्राय) मे भी व्यवहृत हुआ है। ये रूप परसर्ग रहित मिलते हैं—

हमहि—हमही (छन्दानुराघ से)—

हमहि आजु लगि कनउड काहु न कीन्हउ[1]।

सुचि सुजान नृप कहहिं हमहि अस सूझई[2]।

तहँ तहँ ईसु देउ यह हमही[3]।

सम्बन्ध कारक म प्रयुक्त होने वाले रूपो (सवनाम मूलक सम्ब धवाची विशेषणो) की सख्या सर्वाधिक है। इनमे मुख्य रूप मोर (ए० व०) तथा हमार' (ब० व०) हैं। लिंग, वचन तथा विभिन्न विभक्ति प्रत्ययो के योग से अनेक रूप तुलसी की अवधी म व्यवहृत हुए हैं। एक वचन म मोर मारा (छन्दानुपूर्ति से) मोरि-मोरी, मोरे तथा मोरें बहुवचन मे – हमार-हमारा, हमारि-हमारी, हमारे-हमारें-हमारो

एकवचन-मोर—

एहि बिधि कहेउ मोर प्रभुताई[4]। मोर नाउँ मैं पूँछउ साईं[5]।

कहा मोर मन धरि न बरिय बर बौरेहि[6]।

छल परिहास होइ हित मोरा[7]। जानति प्रिया एकु मनु मोरा[8]।

मोरि-मोरी-बिपति मोरि को प्रभुहि सुनावा[9]। तात तुम्हारि मोरि परिजन की[10]।

ब्याह समय सिख मोरि समुझि पछितहहिं[11]। मोरि की अस गति होइ[12]।

दाहिन आँख निज फरकइ मोरी[13]। राखी नाथ सकल रुचि मोरी[14]।

मोरे – सोइ भरोस मोरे मन आवा[15]। तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे[16]।

मोरें – मोरें जान कलेस करिय बिनु काजहिं[17]।

मोरें हृदय प्रीति अति होई[18]। मोरें मत बड नाम दुहू तें[1]।

अनेक स्थलो पर सस्कृत सवनाम 'मम' प्रयुक्त है आलो य सामग्री म 'मम' का प्रयोग बत्तीस बार किया गया है—

एक बार बिलोकु मम ओरा[2]।

१-पा० म ७३।१ २-जा० म० ५९।१ ३-रा० अयो० २८।१०, ४-रा० बा० २८।२७ ५-रा० कि० ७।१५ ६-पा० म ४८।२ ७-रा० बा ९।१ ८-रा० सु० १८।१२, ९-रा० अर० २०।९ १०-रा० अयो० ३१५।१, ११-पा० म० ५६।२ १२-रा० अर०२१।३० १३-रा० अयो० २०।१० १४-रा० अयो० ३१३।१२ १५-रा० बा० १०।१५ १६-रा० बा० १४।२१ १७ पा० म० ७।१, १८— १९-रा० बा० २३।३, २०-रा० उ० ९।१०

बसहु राम नप मम उर अतर।[1] मह रघुबीर महा मम मानहु।[2]

बहुवचन—

हमार–हमारा–गिरिजहि लगे हमार जिवनु सुख सयति।[3]

जार जागु सुभाव हमारा। नर कपि भालु अहार हमारा।[4]

हमारि–हमारी–मरतहि कुसल हमारि सुनाएहु।[5]

बिपति हमारि बिलोकि बडि।[6] सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।[7]

हमरें–हमारें–हमरें जान अनेस बहुत भल की हेउ।[8]

आवा सो प्रभु हमरें गाऊ।[9] यह हमरें मन बिपमउ आवा।[10]

हमरे–हमारे–हमरे जान सदा सिव जोगी।[11]

कुल बसिष्ठ कुल पूज्य हमारे।[12] सुनु सुरपति कपि भालु हमारे।[13]

यत्र तत्र बलात्मक रूप म मोरेहु मोरेहु तथा हमरउ' का प्रयोग उल्लेखनीय है। सख्या की दृष्टि से ये रूप अत्यल्प हैं—

मोरेहु कहँ न ससय जाही।[14]

मोरेहुँ मन भ्रम आव मिलिहि बर बाउर।[15] हमरेउ तोर सहाई।[1]

अल्प मात्रा म मो के बलात्मक रूप मोहू का प्रयोग परसर्ग सहित तथा परसग युक्त दोनो अवस्थाओ म हुआ है—

दरसन देत रहब मुनि मोहू।[16] दुहु मिलि कीन्ह दीठु हठि मोहू।[17]

परसग युक्त—मोहू पर रघबीर।[1]

उत्तम पुरुष (मूल रूप) सवनाम क भी बलात्मक रूप प्राप्त होते हैं। इनकी सरचना हुँ तथा हू प्रत्ययो के योग से हुई है—

होहु — होहु कहावत सब कहत।[18]

हमहुँ–हमहूँ–हमहुँ कहब अब ठकुर सोहाती।[19]

हमहू उमा रहे तेहि सगा।[20]

५ २ २ मध्यम पुरुष—

निम्नलिखित रूप प्रयुक्त हैं—

एकवचन	बहुवचन
मूल रूप—तैं तें	तुम तुम्ह

१–रा० ल ११५।१६ २–रा० लं० १०८।२१ ३–पा० म० १८।२ ४–रा० अया० १६।१३ –रा० लं० ८।२० ६–रा० लं० १२।३ ७–रा० अया० २११।७ ८–रा० सु० ७।१ ९–जा० म० ६३।१ १०–रा कि० ६।४ ११–रा० उ० ।८ १२–रा० बा० ९०।५ १३–रा० उ० ९।१ १४–रा० लं० ११६।१ १५–रा० बा० ५२।११ १६–पा० म० १७।१ १७–रा० बा ९३।२ १८–रा० बा० ३६०।१५ १९–रा० अया० ३१४।१२ २०–रा० सु० ७।१८ २१–रा० बा० २८।२७, २२–रा० अया० १६।८, २३–रा० लं० ८१।५।

तिर्यक रूप—ताहि-ताही, ताहि	तुम, तुम्ह, तमहि, तुम्हहिं तुम्हहि
तो	तुम्ह—
सम्बन्ध — तव-तुव, तोर तोरा	तुम्हार तम्हारा तुम्हारि
तोरि तोरी, तोरे-तोरें	तुम्हारी, तुम्हरि, तुम्हरे, तुम्हरें

मूल रूप एक वचन मध्यम पुरुष सर्वनामो का प्रयोग क्रिया की कर्ता की भाँति हुआ है—

मूलरूप (एक वचन)—इस रूपो म त तथा तूँ के प्रयोग कहीं कहीं आदरार्थ रूप म देवताओ के सम्बोधन मे और किसी किसी पर तिरस्कार वाचक प्रयुक्त हुए हैं। 'तै' का प्रयोग अधिक मात्रा म हुआ है—

तै — सुनु तै प्रिया वृथा भय माना।[1] मातु विरचि सगिनि त मोरी।[2]
त मम प्रिय लछिमन त दूना।[3] तू छत्र करमि विनय कर जारे।[4]

मूल (बहुवचन)-'तम' तथा 'तुम्ह' का प्रयोग बहुवचन क्रिया के कर्ता की भाँति हुआ है। रामचरित मानस म 'तुम' का प्रयोग केवल एक स्थल पर तथा 'पार्वतीमगल' म तीन स्थलो पर मिलता है। तम के स्थान पर 'तुम्हें' का प्रयोग अधिक सख्या में हुआ है—

तुम — तुम त्रिभुवन तिहु काल बिचार बिसारद।[5]
सीय रतन तुम उपजिहु सब रत्नाकर।[6]

तुम्ह — तम्ह त्रलोक ईस रघुराया। सत असत मरमु तम्ह ज नहु।[7]

तिर्यक (एक वचन) सर्वनाम रूपो का प्रयोग कर्ता को छोडकर अ य सभी कारकों म मिलता है। इन सर्वनामों का याग परसग रहित तथा परसग सहित दोनो रूपो मे हुआ है। किन्तु तौ -सर्वत्र परसग सहित प्रयुक्त हुआ है—

परसग रहित—ताहि-तोही (छ दानरोध से) ताहि तोरेहि का प्रयोग हुआ है। तोहि का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक हुआ है—

—सुनहि मातु मैं दीख अस सपन सुनावहु तोहि।[8]
आरत गिरा सुनत प्रभ अभय करगा ताहि।[9]
—मोरे नहिं अन्य कछु तोही।[10] जो सोचहि ससिकलहि सो सोचहि रोरहि।[11]

परसग सहित—सपनहु तो पर कोपु न मोहा।[12] तो सम पुरुष न मो सम नागी।[13]

१—रा० ल० ८।३ २—रा सु० १२।२ ३—रा कि० ३।१४ ४—रा० बा० ८३।७, ५—पा० म० १४।१, ६—पा० म० ६४।२ ७—रा० ल० १८।१६, ८—रा० उ० १२।१९, —रा० बा० ७२।७, १०—रा० ल० २०।१९ ११—रा० बा० २०।१९ १२—पा० म० ४ ।१, १३—रा० अयो० १४।० १४- रा० अर० १७।१५।

तिर्यक रूप—तिर्यक रूप बहुवचन मध्यम पुरुष सर्वनामों का प्रयोग कर्ता को छोड़ कर अन्य सभी कारकों में हुआ है।

तिर्यक रूप 'तुम' तथा 'तुम्ह' बहुवचन में परसर्ग सहित प्रयुक्त हुए हैं यथा—
—अगम न कछु जग तुम्ह कह मोहि अस सूझइ[1]। तुम्ह कहँ नाथ निहोरा नाहीं[2]।
—तुम्ह कहुँ बिपति बीजु बिधि बयऊ[3]। भूरिभाग तुम्ह सरिस कतहुँ कोउ नाहिन[4]।
—तुम्ह ते प्रेम राम के दूना[5]। तुम्ह सन प्रभु दुराउ कछु नाहीं[6]।
—मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही[7]। राजहिं तुम्ह पर प्रेम बिसेषी[8]।
—जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं[9]।

तिर्यक बहुवचन 'तुमहिं' तुम्हहि तुम्हहिं परसर्ग रहित प्रयुक्त हुए हैं—
तुमहिं सहित असवार बसहु जब होन्हहिं[10]।
—तुम्ह हि कौसिल्या देव[11]। तुम्हहि न सोचु सोहाग बल[12]।
तुम्हहिं—सुमिरिहिं सुकृत तुम्हहि जन तेइ सुकृती बर[13]।
तुम्हहिं रघुपतिहि अंतर कैसा[14]। चाहत देन तुम्हहिं जुबराजू[15]।

वस्तुतः ये सविभक्तिक रूप हैं।

मध्यम पुरुष सर्वनाम मूलक सम्बन्ध वाची विशेषणों में एकवचन के अन्तर्गत मुख्य रूप तोर तथा बहुवचन में तुम्हार है। लिंग वचन तथा कारक भेद के कारण इनके अनेक रूप आलोच्य सामग्री में मिलते हैं। एकवचन में प्रयुक्त रूप—तव—तुव, तोर—तोरा तोरि—तोरी तोरे तोरें हैं।

तव तथा तुव संस्कृत के प्रभाव से हैं। बहुवचन में प्रयुक्त रूप तुम्हार—तुम्हारा, तुम्हारि—तुम्हारि—तुम्हारी हैं। अपेक्षाकृत तुम्हार का प्रयोग अधिक हुआ है। तुम्हारा अधिकांशतः छंदानुरोध से प्रयुक्त हुआ है। कतिपय प्रयोग दृष्टव्य हैं—

एकवचन—अधम सिरोमनि तव पद पावा[16]। तव हृदय बसहु हनुमंत[17]।
सिय तुव अंग रंग मिलि अधिक उद्योत[18]। कपि तुव दरस सकल दुख बीते[19]।

तव का प्रयोग केवल मानस में ही हुआ है। अवधी की अन्य रचनाओं में केवल बरवै रामायण में एक स्थल पर तव का प्रयोग हुआ है।

१—पा० म० ४५।१ २—रा० अर० १२। ३—रा० अयो० १०।१० ४—पा० म० ६६।१, ५—रा० सु० १४।२० ६—रा० अर० १३।२ ७—रा० सु० ५७।११ ८—रा० अयो० १८।९ ९—र० कि० ३।१० १०—पा० म० ५८।१ ११—रा० अयो० १०।१८ १२—रा० अयो० १८।१७ १३—पा० म० ७६।१ १४—रा० ल० ।? १५—रा० अयो० १०।४ १६—रा० ल० ११०।१०, १७—रा० ल० १०७।२६ १८—बरवै रा० १३।१ १९—रा० उ० २।२१

तोर–तोरा (छदानुरोध से)–तोर कहा फुरि जिहि दिन होई[1] ।

बुधि बल मरम तोर मैं जाना[2] । तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा[3] ।

– उभय प्रकार सुजस जग तोरा[4] । होइहि सफल सलभ कुल तोरा[5] ।

तोरि–तोरी (छदानुरोध से)–अत काल गति तोरि[6] । सभा सकल वस तोरि[7] ।

सुनु मथरा बात फुरि तोरी[8] । सब धरि जीभ कढावउँ तोरी[9] ।

तोरे – हँसि कहि रानि गालु बडि तोरे[10] । पूजहि नाथ अनुग्रह तोरे[11] ।

तोरें – भवन हेतु उपजा मइ तारें[12] ।

तिन्हकें तिलकु छोमुकस तोरें[13] । सब विधि घटब काजु मैं तारें[14] ।

बहुवचन–सम्बन्धवाची बहुवचन रूपो म सर्वाधिक प्रयोग 'तुम्हार' सवनाम क हैं–

तुम्हार-तुम्हारा (छदानुरोध से)–मोर तुम्हार परम पुरुषारथु[15] ।

छाडि न सकइ तुम्हार सकोचू[16] ।

जौ मन मान तुम्हार तौ लगन धराइहु[17] ।

– देखि तात बिधु बदन तुम्हारा[18] । आजु सुफल जग जनमु तुम्हारा[19]

तुम्हरी तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे[20] । मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही[21] ।

तुम्हारि-तम्हारी-जरि तुम्हारि चह सवति उखारी[22] ।

मैं तुम्हारि सेवा बस राऊ[23] । –नाथ सकल सपदा तुम्हारी[24] ।

मुनि प्रसाद बलि तात तुम्हारी[25] । जानउ महिमा कछुक तुम्हारी[26] ।

तम्हरे' तथा 'तुम्हार—ये रूप बहुवचन पुल्लिग के हैं । कहीं कहीं विशेष्य के विकृत रूप के साथ रूप म भी प्रयुक्त हुए हैं–

बहुवचन (पु०)–सकल अमानुष करम तुम्हार[27] ।

मुनिबर तुम्हरे बचन मेरु महि डोलइ[28] ।

एकवचन (पु०)–तरिहहि जलधि प्रताप तुम्हारे[29] ।

तुम्हरे आश्रम अबहि ईसु तपु साधहिं[30] ।

१–रा अयो० १।१४ २–रा० सु० २। ४, ३–रा० सु० १८।११ ४–रा० ल० १०।२, ५–रा० अर० २९।३४, ६–रा० कि० ९।२४, ७–रा० सु ४१।२०, ८–रा० अयो० २०।९ ९–रा० अयो० १४।१६ १०–रा० अयो० १३।१३ ११–रा० अयो० ३।१४ १२–रा० ल० ८।१ , ३ रा० अयो० १५।१४, १४–रा० कि० ७।२० १५–रा० अयो० ३१५।५, १६–रा० अयो० ४०।१६ १७–पा, म ७८।२ १८–रा० बा० ३५७।१२ १९–रा० बा० ३५७।१३ २०–रा० बा० १४।२१, २१–रा० सु० ५९।१०, २२–रा० अयो० १७।१५ २३–रा० अयो० २१।१६ २४–रा० बा० ३६०।११, २५–रा० बा० २५७।१ २६–रा० अर० १३।१० २७ रा० बा० ३५७।११ २८–जा० म० ९१।१ २९–रा० सु० ६०।४ ३०–पा० म० २१।२

साइज पहिरिअ राज तुम्हारे[1] । पूतु बिदेस न सोचु तुम्हारे[2] ।

मध्यम पुरुष सम्बन्धवाची सर्वनाम के बलात्मक शब्दांश युक्त रूप प्रायः 'हि' और 'ही' के योग से निर्मित हैं—तुम्हरिहि तुम्हारिहि, तुम्हारिहिं—

तुम्हरिहि कृपा तुम्हहि रघुनंदन[3] । हमरें कुसल तुम्हारिहिं दाया[4] ।

सो निस्तरइ तुम्हारिहि छाया[5] । —गयउ तुम्हारिहि कोछें घाली[6] ।

तत्कालीन उच्चारण भिन्नता के कारण प्रयुक्त 'तुम्हारेइ' अवधी की रचनाओं में केवल मानस के अंतर्गत तीन बार प्रयुक्त हुआ है अन्यत्र नहीं—

तुम्हारेइ भजन प्रभाव अघारी ।

मध्यम पुरुष में कुछ सम्बन्धवाची आदरार्थक रूप भी प्राप्त हुए हैं । अवधी के अंतर्गत ये उल्लेखनीय रूप हैं जो आप के अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं । राउर रावरे रौरें आदि का प्रयोग केवल मानस में ही हुआ है अन्यत्र नहीं । किसी किसी स्थल पर राउर का प्रयोग सम्बन्ध कारक में भी हुआ है—

राउर – राजन राउर नामु जसु[7] ।

का पूँछहु सुठि राउर सरल सुभाउ[8] । कहौं राउर गुन सील सरूप सोहावन[9] ।

जेहि राउर अस अनभल ताका[10] । कहहु कृपानिधि राउर कस गुन गाय[11] ।

राउर (स्त्री०) कहहुँ तिय होहि सयानि समान सुनहि सखि राउरि[12] ।

गिरिबर सुनिय सराहना राउरि तहँ तहँ[13] ।

राउरें – राम मातु मत जानब राउरें

रावरी – राम निकाई रावरी है ।

रावरें – सवध राजन रावरें ।

रावरो – करुनानिधान सुजान सील ।

सनेहु जानत रावरो ।

रौरेहि – इन रूपों में 'हि' बलात्मक निपात का योग है—

राउर—रौरे नियक एकवचन पुल्लिंग का रूप है यथा—

मोरेउ कहत दास रउरेहि त्यागा ।

जो माचइ मसि कलह सो सोचइ रौरेहि ।

वस्तुतः ये रूप हैं तो सम्बन्ध कारक को स्पष्ट करने के लिए ही पर विभक्ति के अभाव में कर्म कारक को स्पष्ट करते हुए प्रतीत होते हैं ।

१—रा० बा० १९।७ २—रा० अयो० १४।१ ३—रा० अयो० २७।१३ ४—रा० उ० ५।८ ५—रा० कि० ३।४ ६—रा० उ० ८।४ ७—रा० अर० १३।१ ८—रा० अयो० १।... ९—बरवै रा० २।... १०—पा० म० ५।१ ११—रा० बा० ७।१ १२—बरवै रा० ।२ १३—पा० म० ६।११ १४—पा० म० १।१२

५ ३ सकेत वाचक सर्वनाम

५ ३ १ दूरवर्ती—

इस प्रकार के रूपों का प्रयोग अय पुरुष के द्योतन के लिए भी किया गया है। स_ सम्बधवाची रूपो का प्रयोग भी सकेत वाचक (दूरवर्ती) तथा अय पुरुष में किया गया है। उहें इस प्रकार व्यवस्थित करके प्रस्तुत किया जा सकता है—

		एकवचन	बहुवचन
मूल रूप	–	वह, सो।	ते, तिह, उह
तियक	–	ताहि-ताही, तेहि तेहि-तेही, ताहु तासु तासू ओहि ओही, ता	तिहहि तिहही उहहि, उह तिह-

मूल रूप (एकवचन)—'वह तथा 'सो रूप कर्ता कारक म प्रयुक्त हुए है। 'वह सवनाम का प्रयोग अय पुरुष तथा सकेत वाचक (दूरवर्ती) के अथ म और सो का प्रयाग पुरुष सकेत वाचक (दूरवर्ती) और सहसम्बध वाचक म मि ता है। वह का प्रयोग अत्यल्प प्राप्त है जबकि 'सो का प्रयाग पर्याप्त मात्रा म मिलता है, यथा—

वह — निसि मलीन वह निसि दिन यह बिगसाइ।[1]

सो — सभा बहोरि बठि सो जाई।[2]

आसिस देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान।[3]

हित लागि कहेउ सुभाय सो बड विषम बरी रावरो।[4]

मूलरूप (बहुवचन)—

इसके अन्तगत निम्न रूप प्रयुक्त हैं। आलोच्य भाषा म इसका प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है, यथा—

ते — ते तनु सकल विभव बस करही।[5]

गर्जहि ते चतुर नर।[6] ते प्रिय तुम्हहि करइ मैं माई।[7]

'ते' का प्रयोग सर्वत्र परसग रहित हुआ है। सम्बध वाची सवनाम के साथ प्रयुक्त होकर यह सह सम्बध वाची रूप भी बन जाता है।

तिह— ते' की अपेक्षा तिन्ह' का प्रयोग अधिक सख्या म मिलता है

सकल चरित तिह देखे।[8] भूपन वमन भूरि तिह पाए।[9]

१—बरव रा० ११।२ २—रा० ल० ८।१२ ३—रा० ल० ।२८, ४—पा० म० छ ६।४, ५—गी० अयो० ३।१०, ६—रा० अर० ६।१ ७—रा० अयो० १६।६, ८—रा० सु० ५१।१७, ९—रा० अयो० ८।२।

रावन चरन सीस तिन्ह नाए ।[1]

उन्ह — इसका प्रयोग अल्प मात्रा में हुआ है—

छनमहुँ सकल कटक उन्ह मारे ।[2]

तिर्यक (एकवचन)—

(१) परसर्ग रहित (सविभक्तिक) निम्न रूप प्रयुक्त हुए हैं यथा—

ताहि-ताहि—तमकि ताहि ए तोरहि बह्व महस ।[3]

ताहि एक छन मरछा आई ।[4] ताहि प्रबोध बहुत सुख दीन्हा ।[5]

तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि विधि वाम ।[6] तेहि मिनि ताहि न मिलहि अहारा ।

मकुट परे कम अवगुन अवगुन ताही । सादर करहिं मुनहिं बुधि ताही ।[7]

तेहि—तेहि असोक वाटिका उजारी ।[8]

तेहि सरीर हर हृत अरमेउ बह तपु ।[11] सत जानत तेहि आगमन कीन्हा ।[9]

तेहि तही—राम विमुख राखा तेहि नाहीं ।[10] पठवहिं आइ कहो तेहि वाता ।[12]

तेहि कोमलाधीस के आना ।[13] सपन किएँ स्वा करि तेही ।[14]

हृदय हरष नहिं भय कछ तेही ।[1] विप्र फिरहिं हम माचत तेही ।[15]

ताहु—हरषु विरह अति ताहु ।[16]

ओहि-आहा—काहू कठ न कहा न आहा ।[1]

सादर पूछति पुनि पुनि ओही ।[17] दउ दउ फिरि सो करु आहा ।[18]

तासु-तासू—इन रूपों का प्रयोग सम्बन्ध कारक का स्पष्ट करने के लिए हुआ है—

तासु अनुज काटे श्रुति नासा ।[1] तासु वचन मुनि सागर पाही ।[1]

मसुषि तासु वध चप कार रहही ।[19] जो कछ कहहि थार सब तासू ।[11]

(२) परसर्ग सहित प्रयोग—निम्न रूप प्रयुक्त हुए हैं—

ता पर—ता पर हरषि चली वदेही ।[1]

श्री समेत बैठ प्रभु ता पर ।[1] ता पर करहिं सुमोज वहुत सुख लावहि हो ।[11]

ता कहु—ता कहु यह विशेष सुखदाई ।[1] ता कहुँ विषयतनी ततरना ।[11]

१—रा० सु० ५३।८ २—रा० अर० २३।२२ ३—बरव रा० १५।२ ४—रा० सु० १९।१६ ५-रा० उ० १०।३ ६-बरव रा० ५०।२ ७—रा० सु० ७।१९ ८—रा० लं० १४।८, ९—रा० बा० १०।११ १०—रा० सु० १८।६, ११-पा० म० ५।२ १२—रा० सु० २।१९ १३—रा० अर० ७।४ १४—रा० सु० २।४ १५—रा० सु० ५८।१२ १६ रा० सु० ११३ १७ रा० उ० १०९।१२ १८—रा० कि० ७।८ १९—रा० उ० ४।२४ २०—रा० अर० २।९ २१—रा० अयो० १८।१६ २२—रा० अयो० १६।१ २३—रा० अर० २२।१९ २४—रा० सु० ५६।५ २५—रा० लं० १८।१४ २६—रा० अयो० २।१० २७ रा० लं० १०८।१५ २८ रा० लं० ११९।८ २९—रा० च० न० १७।३ ३०—रा० लं० १२८। ५ ३१—रा० अर० १२८।१५ ।

ता कर -- मारे कर ता कर बध होई ।[1] ता कर नाम भरत अस होई ।[2]

ता करि -- सुनि ता करि विनती मदु बानी ।[3]

तो के — नरपति सकल रहहिं रुख ताके ।[4]

ता कें -- प्रभु प्रति नहिं निज बल ताकें ।[5] ताकें जुग पद कमल मनावौ ।

तेहि सन — तेही सन (छन्दानुरोध से) ये रूप प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं ।—

तेहि सन जग बालिक पुनि आवा ।[6]

तेहि सन नाग मयत्री कीज ।[7] तोहि तेही सन काम ।[8]

तेहि तें -- तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी ।[9]

तेहि कर-- तहि कर भेद सुनहु तुम्ह साऊ ।[10]

तेहि करि-- तेहि करि बिमल बिलोचन ।[11]

तेहि कें -- तेहि कें बचन मानि बिस्वासा ।[12]

तेहि पर -- तेहि पर चढउ मदर मन माखा ।[13] आयउ करन तोहि पर दाया ।[14]

तेहि लगि-- कलव एक तेहि लगि अवतारा ।[15]

ताहि सन- तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा ।[16]

ताही सो --नाथ बयरु कीज ताही सो ।[16] तासो नाथ बयरु नहिं कीज ।[17]

तिर्यक एक वचन रूप विभिन्न परसर्गों से युक्त होकर विभिन्न कारक सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं ।

तिर्यक (बहुवचन)—

(१) परसग रहित (अविभक्तिक)—

तिन्हहि तिन्हही-तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा ।[1]

तिन्हहि बिरोधि न आइहि पूरा ।[18] तिन्हहि बिलोकत पातक भारी ।[19]

राम कृपा अतुलित बल तिन्हही ।[20] बिषय भोग बस करहु कि तिन्हही ।[2]

उन्हहि -- तस फलु उन्हहि देउ ।[21]

(२) परसग सहित (तिर्यक बहुवचन)—

इसके अन्तर्गत विशेषतया 'उन्ह' तथा 'तिन्ह' तिर्यक रूपों के साथ विविध परसर्गों का प्रयोग करके अनेक प्रकार के कारक-सम्बन्ध स्पष्ट किए गए हैं ।

१—रा० कि० १९।१०, २—रा० बा० ९७।१४, ३—रा उ० ११।३ ४—रा० अयो० २५।४, ५—रा० अर० १५।२, ६—रा बा० १८।१५ ७—रा० बा० ३०।९ ८—रा० कि० ४।५ ९—रा० बा० ८०।१९ १०—रा० अर० ७९।९ ११— , १२—रा० बा० २।३ १३—रा० बा० ७९।९ १४—रा० अयो० ८७।२ १५—रा० लं० ७।१४ १६—रा सु० १९।१३ १७—रा० सु० १९।१३ १८—रा० लं० ९।९ १९—रा० अर० २५।७ २० रा० सु० २९।१३ २१—रा० अर० २५।१६ २२—रा० कि० ।२ २—रा० सु० ४५।३, २४—रा० अयो० ८४।१६, २५—रा० बा० १२।१७ ।

उन्ह कर —सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा[1] ।
उन्ह कें —साचेहु उन्ह कें मोह न माया[2] ।
उन्ह कै —समुझि परी मोहि उन्ह कै करनी[3] ।

उन्ह—की अपेक्षा 'तिन्ह'—सर्वनाम के साथ परसर्गों का प्रयोग अधिक मिलता है—

तिन्ह कर —कहहु सुवन केहि भाँति सराहिय तिन्ह कर[4] ।
तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं[5] ।
तिन्ह की —परम प्रेम तिन्ह कर प्रभु देखा[6] ।
तिन्ह कै —तिन्ह की ओट न देखिअ बारी[7] ।
तिन्ह केरे —चरण कमल बंदौं तिन्ह केरे[8] ।
तिन्ह के —तिन्ह के संग नारि एक स्यामा[9] ।
चहु दिसि तिन्ह के उपबन सुंदर[10] । प्रिय संत अनंत सखा तिन्ह के ।[11]
तिन्ह कें —तिन्ह कें सम बैभव संपदा[12] ।
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारी[13] ।
तिन्ह कै —रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका[14] ।
जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं[15] ।
तिन्ह तें —तिन्ह तें अधिक रम्य अति बंका[16] ।
तिन्ह कहँ —तिन्ह कहं सदा उछाहु[17] । तिन्ह कहँ सुखद हास रस एहू[18] ।
तिन्ह पर —सादर सुनहिं जे तिन्ह पर राम रहहिं अनुकूल[19] ।
तिन्ह पर कुँअर कुँअरि बैठारी[20] । (अप्राणिवाचक)
तिन्ह महुँ —तिन्ह महँ प्रथम रेख जग मोरी[21] ।

बलाघात प्रधान रूप—

इन रूपों में इ—ई (छंदानुरोध से) उ—ऊ (छंदानुरोध से) ही तथा हु—हू (छंदानुरोध से) बलात्मक निपात हैं।

सो+इ-ई-सोइ अवतरेउ हरनि महि भारा[22] । सोइ कर श्री सेवा बिधि जानइ[23] ।
राम बिलोकत प्रगटत सोई[24] । राम कृपा कछु दुर्लभ न सोई[25] ।

१—रा० अर० १३।१५ २—रा० बा० ९७।५ ३—रा० अर० २७।७ ४—पा० म० ७।१
५—रा० सु० १।१७ ६—रा० उ० १७।४ ७—रा० ल० ८।१५ ८—रा० बा० १४।५
९—रा० अर० २२।१६ १०—रा० उ० २९।८ ११—रा० सु० ६०।३ १२—रा० उ० १४।२६ १३—रा० उ० १४।२४ १४—रा० अर० ८।१ १५—रा० सु० ३।४
१६—रा० बा० ७८।११ १७—रा० बा० ३६१।२७ १८—रा० बा० ९।६ १९—रा० अर० ।१८ २०—रा० बा० २५।२ २१—रा० बा० १२।४ २२—रा० ल० ६।१६
२३—रा० उ० २४।१४ २४—रा० बा० १७।८ २५—रा० बा० ३।१४

सपनहुँ संकट परहिं कि सोई[१] । मम बल जान सहित पति सोई[२] ।

सो+उ-ऊ–सोउ संक्षेपहि कहहु विचारी[३] । सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन ते[४] ।

सोउ जाने कर फल यह लीला[५] । राम नाम बिनु सोह न सोऊ[६] ।

ते+उ-ऊ–हहिं पुरारि तेउ एक नारि व्रत पालक[७] ।

जय जय मद निदरेसि हय पायसि कर तेउ[८] ।

ते+इ-ई–भए निसाचर आइ तेइ[९] ।

सुमिरिहिं सुकृत तुम्हहिं जन तेइ सुकृती वर[१०] ।

भए उपल बोहित सम तेई[११] ।

तिन्ह+हु–ति न्हहु किए मन मीन[१२] । तेउ न जानइ मरमु तुम्हारा[१३] ।

वेष प्रताप पूजिअहिं तऊ[१४] । नाम जीहँ जपि जानहिं तऊ[१५] ।

५ ७ २–संकेत वाचक (निकटवर्ती) सर्वनाम

प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

		एकवचन	बहुवचन	
मूल	—	यह यहु	ये — ए,	—
तिर्यक	—	एहि—एही	इन्हहिं	इनहिं
			इन — ,	—

मूल एकवचन—

इन रूपों में सर्वाधिक प्रयोग यह का हुआ है—

यह — निसि मलीन यह प्रफलित नित दरसाइ[१६] ।

यह बरनत हीनता घनेरी[१७] । यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ[१८] ।

चढत दसा यह उतरत जात निदान[१९] ।

निसि मलीन वह निसि दिन यह विगसाइ[२०] ।

यहु — जौ यहु होइ मोर मत माता[२१] ।

मूल (बहुवचन)–ये-ए की भिन्नता संभवतः अनुलेखन के कारण है । या फिर क्षेत्रीय उच्चारण भिन्नता का द्योतन हो सकता है—

१–रा० अर० २५।८ २–रा० अर० २६।२६ ३–रा० उ० १२१।८ ४–रा० बा० २३।१६ ५–रा० उ० २२।९ ६–रा० बा १०।६ ७–जा० म० ९३।१० ८–पा० म० २६।२ ९–रा० बा० २२।७ १०–पा० म० ७६।१ ११ रा० ल० ३।१६, १२–रा० बा० २२।२० १३–रा० अयो० ८६।१३ १४–रा० बा० ७।१० १५–रा० बा० २२।६, १६–पा० म० २६।२ १७–रा० उ २२।९, १८–रा० बा० २८।१९, १९–बरव रा ५।१ २०–बरव रा० ११।१२, २१–रा० अयो० ६७।७

य–ए   य प्रिय सबहि जहाँ लगि प्रानी[1] ।
      कबहुँक ए आवहि एहि नाते[2] । करिहहि विधि मो सन ए प्रीती ।

इह– मम हित लागि जन्म इह हारे ।
      मम हित लागि तजे इह प्राना[5] । बालि बधब इह भइ परतीती[6] ।

तिर्यक (एकवचन)—संश्लिष्ट एवं विश्लिष्ट दोनों प्रकार के रूप मिलते हैं—

(१) परसर्ग रहित—

एहि– एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं[7] । राम चरित मानस एहि नामा[8] ।
      छन्दानुरोध से एहि का दीर्घ स्वरान्त एही प्रयुक्त है—

एहा– अब जनि राम खिलावहु एहा[9] । सत्य संघ करि बधि कर एहू[10] ।

यहि– चाँद सरग पर सोहत यहि अनुहारि[11] ।

(२) परसर्ग सहित एहि के साथ अपेक्षाकृत परसर्गों का अधिक प्रयोग हुआ है–

एहि तें– एहि तें जसु पहँ पितु मातु[12] ।
एहि सम– एहि तें अधिक न एहि सम जीवन लाहु[13] ।
एहि महँ– एहि महँ रघुपति नाम उदारा[14] ।
एहि माहीं–राम प्रताप प्रगट एहि माहीं[15] ।
एहि कें– एहि कें एक परम बल नारी[16] ।
एहि कहँ– एहि कहँ गति तजि दूसर नाहीं[17] ।
      जस स्यामा एहि कहँ मिलहिं[18] ।
एहि कर– एहि कर नाम सुमिरि संसारा[19] । एहि कर फल पुनि विषय बिरागा[20] ।
एहि लगि– एहि लगि तुलसीदास इन्ह की[21] ।
या को– या को फल पावहिगो आगे[22] ।

तिर्यक बहुवचन—यह प्रयोग संभवतः ब्रजभाषा से प्रभावित है ।

(१) परसर्ग रहित–
      (सविभक्तिक)

इन्हहिं– इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकहि जोई[23] ।
      इन्हहिं देखि भया मगन जानि बड स्वारथ[24] ।

१–रा० बा० ६३। २–रा० बा० ६७।११ ३–रा० कि० ८।१८, ४ रा० उ० ८।२५ ५–रा लं० ११४।३ ६ रा० कि० ७।२६ ७ रा० सु० ९।७ ८–रा० उ० ५।१३ ९–रा० उ० ८६।११ १ –रा० अर० २७।९ ११–बरव रा० १७।२ १२–रा बा ६७।८ १३–बरव रा० ५७।२ १४–रा० बा० १०।१ १५–रा० बा० ८०।१ १६–रा० अर० ३८।२ १७–रा० बा० ३०।१२ १८–रा उ० ८६।१३ १९–रा० बा ६७।११ २०–रा० अर० १६।१३, २१–रा० सु० ३।८३ २२–रा० उ ३ ।१ , २३–रा० कि० ९।१८, २४–जा० म० ४५।२

(२) परसग सहित—

इह की– इह की कृपां दनुज सब मार[1] । एहि लागि तुलसीदास इह की[2] ।

इह तें इह तें लही दुति मरकत साने[3] ।

इह कह– इह कह नाथ सहज जड करनी[4] ।

इन सम– को अवनीतल इन सम बीर धुरधर[5] ।

इह सन– जिन्ह कर मन इह सम नहिं राता[6] ।

५ ४ प्रश्नवाचक सर्वनाम

प्रश्नवाचक सर्वनाम के दो प्रकार के रूप प्रयुक्त हुए हैं—(१) प्राणिवाचक तथा (२) अप्राणिवाचक । इसके अतिरिक्त एक तीसरे प्रकार का रूप भी मिलता है जिसका प्रयोग विशेषण की तरह हुआ है

		एकवचन	बहुवचन
मूल—	(१) प्राणिवाच	को, केइ–केई	—
	(२) अप्राणिवाचक—का		—
	(३) विशेषण रूप—कवन (कौन)		—
तियक—	(१) प्राणिवाचक —काहि, केहि–केहिं		
	(२) अप्राणिवाचक–काह–काहा		

मूल एकवचन—

सर्वाधिक प्रयोग कर्त्ताकारक सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं । 'को' सर्वनाम का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है—

(१) प्राणिवाचक–को–बरन छबि असि जग कवि को है[7] ।

मटि को सकइ सो आकु जो बिधि लिखिराखेउ[8] । जलद सरिस को कहै राम भगवत[9] ।

बिपति मोरि को प्रभहिं सुनावा[10] । राम बिमुख कलिकाल को भयो न भांड़[11] ।

केइ–कइ–केइ दुइ सिर केइ जमु चह लीन्हा[11] ।

अनहित तोर प्रिया केइँ कीन्हा[12] । केइँ तव नासा कान निपाता[13] ।

(२) अप्राणिवाचक–का–का पूछँहु सुठि राउरि सरल सुभाव[14] ।

होनिहार का करतार का[15] । का दिखाइ यह काह दिखावा[1] ।

१–रा० उ० ८।१२ २–रा० सु० ३।४८, ३–रा० अयो० १००।१६ ४–रा० सु० ५६।४ ५–जा० प० ९२।२, ६–रा० बा० ८०।१२ ७–रा० बा० १००।१२, ८–पा० म० १४।१ ९–बरव रा० ४२।२, १०–रा० अर० २९।२ ११–बरवै रा० ६६।२, १२–रा० अयो० २६।२, १३–रा० अयो० २६।१, १४–रा० अर० २२।४ १५–बरव रा० २०।२ १६–रा० बा० ८८।२१, १७–रा० अयो० ४८।२

(३) विशेषण रूप—

कवन —राम कवन प्रभु पूछउ तोही ।[1] करौं कवन विधि विनय बनाई ।[2]

कैसा —तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा ।[3]

तिर्यक—

१—प्राणिवाचक (परसर्ग रहित)—

काहि —मच्छर काहि कलंक न लावा ।[4] कहति काहि कुँवर कुमारिका ।[5]

केहि-केहि —केहि जग काल न खाहि ।[6] केहि सुकृती के कुँवर ।
मैं केहि कहौ विपति अति भारी ।[8] अस मति सठ केहिं तोहि सिखाई ।[9]
केहि न सुसंग बड़प्पनु पावा ।[10]

परसर्ग सहित—कारक सम्बन्धों (कर्त्ता को छोड़कर) को स्पष्ट करने के लिए परसर्गों का भी योग उपलब्ध है । तिर्यक का सर्वत्र परसर्गयुक्त प्राप्त है—

का यहँ —सीय बिबाहु उछाहु जाइ कहिका पहँ ।[11]

केहि कें —केहि कें बल घालेसि बन खीसा ।[12]

केहि क —केहि क लोभ बिडंबना ।[13]

केहि कर —कालु करम केहि कर बलु पाई ।[14]

(२) अप्राणिवाचक (परसर्ग रहित) मूल तथा तिर्यक दोनों प्रकार के सर्वनामों—का, काह—काहा का प्रयोग क्या के अर्थ में हुआ है—

काह —काहा (छन्दानुरोध से)—
कहौ काह सुनि रीझहु बर अकुलीनहि ।[15]
मो कहुँ काह कहब रघुराया ।[16]
मीठ काह कवि कहहिं जाहि जोइ भावइ ।[17]
कह प्रभु सखा बूझिए काहा ।[18] बार बार प्रभु पूछहु काहा ।[19]

परसर्ग सहित—

केहि लगि —जीव निरथ तुम्ह केहि लगि रोवा ।[20]

केहि लेखे —कहहु तूलि केहि लेखे माही ।[21]

१-रा० बा० ४६।११ २-रा० बा० २४०।१५ ३-रा० लं० ६।१? ४-रा० उ० ७१।५ ५-पा० म० छ० ५।३ ६-रा० सु० ४७।१९ ७-जा० म० ४४।१ ८-रा० सु० १४।२१ ९-रा० लं० १०।४ १०-रा० बा० १०। ६ ११-पा० म ४९।१ १२ रा० सु० २१।२ १३ रा उ० ७०।१९ १४-रा० अयो० १४।२ १५-पा० म० ४९।१ १६-रा० अयो० ७०।९ १७-पा० म० ६५।२ १८-रा० सु० ४७ १९-रा० लं० ८।१८ २०-रा० कि० ११।१०, २१-रा० बा १२।?२

हि हेतु–हेतू– कपि केहि हेतु धरी निठुराई।[1]

विपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू।[2]

ःउप सम्बन्ध वाचक तथा सह सम्बन्ध वाचक

.५ १ सम्बन्ध वाचक

इसके प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

	एक वचन	बहुवचन
मूल —	जो, जोइ—जोई (छन्दानुरोध से)	जो, जे, जिन्ह
तियक—	जेहि, जाहि—जाही (छन्दानुरोध से), जासु—जासू (छन्दानुरोध से), जा— जेहि—।	जिन्हहि जिन्ह—, जेन्ह——

मूल एक वचन—

जो — जो सुनि करहिं बखान।[3] सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ।[4]

करहु सो बेगि जो तुम्हहिं सुहाई।[5]

जो जग जोग भूप अभिषेका।[6] जा त्रिलोकि मुनिबर मन नाचा।[7]

जोइ-जोई–रूप न जाइ बखान जानु जाइ जोहइ।[8] बिनु अवसर भय ते रह जोई।[9]

मूल बहुवचन–

जो – जोएहिं कथहिं सनेह समेता।[10]

जे – सुनहिं जे कहहिं ते तर प्रभु थोरे।[11]

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी।[12] जे यह नछू गाथ गाइ सनावइ हो।[13]

जिन्ह – 'जिन्ह' सवनाम का प्रयोग अत्यल्प है—जिन्ह बरने रघुपति गुन गाथा।[14]

तियक एक वचन—

जेहि – जेहि दीन्ह अस उपदेस बौरेहु कलेस करि बरु बावरो।[15]

तुलसी जेहि न सुहाइ ताहि विधि बामा।[16] आवा कपि तेहि लंका जारी।[17]

सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुराग हो।[18] पारबती निरमयउ जहि।[19]

१–रा० [illegible]० १४।८, २–रा० बा० ५३।१६ ३ रा० बा० १४।२६ ४–पा० म० ६०।२, ५–रा० सु० ९।१, ६–रा० अयो० ६।८, ७ रा० उ० २७।१२, ८–पा० म १२।२, ९ रा० अर० ५।४९ १०–रा० बा० १५।२६ ११–रा० ल ९।१९, १२–रा० कि० ८।१ १३ रा० ल न० २०।३ १४–रा० बा० १४।८ १५–पा० म० छ० ६।२ १६–बरव रा० ५०।२ १७–रा० ल० १८।१६, १८–रा० लं० म० १।३ १९—रा० बा० ७१।१९।

जाहि- सुमिरत जाहि मिटइ अजाना ।[१] जाहि दीन्ह पर नर ।[२]
राम कृपा करि चितवा जाही ।[३] अरि बस दैउ जिआवत जाही ।[४]
जासु—जासु (छन्दानुरोध से) सम्बन्ध कारक को स्पष्ट करने के लिए परसर्ग रहित प्रयोग हैं—
जासु भजन बिन जरनि न जाही ।[५] सीय सुता भइ जासु सकल मंगल मइ ।[६]
राम जासु जस आपु बखाना । बड़ भाग उर आवइ जासू ।[८]
राम चरन पंकज मन जासू ।[९]
(२) परसर्ग सहित प्रयोग—
जा कहु—जा कहुँ करिअ सो पइहउँ ।[१०]
जा का—कह समान भण्ड जस जाका ।[११]
जा की—जाकी ओर बिलोकहि मन तेहि मायहि हो ।[१२]
जा म— सो अनन्य जा के अस ।[१३] काम आदि मद दम न जाके ।[१४]
जा क— काल करम निव जाकें हाथा ।[१५]
सुरपनि बस बाहु बल जाकें ।[१६] जाकें डर सर असुर डराही ।[१७]
जेहि कहँ—प्रभु आयसु जहि कह जम अहई ।[१८]
जहि कहूँ दुइ भाय कहि रति नाथ जहि कहु ।[१९]
जेहि कर जहि कर मन रम जाहि सन ।[२०]
जेहि पर—जेहि पर जन ममता अति छाहू ।[२१]
जेहि सन—सपने जेहि सन होहि लराई ।[२२]
जेहि महु—जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना ।[२३]
जेहि त— जहि त कछु निज स्वारथ होई ।[२४]
जेहि तें— जहि तें नीच बड़ाइ पावा ।[२५]
जहि लागी—करहि जाग जागी जेहि लागी ।[२६]

१—रा० बा० ५ ।३ २ रा० स० ५८ ३— ४—रा० अयो० २१।२
५—रा० अयो० ४।१४ ६—जा० म० ७।२ ७—रा० बा० १७।२० ८—रा० बा० १।३२ ९—रा० बा० १।१७ १०—रा० उ० ८८।१९ ११—रा० बा० १७।१२ १२—रा० ल० न० ६।२, १३—रा० कि० ३।१७ १४—रा० अर० १६।२३, १५—रा० ल० ६।१८ १६—रा० अयो० २५।३ १७ रा० अर० २८।१५ १८—रा० [illegible] ० ५९।७ १९—रा० बा० ८४।२५ २०—रा० बा० ८०।१९ २१—रा० बा० १३।११ २२—रा० कि० ७।३९ २३—रा० उ० ६१।११ २४ रा० उ० ६५।१५ २५—रा बा० २।१७ २६—रा० बा० २८।१९

तियक बहुवचन--इस प्रकार के रूप अत्यल्प मात्रा मे प्रयुक्त हुए हैं--

(१) परसग रहित--

जिन्हहि- जिन्हहि बिरचि बड भयउ बिधाना ।[1] जिन्हहि परम प्रिय खिन्न ।[2]

नाथ जिन्हहि सुधि करिअ तिन्हहि समतेइ हर ।[3]

(२) परसग युक्त -

जिन्ह कर- जिन्ह कर भुज बल पाइ दसानन ।

जिन्ह क- लीन्ह जाइ जग जननि जनम जिन्ह के घर ।[4]

जिन्ह के असि मति सहज न आई ।[5]

जिन्ह कें- जिन्ह के पद पकज प्रीति नही ।[6] जिन्ह कें बिमल बिचारू ।[7]

जिन्ह करे-परहित हानि लाभ जिन्ह केरे ।[8]

जिन्ह पर-ममता जिन्ह पर प्रभुहिं न थोरी ।[9]

जेन्ह माही-मुनि मन मधुप बसहिं जेन्ह माही ।[10]

बलात्मक रूप जेऊ (बहुवचन) तथा जोऊ (एकवचन) मे --ऊ बलात्मक निपात है । दोनो ही रूप छन्दानुरोध से प्रयुक्त हैं--

जेऊ- लखि सुबेषु जग बचक जेऊ ।[11]

जाना चहहिं गूढ गति जेऊ ।[12]

जोउ- भनित बिचित्र सुकबिकृत जोऊ ।[13]

जेई- बूडहि आनहि बोरहि जेई ।[14]

जोई- प्रभु जोइ तुम्हहिं सब साहो ।[15]

५ ५ ७ सह सम्ब ध वाचक

एक वचन	बहुवचन
मूल-सो	ते
तियक-तासु, ताहि तेहि--तही	तिन्हहि तिन्ह-
ता ताहि--ताही-	

मूल एक वचन--

सो- जो सोवइ ससि करन्ह सा सोवइ रौरेहिं ।[1]

१--रा० बा० १६।१५ २--रा० बा० १८।२४, ३--पा० म० ७६।२, ४--रा० अर० २२।९ ५-पा० म० ७।२, ६-रा० कि० ७।५ ७-रा० उ० १४।२२ ८-रा० बा० २३।२०, ९-रा० बा० ४।३ १०-रा० बा० १६।६ ११-रा० बा० ४८।१७, १२-रा० बा० ६।९, १३-रा० बा० २ ।५, १४-रा० बा० १०।५ १५-रा० बा० ,। १६-रा० ल० ११ ।१३ १७-पा० म० ५।।६ ।

अब जो कहहु सो करहुँ ।[1] बवा सो लुतिअ लहिअ जा न हा ।[2]

मेटि को सकइ सो आकु जो विधि लिखि राखेउ ।[3]

अस सुकृती   सो पुरइहि जगदीस ।[4]

सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ।[5]

बहुवचन—

ते— ते मति मंद जे राम तजि ।[6]

ते धीर अछत विकार हेतु । जे रहत मनसिज बस किए ।।[7]

जे पर भनित सुनत हरषाही । ते बर पुरुष बहुत जग माही ।[8]

सोइ–सोई–जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ।[9]

तियक (एकवचन) (परसग रहित)—

तासु— जास नाम जपि   तासु इत ।[10]

तासु दूत मैं जा करि हरि आनहु प्रिय नारि ।[11]

ताहि— तलसी जाहि न सोहाइ ताहि विधि बाम ।[12]

प्रात लेइ जो नाम हमारा । तेहि दिन ताइ न मिलइ अहारा ।[13]

उमाराम सुभाउ जेहि जाना । ताहि भजनु तजि भाव न आना ।[14]

तेहि–तेही–जो जहि भाइ नीक तेहि सोई ।[15]

हरि कोदंड कठिन जेहि भंजा । तेहि समन दप दल मत गजा ।[16]

बहुरि सञ्सन बिनवउतेही । सतत सुरा नीक हित जेही ।[17]

परसग सहित—

ताही सो—नाथ बयर कीज ताही सा । बुधि बल जीति सकिय जही सा ।[18]

ता सो— जाके डर सुर असुर डराही   तासो बयरु कबहु नहिं कीज ।[19]

ता कहु— ता कहु प्रभु कछु अगम नहि जा पर तुम्ह अनुकूल ।[20]

ताहि सन–तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा ।[21]

तेहि पर— जो तजि कपटु करइ द्विज सवा ।[22]

१—जा० म० ६८।२, २—रा० अया० १६।१, ३—पा म० ६४।२ ४—जा० म० ६८।२ ५—पा० म० ६०।७ ६—रा० लं० ३।२, ७—पा० म० छं० ३।४ ८—रा० बा० ८।२४, ९—रा० बा० ७।१८ १०—रा० सु० ०।७ ११—रा० सु० २१।२२ १२—धरव रा० ५०।१ १३—रा० सु० ७।१८ १४—रा० सु० ३४।६, १५—रा० बा० ५।१९ १६—रा० सु० २१।१६ १७—रा० बा० ४।२० १८—रा० अ० ६।९ १९—रा० सु० २२।१८ २०—रा० सु० २३।१८ २१—रा० अ० १९।१३, २२—रा० उ० ४५।१६ ।

बहुवचन (परसग रहित)—

तिन्हहिं— जिन्हहिं सुधि करिअ तिन्हहिं सम तेइ हर ।[1]

प्रभुपद प्रीति न समुझि नीकी ।

तिन्हहिं कथा सुनि लागहिं फीकी ।[2] (जिन्हहिं का लोप)

(परसग सहित)

तिन्ह— कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्ह कर ।

लीन्ह जाइ जग सुनति जनमु जिन्ह के घर ।[3]

बलात्मक रूप ('–उ–ऊ' या 'इ–ई' के योग से)

सोउ— जो सुनहि सोउ बड पातकी ।[4]

सोइ–सोई–जेहि अनुराग लागु सोई हितु आपन ।[5]

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई । मम अनुसासन मानै जोई ।[6]

तेऊ सिद्धि सुरथ जग बचन जेऊ । बंधु प्रसाद पूजिहहिं तेऊ ॥

जीवन मुकत महामुनि जेऊ । हरिगुन सुनहि निरतर तेऊ ॥[7]

५ ६ अनिश्चय वाचक सवनाम

विवचन की सुविधा के लिए अनिश्चय वाचक सवनामो को निम्नलिखित तीन परसर्गों म विभक्त कर लिया गया है—

५ ६ १ मूल–और, औरु, आन–आना

तियक— औरहिं आन—

एक वचन के ही रूप बहुवचन म भी प्रयुक्त हुए हैं ।

मूल एकवचन—

और— और पाव फल भोगु ।[8]

आन' का प्रयोग अधिक मिलता है—

आन— आना (छन्दानुरोध मे)

राम लखन सम तुलसी सिखव न आन ।[9] राम लखन के रूप न देखउ आन ।[10]

धन्य न मो सम आन ।[11] सपथ तुम्हार भरत के आना ।[12]

मूल बहुवचन—

औरु— औरु करहिं अपराध ।[13]

१–पा० म० ७६।२, २–रा० रा० ९।८, ३–पा० म० ७।२ ४–प ० म० छ० ८।२ ५–पा० म० ३३।२, ६–रा० उ० ४३।१०, ७–रा० बा० ७।१० ८–रा० उ० /२।४, ९ रा० अयो० ७३।१८ १०–बरव रा० ४९।२ ११–बरव रा २३।२ १२–रा० अर० २६।२८ १३–रा० अयो० ८३।३ १४–रा अयो० ७८।१३ ।

तिर्यक—

सबु— सबु पाया राज पावनि दूज[1] ।

साजि सामान गिरिराज दाह सबु सिरजहिं[2] ।

सर्बहि मे—कह सर्बहि म नाम[3] ।

सर्बहि पर—चितइ सर्बहि पर कीन्ही ।

सर्बहि कहु कह कहि नाइ सर्बहि कहु माया[4] ।

धन मिस लोचन लाइ सर्बहि कह दीन्हउ[5] ।

सबहि—सबहा—सबहि नचावत रामु गोसाईं ।

अगद चल्उ सबहि नाईं[6] । एहि विधि सबही देत सुख[7] ।

सबहिं— प्रनवउ सबहि धरनि धरि सीसा[8] । सबहिं धर सजि निज निज द्वारे[11] ।

परसगयुक्त—कर्त्ता कारक का छोडकर अन्य कारक-सम्बन्धो को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न प्रकार के परसर्गो का भी योग मिलता है

सब के— बदौ सबके चरण सुहाए[11] ।

राम बचन सबके मन भाए[11] । सबके बचन श्रवन सुनि[1] ।

सबकें— सबकें उर आनद किया बासू[11] ।

सबकर— धनुष तोरि हरि सब कर हरेउ हराय[11] । सब कर करि सनमान बहुता[1] ।

सब केर— मन प्रसन्न सब केर[1] ।

सब पर— सब उदार सब पर उपकारी[11] ।

सबते कहें—भरत कहत सब कह सुमिरहु राम[10] ।

सबते — सब ते दुलभ कवन सरीरा[11] ।

५ ७ निजवाचक सवनाम

मूल— आप — आपु ।

तिर्यक— आपु आपहि ।

सम्बन्ध— आपन—आपना, आपनि—अपनी आपुन अपन तथा अपनें ।

मूल रूप— एकहिं एक सिखावत जावत न आप[11] । आप अछत जुवराज पद[11] ।

१—रा० अयो० ३।१२ २—पा० म० ५३।१, ३—रा० ल० ११९।३० ४—रा० ल० ११८।५, ५—रा० सु० १।७ ६—जा० म० ६७।२ ७—रा० कि० ११।१४ ८—रा० कि० १८।२४, ९—रा० बा० ३४८।७७ १०—रा० सु० २८।११, ११ रा० उ० ९।२ १२—रा० बा० १८। , १ —रा० ल० ३।९ १४—रा० ल० ८।२१ १५ रा० बा० ३५४।१० १६—बरव रा० १६।२ १७—रा० कि० १९।१२ १८—रा० उ १।६ १९ रा उ० २२।१३ २०—बरव० रा० ६५।२ २१—रा० उ० १२१।६, २२ रा० बा ६४। २३—रा अयो० १।३

आपु— ते किए आपु समान[1]।

भजेउ राम आपु भव चापू[2]। राम जासु जसु आपु बखाना।

आपुन— सोइ सोइ भाव देखावइ आपुन होइ न सोइ।

तिर्यक रूप—

आपु— निदहिं आपु सराहहिं मीना[3]।

मनमहिं समरपेउ आपु गिरिजहिं वचन मृदु बोलत भए[4]।

आपुहिं— आपुहिं सुनि खद्योत सम।

सम्बन्ध कारक (विशेषणवत्)—

आपन— समुझि कठिनपन आपन लाग बिसूरन[8]।

जेहि अनुरागु लागु चित साइ हितु आपन[9]।

आपन चरित कहा हम गाई[10]।

अपना— सीतहिं सेइ करहु हित अपना[11]।

आपनि— कहसि न सुख आपनि कुसलाता[12]।

आपनि ओर निहारि प्रमोद पुरारिहिं[13]।

अपनी— मैं अपनी दिसि कीन्ह निहोरा[14]।

आपुन— आपुन मद कथा सुभ पावन[15]।

अपने— फिरत सनेह मगन सुख अपने[16]। कहउ न ताहि मोह बस अपने[17]।

अपनें— अपनें चलत न आजु लगि[18]। समुझि सहम मोसह अपडर अपने[19]।

परसर्ग सहित—

इस प्रकार के रूपों की संख्या अत्यल्प है—

आपु कहँ— माया ईस न आप कहँ[20]।

तुलसी ने निजवाचक सर्वनाम के अंतर्गत 'निज' का प्रयोग अधिक मात्रा में किया है यथा—

एकवचन- उभय भाँति देखा निज मरना[21] निज परम प्रीतम दीखि लोचन[22]।

बटु बिस्वास अचल निज धरमा[23]। पथ कहत निज भगति अनूपा[24]।

१–रा० बा० २९।१८ २–रा० बा० २४।११, ३–रा० बा० १७।२०, ४–रा० उ० ७२।२४ म ५–रा० अयो० ८६।७ ६–पा० म० छ० ५।४ ७–रा० सु० ९।१९ ८–जा० म० ४८।२ ९–पा० म० ३३।२ १०–रा० कि० २।७ ११ रा० सु० ११।४ १२–रा० सु० ५।६ १३–पा० म० १३५।२, १४–रा० बा० ५।१ १५–रा० ल० ७८।२, १६–रा० बा० २५।१५ १७–रा० अयो० २०।१२ १८–रा० अयो० २०।१५ १९–रा० कि० २९।३ २०–रा० अर० १५।१७ २१–रा० अर० २६।१ २२–रा० अर० २६।२७, २३–रा० बा० २।२१ २४–रा० अर० २२।१९

५ ९ ३ निश्चय वाचक सर्वनाम

निकटवर्ती

यह–यहु— परम रम्य उत्तम यह धरनी ।[1] सुनु खगपति यह कथा पावनी ।[2]
यह मत जौं मानहु प्रभु मोरा ।[3] सोउ जाने कर फल यह लीला ।[4]
यह मत लछिमन के मन भावा ।[5] बिमल बंस यहु अनुचित एक ।[6]
कीन्हि अवसि यहु काजु गगन भइ असु धुनि ।

ए– ए अखियाँ सोउ बरनि गेहि कुपाइ ।[8] सबन्धि निरान्तर के फल ए ।[9]

एहा (–एह–एहि)—श्रुति कह सत मित्र गुन एहा ।[10]
एक जन्म कर कारन एहा ।[11] एहि अवसर लछिमन पुर आए ।[12]
भए मोहि एहि आश्रम आए ।[13] एहि सर मम उत्तर तट बासी ।[14]
वेद पुरान मत मत एहू ।[15] सुनहु राम सबु कारनु एहू ।[16]

ईहि– नारि कुसल ईहि काज काजु धनि आइहि ।[17]

इहइ– इहइ सगुन फलु दूसर नाहीं ।[18]

(इह—यह+इ)

दूरवर्ती—

वह सो वह सोभा समाज सुख ।[19]
नाथ कहिअ सोइ जतन मिटइ जहि दूषन ।[20]

५ ९ ४ अनिश्चय वाचक सर्वनामों से बने रूप

अपर– अपर जलधरन्हि अपर ।[21]
अपर कथा सब भूप बखानी ।[22] अपर हेतु सुनु सैल कुमारी ।[23]

आन– तौ घर रहहु न आन पाई ।[24]
लोकहु बद न आन उपाऊ ।[25] आन देव जिन्ह अभिमानी ।[26]

कोइ– अब जीवन कै है कपि आस न कोइ ।[27] हित अनहित नहि कोइ ।[28]

१– रा० लं० ७।४१ २– रा० उ० १५।१ ३– रा० लं० १०।१ ४—रा० उ० २२।९ ५—रा० स० ५८।१ ६—रा० अयो० १०।१३ ७—पा० मं० ८०।२ ८– बरव रा० ३५। ९– रा० उ० १४।१८ १० रा० कि० ७।१२ ११–रा० बा० १४७।५ १२—रा० वि० १९।१५ १३—रा० अर० १२।४ १४—रा० स० ६०।९ १५—रा० बा० २७। १६—रा० अयो० ४।११ १७—पा० मं० ७९।२ १८—रा० अयो० ८।१४ १९– रा० उ० १२।३ २०—पा० मं० ९।१ २१—रा० लं० ४।२१ २२—रा० बा० ०५।८ २३—रा० बा० ९।६ २४– रा० अयो० १९।१६ २५—रा० बा० ३।१७ २६—रा० उ० ७।४ २७—बरव रा० ३८।१ २८—रा० बा० ३।२६ ।

कोउ— कोउ मुनि मिलिहिं ताहि सब घेरिहि ।[1]

कछु— कहु कछु दोष न तोर ।[2] तातें बध कछ पाप न होई ।[3]

कछुक— तातें कछुक बात अनुसारी ।[4] जानउँ महिमा कछुक तुम्हारी ।[5]

जेते— जग महँ सखा निसाचर जेते ।[6]

५९५ सम्बन्ध वाचक सर्वनाम से बने रूप

जे— जे चरन सिव अज पूज्य रज ।[7]

जे ब्रह्म अजमद्वैत मनु भवगम्य ।[8] जीव जन्तु जे गगन उड़ाही ।[9]

जो— देहु जो बर मागऊँ ।[10]

जग बालिक जो कथा सुहाई ।[11] जो गुनीस जेहि आयसु दीन्हा ।[12]

जवनि— बचेहु मोहि जवनि धरि देह ।[13]

जासु-जासू—जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।[14]

ब्रह्मादि गावहिं जस जासू ।[15] जासु कृपा सो दयालु ।[16]

जेहिं-जिहि सवनामृत जेहि कथा सुनाई ।[17]

जहिं— तोर कहा फुर जिहि दिन होई ।[18]

गए जहिं भवन भूप कैकेयी ।[19] जेहिं जोनि जन्मौं कर्म बस ।[20]

५९६ निजवाचक सर्वनाम से बने रूप

निज— मोहि जानिए निज दास ।[21] निज दुख गिरि सम रज करि जाना ।[22]

सोचहि सब निज हृदय मझारी ।[23] निज पद नयन दिए मन ।[24]

आपनि आपनी—देखहु आपनि मूरति सिय कै छाँह ।[25]

जानु प्रगटि चतरानन देखाई चतुरता सब आपनी ।[26]

१—रा० कि० २४।४, २—रा० अयो० ३५।१८ ३—रा० कि० ९।१६, ४—रा० अयो० १६।१५, ५—रा० अर० १३।१०, ६—रा० बा० ६९।१७ ७ रा० उ० १३।२५, ८—रा० उ० १३।४१, ९—रा० सु० ३।३ १०—रा० कि० १०।२० ११—रा० बा० ३०।१ १२—रा० अयो० ७।१, १३—रा० बा० १३७।११ १४—रा० बा० ६६।८ १५— १६—रा० बा० २।३, १७—रा० सु० १३।१२ १८—रा० अयो० १५।४, १९—रा० अयो० ३८।१०, २०—रा० कि० १०।२१ २१—रा० उ० ११३।३१ २२—रा० कि० ७।३ २३—रा० बा० १४।३ २४—रा० सु० ८।१७,

६ | विशेषण-रूप-रचना

६.०

आलोच्य सामग्री में शब्द रचना स्तर पर विशेषण शब्द तीन प्रकार के प्राप्त होते हैं —

(१) रूढ़—इस कोटि में सर्वाधिक शब्द मिलते हैं यथा—

कोमल सुपोती[1] सुन्दर नीर[2] दीन वचन[3] जलधि जड़[4] पंडित मूढ़[5] शठ वचन[6] सात दिवस जरठ जटायू[7]।

(२) यौगिक—इस कोटि के भी शब्द पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं यथा—

अनुरागी राम[8] नृप विरागी[9] कृपाल संकर[10] दयाल प्रभु[11] अचल विपति[12] सुसील भरत[13]।

(३) सामासिक—इस कोटि के शब्द अपेक्षाकृत कम मात्रा में मिलते हैं यथा—

गुनमय फल[14] सीय राम मय[15] अमित गुन रहित[16], बरदायक रामु[17] व्रतपालक[18] स्वयंवर मंगलदायक[19] भगति सुखदाई[20] तुलसी की अवधी में संख्यावाचक सामासिक रूप भी व्यवहृत हुए हैं—

राम अष्टादस[21] दसचारिविप[22] साखा पंच बास[23] (१००)
(१८) (१४)

ऐतिहासिक दृष्टि से आलोच्य सामग्री में प्राप्त विशेषण तत्सम अर्धतत्सम तद्भव और विदेशी कोटि के हैं यथा—

१—रा० बा० २५६।४ २—रा० उ० २९।१९ ३—जा० म० २६।१ ४—रा० सु० ५।२६ ५—रा० बा० २८।१२ ६—अयो० ३।१५ ७—बरव रा० २०।१ ८—रा० उ० २९।२७ ९—रा० बा० ६।१३ १०—रा० लं० ७।१२ ११—रा० कि० १।८ १२—रा० उ० १२।७ १३—रा० अयो० २९।१८ १४—रा० बा० १७।१८ १५—रा० उ० २९।६ १६—रा० बा० ८।३ १७—रा० बा० ।२ १८—रा० बा० २५।१८ १९—रा० उ० ९।१० २०—जा० म० ८० २१—रा० अर० ८।४ २२—रा० उ० १५।१३ २३—रा० उ० १८ ... ।०३ ... २।२६

(१) तत्सम–महामुदितमन[1], सरजू निमल[2], विमलगुन[3], मदु बानी[4], विषम व्रत[5], कृस तनु[6], विपुल सेवा[7], लघु रूप[8], सकल सुकृत[9] चारु बदावा[10]

(२) अध तत्सम समरथ हनुमानू[11], दानव नीचु[12], आरत कोशलनाथा[13]

(३) तदभव—इस कोटि के विशेषण, सख्या की दष्टि से तत्सम रूपो स कम कि तु अध तत्सम विशेषण रूपो से अधिक सख्या मे प्रयुक्त हुए हैं—

लाल कमल[14], कारि साँपिन[15], घटाकारी[16], नीचि करतूती[17], देव ऊँच[18],

(४) देशज अत्यल्प हैं -मूठि-थाता[19], कवित्त फीका[20], फीकी कथा[21]

(५) विदेशी—सूप हजारे ।[22]

अन्त्य ध्वनि के आधार पर (अन्त्य ध्वनि) की दृष्टि से सज्ञा रूपो की भाँति विशेषण-शब्द इस प्रकार हैं—

(१) अ–अकारान्त विशेषणो के रूप सर्वाधिक मात्रा मे प्रयुक्त हुए हैं—

लाल कमल[23], अरुन नयन[24], दढ प्रीति[25], खल निसाचर[26], धनु कठिन[27]

कुछ शब्द ऐसे भी हैं जो अकारान्त तथा आकारान्त दोनो ही रूपो म प्रयुक्त हुए हैं यथा—

स्यामगात[28] —नारि स्यामा[29] सुखद थोर[30] —प्रेम थोरा[31]

बीस भुजा[32]—भुज बीसा[33] दून रूप[34]—प्रिय दूना[35]

नवल कीरति[36]—नवला नारि[37] घोर नरक[38]—रोष घोरा[39]

इस सम्बन्ध म निश्चित रूप स नही कहा जा सकता है कि इनम (अकारान्त । आकारान्त) से कौन सा रूप छन्दानुरोध से प्रभावित है। आकारान्त होने स एक

१—रा० बा० ३४८।६ २—रा० उ० ३।२०, ३—रा० उ० २६।१२, ४—रा० अयो० २७।२, ५—रा० अयो० ३२६।२०, ६—रा० सु० ८।१५ ७—रा० सु० २४।१०, ८—रा० सु० ५।७, ९—रा० अयो० २।३, १०—रा० बा० ३५६।७ ११—रा० बा० २७।१६ १२ रा० बा० ६।११, १३—रा० उ० ५।२९, १४—जा० म० ६४।२ १५—रा० अयो० ३।१६, १६ रा० अर० १३।१०, १७—रा० अयो० १२।११, १८—रा० बा० ६।११, १९—रा० अयो० १६।५, २०—रा० बा० ८।२२, २१—रा० बा० ९।१०, २२—रा० ल० म० १४।४ २३—जा० म० ६४।२, २४—पा० म० ६।१२, २५—रा० कि० १०।२७ २६—रा० सु० ३।४१ २७—बरवै रा० १५।१, २८—रा० ल० १०८।२ २९—रा० अर० २२।१६, ३०—बरवै रा० १०।१, ३१—रा० उ० २९।३, ३२—रा० उ० १४।५ ३३—रा० ल० १०।१२, ३४ रा० सु० २।१८, ३५—रा० कि० ३।१४ ३६—पा० म० ३९।२, ३७ बरवै रा० १७।१ ३८—रा० ल० २।२०, ३९—रा० कि० २९।३३

मात्रा बन्ती है और अकारान्त रहने से एक मात्रा घटती है। यह समव है कि द्विविध प्रयोगो म मात्रा पूर्ति आग्रह रहा हो। कुछ प्रयोग समवत छन्दानुरोध से ही आकारान्त हैं अन्यथा वे अकारान्त ही हैं—

कलकठ कठोरा[1] पुन्य बहूता[2] साधु कृपाला[3] प्रेम पुनीता[4] वचनबिनीता[5], बल विशाला[6], वचन कठोरा[7] तन स्यामा[8] प्रेम अभगा[9], दुख अपारा[10], कोकिला प्रवीना[11]

(२) आ—आकारान्त विशेषणो की सख्या अधिक नही कही जा सकती है जो शब्द मिलते हैं उनम अधिकाशत तत्सम या अर्द्ध तत्सम रूप हैं—

नाना मगल[12], मोह महा[13], मवला नारि[14] पटु पुराना[15]

ऐसे शब्दो का भी प्रयोग दृष्टिगोचर होता है जो आधुनिक हिन्दी (खडी बोली म विशुद्ध आकारान्त हैं किन्तु तुलसी की अवधी म उन्हे ह्रस्व (अकारान्त) रूप म लिया गया है—

भाग छोट[16], अभिलाषु बड[17], मुह मीठ[18], भल काजु[19]

(३) इ—इकरान्त विशेषण पर्याप्त सख्या मे प्रयुक्त हुए हैं ये प्राय स्त्री लिंग हैं, यथा—

एहि विधि[20], असि मति[21], नीचि टहल[22], भलि बात[23], सुहावनि निसा[24]

कुछ शब्द ऐसे भी मिलते हैं जो इकारान्त और ईकारान्त दोनो रूपो म प्रयुक्त हुए हैं यथा—

थोरि खोरी[25]—ममता थोरी[26] पावनि सुरसरी[27]—कथा पावनी[28]

चारि फल[29]—दिन चारी[30] बिशपि प्यार[31]—चरित्र बिशपी[32]

१—रा० बा० ९।२, २—रा० सु० ४।१५ ३—रा० बा० २८।१५, ४—रा० अयो० ३२०।२ ५—रा० सु० १४।१६ ६—रा० सु० ५४।१६ ७—रा० ल० १०।८ ८—रा० अर० १०।३९ ९—रा० अर० २६।१७, १०—रा० उ० १।२, ११—रा० कि० ३०।२० १२—रा० अयो० ६।४, १३—रा० ल० ११५।३, १४—बरवै रा० १७।२, १५—रा० अर० २५।११ १६—रा० अर० ८।२९, १७—रा० अर० ८।२९ १८—रा० अयो० १७।१९ १९—रा० अयो० ५।११, २०—रा० ल० १६।१७, २१—रा० कि० ७।५ २२—रा० उ० १८।१३ २३—जा० म० ५८।१, २४—पा० म० उ० १५।२ २५—रा० अयो० १२।४ २६—रा० बा० १६।४ २७—रा० उ० १३।३८ २८—रा० उ० १५।१ २९—बरवै रा० ६२।२ ३०—रा० सु० ११। ४, ३१—रा० बा० २२।१४, ३२—रा० अयो० ३१२।५

मति मोरि[1]—मति मोरी[2]   सुकुमारि नारि[3]—सुकमारी[4]

(= सद्भावत प्रयोग)

इस सम्बन्ध मे यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि इन द्विविध (इकारान्त । ईकारान्त) रूपों मे र कौन सा छन्दानुरोध से प्रयुक्त हुआ है। दीर्घरूपा (ईकारान्त) की अपेक्षा ह्रस्व रूपो (इकारान्त) का प्रयोग अधिकता से हुआ है। इस ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति मानस मे सवत्र मिलती है जिसे अवधी की अपनी विशेषता कहा जा सकता है।

(४) ई—ईकारान्त विशेषण भी प्राय स्त्रीलिंग हैं, यथा—

जीभ बिचारी[5], मति कुतरकी[6], बिधि नीकी[7], मति पोची[8],

इकारान्त रूपा म कुछ चरण के अत म प्रयुक्त होने पर भी निश्चित रूप से यह नही कहा जा सकता कि इनम कौन-सा रूप छन्दानुरोध से है।

(५) उ—उकारान्त विशेषण भी पर्याप्त मात्रा म प्रयुक्त हुए हैं, यथा—

मृदु बानी[9], मृदु बचन[10]   रखवारे बहु[11], चारु पुर[12]

(६) ऊ–ऊकारान्त विशेषण छन्दानुरोध से ही प्रयुक्त हुए हैं अन्यथा अकारान्त और उकारान्त ही हैं, यथा—

बस एकू[13], सुभाउ अमगू[14], उदधि अगाधू[15], कर दोऊ[16]

(७) ए—अत्यल्प प्रयोग मिलते हैं (लिंग-वचन कारक स प्रभावित रूप)

जे आखर[17]   नए सुख[18], सिअरे बचन[19]   बड़े नयन[20]   नरा सगरे[21]

(८) ऐ-सख्या की दृष्टि से ये प्रयोग नगण्य ही हैं जो एकाध प्रयोग मिलते भी हैं वे तत्सम शब्द हैं—

द्व भुज[22]

(९) ओ–कुछ प्रयोग मिलते हैं। अनुपात की दृष्टि से इनकी सख्या ऐकारान्त रूपो से अधिक है, यथा—

सुहावनो चद[23], साच पावनो[24], बापुरो चद[25]

१—रा०बा० ९।७, २—रा० अयो० ३१८।१, ३—रा० कि० २।४, ४—रा० सु० १२।११ ५—रा० सु० ७।२, ६—रा० बा० ९।११, ७—रा० बा० ३५।११, ८—रा० अयो० १२।१०, ९—रा० अयो० ४।२ १०—पा० म० १३।२, ११—रा० सु० ३।४५, १२—रा० सु० ३।२६, १३—रा० अयो० १०।१३, १४—रा० बा० ७।८ १५—रा० अयो० ४२।१३, १६—रा० बा० ५५।१ १७—रा० अर० ८।२४, १८—रा० ल० ११८।२७ १९—रा० उ० ८।१८, २०—रा० अयो० ७१।१७ २१—बरव रा० १।१, २२—बरवै रा० २७।१ २३—पा० म० छ० ८।४, २४—पा० म० छ० ८।३, २५—रा० बा० ३७।१९

६ २ १—गुण वाचक ६ २ २—परिमाण वाचक ६ २ ३—सख्या बोधक ६ २ ४—क्रिया मूलक (कृदत्त)

६ १ गुण वाचक

इस कोटि के विशेषणो की सख्या सर्वाधिक है। इसके अन्तगत रगसूचक, स्थान वाचक काल वाचक, अवस्था सूचक स्थिति सूचक अवगुण सूचक गुण सूचक तथा आकार सूचक गुण भेद किये जा सकते हैं उदाहरणाथ—

स्याम छवि' स्याम सरोज' तन स्याम', नारि स्यामा बरु स्यामहि', गौर सरीर', गौर मूरति सित कीरति' सित सेमा' धवल कीरति'

६ २ २ परिमाण बोधक

इस कोटि के विशेषण–रूप दो वर्गों म रखे जा सकते हैं—

१–सावनामिक २–अय।

सावनामिक विशेषणा को अध्याय ५ (सवनाम) के अन्तगत विवेचित किया गया है। अय विशेषण इस प्रकार हैं–

बहु छल'' बहुत सनेहु'' बहुत छोहु'' महिमा अमित' अमित बल'' सुखद थोर'' थोरिहि बात', प्रीति थोरी'' त्रास थोरी'' प्रम थोरा',

६ २ ३ सख्या बोधक

६ २ ३ १ पूर्णांक बोधक

एक दिन'' एकु बत'' एकइ धम'' एकहि बात' एकहि बान'' राच्छसी एका'' एकु मैं' अनुचित एकू'' एकउ बर'', इक घनहो', दुइ सिर'' दुइ आखर'' दुइ बरदान'' द्वौ भाई' तीन दिन'' तीनि देव'' तीनि गुन', चारि फल''

१–जा० म० ४४।२ २—रा० सु० १०।५ ३—रा० अर० ८।१८ ४–रा० अर० २२।१६ ५–जा० म० ५७।२ ६–पा० म० ६७।१ ७–बरव रा० ३४।१ ८–बरव रा० ३४।२ ९—रा० अयो० २।१३, १०—पा० म० ३९।२, ११–रा० कि० ८।१७ १२–रा० अयो० ४०।१२ १३–रा० सु० १७।६ १४–रा० लं० २।४२ १५–रा० कि० ८।२५ १६–बरव रा० १०।१ १७–रा० अयो ४२।११ १८–रा० बा० ३५७।१६ १९–रा० अर० २९।४६ २०–रा० उ० १९।३ २१–रा० उ० १।१ २२–रा० अर० ५।१९ २३–रा० अर० ५।१९ २४–रा० अयो० ३२।७ २५–रा० कि० ६।३० २६–रा० सु० ११।१, २७–रा० कि० २।१९ २८–रा० अयो० १०।१३ २९ पा० म० ५३।१ ३०–बरव रा ८।२ ३१–रा० अयो० २६।२ ३२–बरव रा० ६९।२, ३३–रा० अयो० २२।९ ३४–रा० कि० ६।१ ३५–रा० सु० ५७।१६ ३६–रा० कि० १।२७, ३७–रा० अर० १५।१६, ३८–रा० बा० २।२९,

फल चारि[1], दिन चारी[2], पच त्रिलोचन[3], घरी पच[4], पट कंध[5],

पूर्णांक बोधक रूपों के सामान्यतः रूपान्तरों सहित प्रयोग इस प्रकार है—

१=एक, एका (स्त्री०) एकु, इक, २=दुइ, दोउ, द्वौ, ३=त्रि, तीन, तीनि, तिय, ४=चार, चारि, चारी, ५=पच, पाँच, ६=षट छ ७=सप्त सत, सात, ८=अष्ट, आठ, ९=नव, नौ, १०=दस, दहँ, ११=एकान्स, ग्यारह १२=द्वादस, बारह, १४=चतुदस, चौदह, १६=सोरह, १८=अष्टादश अठारह, ३१=एकतीस, ४९-उनचास, ८७=सतासी, १००=सत, सय, सौ, १०००=सहस्र, सहस हजार।

तिथि वाचक गणनात्मक (पूर्णांक) विशेषण—इस प्रकार के विशेषण रूपों का प्रयोग अत्यल्प मिलता है, यथा—

दिन तीजे[6] (तृतीया) फागुन पाँचै[7] (पंचमी)

६ २ ३ २ अपूर्णांक बोधक—इस कोटि के विशेषण रूपों का प्रयोग अत्यल्प हुआ है, प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

अद्ध रात्रि[8] अद्ध निसि[9], अद्ध भाग[10] पहर अढ़ाइ[11],

६ २ ३ ३ क्रमात्मक— प्रथम रेख[12], ध्यान प्रथम[13], पहिलिहि पावरि[14], विधि-दूज[15], धन्य दूजा[16], जीभ दूजी[17], बर दूसर[18], गुन दूसर[19],

६ २ ३ ४ गुणात्मक— दून रूप[20], प्रेम दूना[21], प्रिया दूना[22] चौगुन चाऊ[23]

६ २ ३ ५ समूहात्मक— इस कोटि के विशेषण पर्याप्त संख्या में प्रयुक्त हुए है। रूप निर्माण की दृष्टि से इस कोटि के विशेषण–उ–ऊ, –हु–हूँ, –औ–आ के योग से संरचित है प्रमुख उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(१)–उ–ऊ— (छंदानुरोध से–उ का परिवर्तन–ऊ में) यथा—

१—रा० बा० १।४ २—रा० सु० ११।१४ ३—पा० मं० ५२।१ ४—रा० बा० ३५४।२०। ५—रा० उ० १३।३८ ६—पा० मं० ५।१ ७—रा० मं० ८।१ ८—रा० कि० ६।५ ९—रा० ल० १००।१२ १०—रा० बा० ९।३, ११—रा० अयो० ३१२।१५, १२—रा० बा० १७।७ १३—रा० बा० २७।५ १४—पा० मं० ११७।१ १५—रा० बा० २७।२ १६—रा० बा० ३५२।१०, १७—रा० अयो० १६।२ १८—रा० अयो० ३२।८ १९—जा० मं० ६।२ २०—रा० सु० २।१८, २१—रा० सु० १४।२०, २२—रा० कि० ३।१४, २३—रा० अयो० ५१।१५ ।

अखियाँ दोउ, दोउ तन दोनउ भाई, अविद्या
दोऊ तीनिउ भाई चारिउ चरन मुकुती चारिउ

(२)-हुँ-हुँ (-ई छन्दानरोध से), यथा—

दुहु समाजा, दुहु भाई, तिहुँ काल, तिहुँ लोका
लोक तिहुँ चहुँ युग, चहुँ पासा, दसहुँ दिस,

(३)-हु-हु (-हू छन्दानुरोध से प्रयुक्त)—दुहु भाई, दिसि दहु

(४)-औं—अत्यल्प प्रयोग मिलते हैं—लिए दुऔ जन पीठि चढ़ाई।

६ २ ३ ६ अनिश्चित संख्या बोधक-इस कोटि के प्रमुख विशेषण रूप इस प्रकार हैं—

कोटिन्ह जतन, सब सुजन सकल समाज,
सबहि सतापू सबही बिधि, बहुत दिन, दासी
दास बहुतेरे, सिंधु बहुताई बहुप्रिय सकल
मनोरथ बिपुल बाजने सुर अगनित अखिल
लोक कछुक दिवस बिबिध जंतु अमित
नाम बजनियाँ नाना

६ २ ४ क्रिया मूलक (कृदन्त)

इस प्रकार के विशेषण धातु में -त -ती क -आ -न -नि -नी (स्त्री०) वारे तथा क्रियार्थक संज्ञा में हार-हारा-हारी -हारे -न -नि (स्त्री०) प्रत्ययों के योग से निर्मित हैं। उदाहरणार्थ—

(१) त-ती- चलत बिरंचि, बिलपत नृपहिं जात पवनसुत, लसत कर सोभित बिलास जरत तिमि, सरनह फरत राजत रामु।

१-बरव रा० ३६।२ २-जा० म० ८४।२, ३-रा० उ० २६।७ ४—रा० अर० १५।८ ५-रा० उ० ११। ६-रा० उ० २१।५ ७-रा०बा० २२।१२ ८-रा० अयो० ३१८।११ ९—रा० बा० ३५७।३ १०—पा० म० १४।१ ११-रा० बा० २७।१ १२-रा० सु० ६०।८ १३ बरव रा० ३९।१ १४-रा० ल० १०८।२८, १५—रा बा० १४।२ १६—रा० अयो० ३१५।७ १७ जा० म ८३।१ १८—रा० कि० ८।३ १९—रा० सु० ३।३८, २०—रा० अयो० १ ।१ २१—रा० अयो० ३१४।१३ २२-रा० सु ७।१४ २३-रा० अयो० ७।११ २४—रा० बा० ३३९।३, २५—रा० सु ४।८६ २६-रा० अयो० ८।८ २७-रा० सु० १४।२ २८-रा० बा० ३४८।२ २९-रा० उ० ६।२६, ३०-रा सु० ५७।१० ३१-रा० सु० १६।७ ३२-रा० कि० १५।२१ ३३-रा० बा० २८।१४ ३४-रा० बा० ३५१।१५ ३५-रा० सु० ४।१२ ३६-रा० अयो० ७।१ ३७-रा० सु० ।१ ३८-पा० म० १०४।१ ३९—रा० अयो० ७।२० ४०-रा० अयो० ३१।१ ४१-रा० अयो० २९।१६, ४२-रा० उ० ११९।९।

(२) –क—सतपद अवराधक[1], मुनि पालक[2], पर निंदक[3], द्विज निंदक[4],
(३) –आ–नगर बनावा[5], दडक बन सुहावा[6],
(४) न–नि–नी–न्हेश सुहावन[7], व्याह भावन[8], मगल करनि[9], कलिमल हरनि[10],
सरयू नसावनि[11], राति सुहावनि[12], दुख हरना[13],
(५) –वारा वारे जीवन रखवारा[14], ताल रखवारे[15],
(६) –हार-हारा हारी (स्त्री०) –हारे (पु० बहुवचन तथा तियक ए० व०)
राखनहार अनुग्रह[16] सबु सोवनहारा[17], सिय जाननिहारी[18]
सभु नचावनहारे[19] ।

१–रा० अर० ७।३४ २ रा० अर० १९।१० ३–रा० उ० १०६।१४ ४–रा० अयो० २११।४७ ५–रा० अयो० १३।१ ६–रा० बा० १४।२२, ७–रा० ल० १२०।४ ८–पा० म० २।२, ९–रा० अर० ३।७ १०–रा० उ० १५।१८ ११–रा० बा० १३।७ १२–रा० म० छ० १५।२ १३–रा सु० ५३।१३, १४–जा० म० २५।२ १५–रा० अयो० ९३।३, १६–रा० अयो० १००।५ १७–रा० अयो० ९५।१७ १८–जा० म ४।१, १९ रा० बा० १६।२

७ | अव्यय

तुलसी की अवधी रचनाओं में प्रयुक्त समस्त अव्यय शब्दावली को अर्थ एवं कार्यकारिता की दृष्टि से निम्नवर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

१–क्रिया विशेषण २–समुच्चय बोधक ३–विस्मयादि बोधक ४–परसर्गीय रूप ५–बलात्मक शब्दांश (निपात)।

तुलसी की अवधी रचनाओं में इन सभी प्रकार के अव्ययों के प्रयोग पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

७ १ क्रिया विशेषण

अर्थ की दृष्टि से इसके चार उपवर्ग किए गए हैं—

१–स्थान वाचक २–काल वाचक ३–परिमाण वाचक ४–रीतिवाचक।

७ १ १ स्थान वाचक क्रिया विशेषण

इसे भी दो वर्गों में विभाजित किया है—

१–स्थिति वाचक २–दिशा वाचक

तुलसी की अवधी रचनाओं में प्रथम वर्ग के रूपों की संख्या द्वितीय वर्ग के रूपों की संख्या से कहीं अधिक है।

७ १ १ १ स्थिति वाचक क्रिया विशेषण–कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं--

बहू[1] कहाँ[2] निकट[3] तहाँ[4] जहाँ[5] समीप[6] आगे,[7] पीछे[8] तहवाँ,[9] जहवाँ[10] तहँ[11] माँझ[12] मध्य[13] ढिग[14] ऊपर[15] नियरानि[16]

१-जा० म० छ० १।४ २-रा० सु० ५०।१४, ३-रा० कि० १९।३, ४-रा० सु० १८।३ ५-रा० अर० २८।१२ ६ रा० अयो० ३१९।९ ७-रा० बा० ३६०।११ ८-रा० अर० २७।१२, ९-रा० सु० ८।११ १०-रा० सु० ८।१० ११-रा० कि० १।३ १२-रा० अर० २१।२७ १३-जा० म० १५।१ १४-रा० बा० ४।८३, १५-रा० उ० १०।१३, १६-जा० म० १५।१

नियरान्हि[1], सन्मुख[2], सामुहें[3] अनत[4], अगहुड[5], यहाँ[6], इहाँ[7], कहुँ[8], बाहर[9] भीतर[10], बाहेरहु[11], पासा[12], पासू[13], कही[14], बीचु[15], उत[16], इत[17]

दोहरे स्थिति वाचक क्रिया विशेषण—प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं—

जहँ जहँ—जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया।[18] जहँ जहँ कृपासिंधु बन।[19]

तहँ तहँ—करहिं मेघ तहँ तहँ नभ छाया।[20]

तहँ तहँ ईसु यह हमहीं।

कहुँ कहुँ—कहु कहुँ सरिता तीर उदासी।[21] कहुँ कहुँ वृष्टि सारदी थोरी।[22]

इत उत—इत उत चितम चला भडि हाई।[23] सिंह ठवनि इत उत चितव।[24]

अनत अनत—उपजहिं अनत अनत छवि लहहीं।[25]

इहाँ कहाँ—इहा कहाँ सज्जन कर बासा।[26]

जहँ कहुँ—जहँ कहुँ फिरत निसाचर पावहिं।[27]

जहँ तहँ—जहँ जहँ राम ब्याह सब गावा।[28] जहँ तहँ सोचहिं नारि नर।[29]

७ १ १ दिशावाचक क्रिया विशेषण

प्रमुख रूप यहाँ दिए जा रहे हैं—दूरिहि,[30] , दहिन[31], बाम[32], दूरि[33] पराई[34], दूरी[35]

७ १ २ कालवाचक—क्रियाविशेषणों को तीन उपवर्गों में विभक्त किया जा सकता है—

१—समय वाचक, २—अवधि वाचक ३—पौन पुन्य वाचक।

इनमें से प्रथम उपवग के रूपों की सख्या सब से अधिक तथा तृतीय उपवग की सब से कम है, यथा—

१—जा० म० १२०।२ २—रा० उ० ३।२४, ३—रा० अयो० ३१४।१४, ४—रा० उ० १४।१४, ५—रा० अयो० २५।२, ६—रा० ल० ११९।२२ ७—रा० ल० ११९।१९ ८—पा० म० ६३।१ ९—जा० म० १३।२ १०—रा० बा० ३५२।१३, ११—रा० बा० २११।९, १२—रा० अर० १२।२ १३—रा० बा० ९७।८, १४—जा० म० ४।२, १५—रा० अयो० १८।२, १६—रा० अर० २८।१८, १७—रा० अयो० ४।१७, १८—रा० ल० ११९।२७ १९—पा० म० १५।१, २०—रा० अयो० २४।१० २१—रा० उ० २९।९, २२—रा० कि० १६।१९ २३—रा० अर० २८।१८ २४—रा० ल० १८।२३, २५—रा० बा० ११।६ २६—रा० सु० ६।२, २७—रा० ल० ५।१३ २८—रा० बा० ३६१।७, २९—रा० उ० १।३ ३०—रा० ल० १०७।२१ ३१—रा० अयो० २०।१४ ३२—रा० अर० १९।८ ३—रा० अर० २७।२३, ३४—रा० अर० २७।२३, ३५—रा० अर० २७।२६।

७ १ २ १ समय वाचक—

पाछिं पहरि बहोरी, प्रथमहिं फेरि, फिरि, कालि, काली, तुरत तुरित, तुरतहि, तुरता, आजु, आजू, अजहूँ तब, तबहिं तबही तबहूँ, प्रथम, अब

समय वाचक क्रिया विशेषण तथा स्थिति वाचक क्रिया विशेषण के अंतर्गत आने वाले आगे एवं आगें पाछे एवं पाछें दोनों ही अर्थ की दृष्टि से भिन्न हैं। दोनों में भेद स्पष्ट करने के लिए उदाहरण दिए जा रहे हैं, यथा—

समय वाचक—पाछें—पाछें सुमिरसि मोहि महुँ रामा ।

पाछे—पाछे रावन दूत पठाए ।

आगें—सुनत नीक आगें दुख पावा ।

स्थिति वाचक—पाछे—आगे राम अनुज पुनि पाछे ।

मम पाछे धर धावत ।

आगे—सुख सपन्न राशि सब आगे ।

मुनि राव आगे लेन आयउ ।

७ १ २ २ अवधिवाचक क्रिया विशेषण—तुलसी की अवधी रचनाओं में इस वर्ग के रूपों की संख्या समय वाचक क्रियाविशेषण रूपों की संख्या से कुछ कम है। प्रयुक्त प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

सदा सर्वदा निरंतर अनंत सतत कबहूँ, निसिबासर नित नितहिं अजहूँ नित्य निसिदिन जनम भरि अवधि लगि आजु लगि

१–रा० बा० ३५३९ रा० अयो० ३१८।१६, ३–रा० बा० १६।३ ४–रा० अर० २७।२९ ५–जा० म० १२।२, ६–रा० बा० २९।१२ ७–रा० अयो० ११।७ ८–रा० अयो० ११।११ ९–रा० कि० ४।११ १०–रा० उ० २।४६ ११–रा० सु० ६०।१२ १२–रा० उ० १९।१९, १३–जा० म० ५६।२ १४–रा० अर० ३०।२७ १५–जा० म० ७१।१, १६–जा म० ७१।२, १७–रा० अर० २९।३६ १८–रा० लं० ११७।११, १९–रा० अयो० १३।७५, २०–जा० म० ६९।१, २१–पा० म० ७४।२ २२–रा० अर० २७।३०, २३–रा० सु० ५१।१७ २४–रा० लं० ९।७ २५–रा० अर० ७।२ २८–रा० अर० २६।२५ २ –रा० बा० ३५२।२ २८–जा० म० छ० ५।२ २९–रा० बा० ३६१।२७ ३०–रा० बा० ३६१।२४ ३१–रा० लं० ११५।१५ ३२–रा० लं० १०७।२८ ३ –रा० लं० २।१२ ३४–रा० अर० ४।४ ३५–पा० म० ३७।१ ३६–जा० म० १५।१ ३७–बरव रा० ६१।२ ३८–रा० अयो० २७।१९ ३९ रा० उ० १३।३२ ४०–रा० अर० ६।१४

७ १ २३ पौन पुन्य वाचक—इस प्रकार के क्रिया विशेषणों म या तो समय सूचक शब्दों की प्रत्यक्ष रूप म या 'प्रति' लगाकर अप्रत्यक्ष आवृत्ति होती है। तुलसी की अवधी रचनाओं म इन रूपों की संख्या 'कम' ही है। कुछ प्रमुख रूप यहाँ प्रस्तुत हैं, यथा—

नित नित[1], पुनि पुनि[2], छिनु छिनु[3], बार बार[4], बारहिंबार[5], बहोरि बहोरि[6], फिरफिर[7], प्रतिदिन[8], निमिषि-निमिषि[9]

७ १ ३ परिमाण वाचक क्रिया विशेषण

इस प्रकार के क्रियाविशेषण तीन उपवर्गों म विभक्त किए जा सकते हैं। प्रत्येक के उदाहरण इस प्रकार हैं—

७ १ ३ १ आधिक्य बोधक

अति—करत कथा मन अति कदराई।[1] सीय बरन सम केतिक अति हिय हारि।[11]

बहुत— परबस परी बहुत बिलपाता।[11] बोली बचन बहुत मुसकाई।[11]

निपट—अहह नाथ हौ निपट बिसारी।[12]

अधिक—चंपक हरवा अग मिलि अधिक सोहाइ।[13]

सिय तुव अग रग मिलि अधिक उदोत।[15]

७ १ ३ २ न्यूनता बोधक

कछु—पुनि पुनि करै प्रनाम न कछु कहि आवै।[16]

जातें मोहि न कहत कछु राऊ।[18] जो असत्य कछु कहब बनाई।[19]

७ १ ३ ३ तुलना वाचक

सबते अधिक राम जपु तुलसी दास।[?]

७ १ ४ रीतिवाचक क्रियाविशेषण

इन रूपों को तीन उपवर्गों म बाटा जा सकता है—

१ प्रकार वाचक २—कारण वाचक ३—निश्चय वाचक

आलोच्य भाषा म संख्या की दृष्टि स सर्वाधिक प्रयोग प्रथम वर्ग के तथा न्यूनाधिक प्रयोग दूसरे वर्ग के रूपों के हैं। प्रयुक्त प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

१—रा० अर० १४।८ २—पा० म० १३।१, ३—जा० म० ११०।२, ४—रा० अयो० ३२०।९ ५-रा० सु० ५७।२३, ६-रा० अयो० ३१८।१६ ७-रा० अर० ६।२७ ८-रा० उ० २७।३, ९-रा० उ० ८।१८ १०-रा० बा० १२।२८ ११-बरव रा० ३२।? १२—रा० कि० ५।८ १३—रा० अर० १७।१८, १४—रा० सु० १४।१४ १५-बरव रा० १।११, १६-बरव रा० १३।१ १७ पा० म० ६९।१ १८—रा० अयो० ४२।१५ १९-रा० अयो० १९।९, २०—बरव रा० ५२।२

७.१४.१ प्रकार वाचक

जस[1] कस[2] गहमा[3], इव[4], इति[5], कदाचित्[6], वेगि[7], वेगी,[8] कहेउ[9], अनयासा[10], जथा[11] तैसे[12]

७.१४.२ कारण वाचक

का[13], काहू[14] काहा[15], काहे[16], कैसा[17], कस[18], किन[19], कत[20], ताते[21]

७.१४.४ निषेधवाचक

न—अकथ अनामय नाम न रूपा ।[22]
सकहि न बरनि गिरा अहिनाहू ।[23]
दवि करो कछु बिनती बिल्गु न मानव ।[24]

नहिं—सहस सप नहिं कहि सकहि ।[25]
कवित रीति नहिं जानउँ कबि न कहावउँ ।[26]
बालि ब्याहि सिय देत दोष नहिं भूपहि ।[27]

नहीं—बिरच बिरंचि बनाइ बाँधी रुचिरता रची नहीं ।
जिनके पद पंकज प्रीति नहीं ।[28]
नाहीं—मोरे अनुचर कह कोउ नाहीं [29]
भूरि भाग दसरथ सम नाहीं ।[30]

नाहिन—भूरि भाग तुम सरिस कतहुँ कोउ नाहिन ।[31]
देखत गरब रहत उर नाहिन ।[32]

जनि—मुनि आचरज करै जनि कोई ।[33] एक कहहिं भलि भूप दहि जनि ।[34]

तुलसी ने अवधी रचनाओं में ठेठ ब्रज भाषा का शब्द 'जनि' का प्रयोग नहीं के अर्थ में अनेक स्थलों पर किया है ।

१—रा० अयो० ३१६।१६ २—रा० अयो० ३११।१९ ३—रा० अयो० २२।१० ४—रा० अयो० १२१।३३ ५—रा० लं० १११।३१ ६—रा० कि० ७।६१ ७—रा० अर० १६।१ ८—रा० लं० १०९।४ ९—रा० अयो० ४३१।३ १०—रा० बा० ४।३, ११ रा० बा० १।३७ १२—रा० सु० ५४।२ १३—रा० अयो० ३९।६, १४—रा० अयो० २६।६ १५—रा० उ० १८।१० १६—रा० कि० १२।१० १७—रा० कि० ८।३ १८ बरव रा० ३४।२ १९ रा० अर० २९।२१ २०—जा० म० १०।२ २१—रा० लं० ११२।११ २२—रा० बा० २२।४ २३—रा० बा० ३६।१२ २४—पा० म० ४३।१ २५—रा० उ० २६।१९ २६ पा० म० ३।१, २७—जा० म० ६९।२ २८—जा० म० ४।१ २९—रा० उ० १४।२० ३०—रा० अर० २३।२ ३१—रा० अयो० २।८, ३२—पा० म० १६।१ ३३—रा० अयो० १४।६, ३४—रा० बा० ३।३, ३५—जा० म० ६६।१

रीतिवाचक क्रियाविशेषण के अन्तर्गत वर्णित अव्यय पदो के अतिरिक्त कुछ ऐसे प्रयोग भी इस कोटि मे रखे जा सकते हैं जिनमे 'विधि' तथा 'भाँति' के योग से विविध सार्वनामिक विशेषण—एहि, जेहि केहि तथा तेहि जुडकर क्रियाविशेषण के समान रचना बनती है। उदाहरणार्थ—

भाँति—तेहि भाँति[1], एहि भाँति[2] एही भाँति[3] कवन भाँति, केहि भाँति[5]

विधि—एहि विधि[6], एहिं विधि[7], कवन विधि[8], केहि विधि[9], जेहि विधि[10]

७ २ समुच्चय बोधक अव्यय

इस प्रकार के रूपो के दो उपवर्ग किए जा सकते हैं—

१–समानाधिकरण, २—व्यधिकरण,

७ २ १ समानाधिकरण

तुलसी ने अपनी अवधी रचनाओ मे जिन रूपो का प्रयोग किया है उनके विवेचन की सुविधा की दृष्टि से चार विभेद किए जा सकते हैं—

१–सयोजक, २–विभाजक, ३–विरोध सूचक (प्रतिषेधक), ४–परिणाम सूचक।

७ २ २ १ सयोजक—इस विभेद के अन्तगत प्रमुख रूप अरु तुलसी की अवधी रचनाओ मे पर्याप्त रूप से व्यवहृत हुआ है यथा—

अरु—सुनहि मुदित मन पितु अरु माता।[11] हरि सी हसि सयसु अरु नारी।[12]
धीरज धरम मित्र अरु नारी।[13] नाथ बालि अरु म दोउ भाई।[14]

७ २ १ २ विभाजक-सयोजक रूपो की अपेक्षा विभाजक रूपो मे अधिक ब हुल्य है—

अथवा—सरस होउ अथवा अति फीकी।[15]
त—अमिति करहु त कहो उपाऊ।[16]
मत—सुमुखि होत न त जीवन हानी।[17]
कि—की—की मनाक कि सगपति होइ।[18]
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ।[19]
सुधा कि रोगिहि चाहइ रतन कि राजा।[20]

१—रा० सु० ५९।८, २–रा० बा० २३।१७ ३—रा० सु० १।६, ४–रा० उ० ७।१ ५—पा० म० १४०।१ ६–रा० अयो० ३१२।१ ७–रा० सु० ११।९ ८–रा० बा० ३५५।११, ९–रा० बा० ३५६।१७ १०—रा० उ० २४।१३, ११—रा० बा ८।१८ १२—रा० कि० ६।२२ १३—रा० अर० ५।१३ १४–रा० कि० ६।१ १५—रा० बा० ८।२, १६–रा० अयो० २१।१५, १७—रा० सु० १०।६, १८—रा० अर० २९।२५, १९—पा० म० ६०।२, २०–पा० म० ४७।२।

किंवा—नृप अभिमान मोहबस किंवा।[1]

नाहित—नाहि त जरिहि जनम भर छाती।[2] नाहित मौन रहब दिन राती।[3]

७ २ १ ३ प्रतिषेधक—इस कोटि के शब्द अत्यल्प हैं यथा—

पै—आयसु पै न देहि रघुनाथा।[4] जो पै समर सुभट तव नाथा।[5]

७ २ १ ४ परिणाम सूचक—इस वर्ग में जातें तथा 'तातें' रूप प्राप्त है यथा—

तातें—तातें तात न कहि समुझायउँ।[6] तातें मैं नहिं प्रभु पहिचाना।[7]

७ ३ २ व्याधिकरण

इस प्रकार के रूप एक मुख्य वाक्य का संबंध एक या एक से अधिक वाक्यों से जोड़ते हैं। इन्हें तीन उपवर्गों में बाँटा जा सकता है—

१—उद्देश्य सूचक २—संकेत ३—स्वरूप बोधक

७ २ २ १ उद्देश्य सूचक—

जातें—जातें होहि चरन रति।[8]

जो—जो रघुबीर अनुग्रह कीन्हा।[9] जो कृपाल मोहि ऊपर भाऊ।[10]

७ २ २ २ संकेत बोधक—

जौं[11] जो[12], जौ तौ[13], जद्यपि[14], तद्यपि[15] तदपि[16] तौ[17] कि[18]

की[19], किंवा[20], किधौं[21] धौं[22], कह[23] बरु[24]

७ २ २ ३ स्वरूप बोधक—

मनु[25], मनहु[26], मानहुँ[27], जनु[28]

१—रा० लं० २०।९, २—रा० अयो० ३४।१६ ३—रा० अयो० १६।८, ४—रा० सु० ५५।१० ५—रा० लं० २८।११, ६—रा० अयो० ६७।१०, ७—रा० कि० २।१८।

संकेत वाचक अव्यय के सम्बन्ध में उल्लेखनीय बात यह है कि यह अव्यय प्रायः जोड़े में ही प्रयुक्त होते हैं किन्तु काव्य में क्रम भंगुरता के छन्दानुरोध के कारण कभी कभी एक का लोप भी हो जाता है।

८—रा० अर० १४।१९, ९—रा० सु० ७।९, १०—रा० उ० ९२।१२ ११—जा० मं० ७४।१ १२—रा० अर० १६।८ १३—पा० मं० ७८।२ १४—रा० अर० १३।२३ १५ रा० लं० १०।२२ १६—रा० कि० ६।२६ १७—रा० लं० मं० ३०।३ १८—रा० अयो० २८।१० १९—रा० कि० १।१९ २०—रा० लं० २०।९, २१—रा० अयो० ५०।२४, २२—रा अयो ४४।२ २३—रा० अयो० ४७।१५ २४—जा० मं० ५।४ २५—पा० मं० ९।१२ २६—रा० अयो० २०।१०, २७—रा० उ० १०९।३१, २८—जा० मं० छं० १।२

७ ३ विस्मयादि बोधक अव्यय

इस कोटि की शब्दावली को भावाभिव्यक्ति के आधार पर निम्नलिखित उपवर्गों म विभाजित कर सकते हैं—

७ ३ १ शोक बोधक

'अहह[1], हा[2]

७ ३ २ सबोध बोधक

अहो[3] ए[4], रे[5], रे रे[6], हे[7], हो[8]।

७ ३ ३ तिरस्कार बोधक

रे[9]

७ ३ ४ हर्ष बोधक

जय[10], जय जय[11], जय जयति[12], जय जए[13], धनि[14] धन्य[15]

७ ४ परसर्गीय शब्दावली

सज्ञा-पद-रचना के अन्तगत उल्लिखित परसर्गों के अतिरिक्त कुछ अन्य शब्द भी हैं जो पदों के अन्तगत अपना स्वतन्त्र अस्तित्व (अर्थ की दृष्टि से) बनाए हुए हैं। पदो के बीच भिन्न भिन्न सबधो को प्रगट करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। इन्हें यहा पर सग के रूप में अपनाया गया है—

बीच—बीचि—चितवनि बसति सनखियनु अखियनु बीच।[16]
कीन्हि प्रीति कछु बीच न राखा।[17]
गिरा अरथ जल बीचि सम।[18]
ओर— सम्मुख सबकी ओर।[19]
भर—भरि— मिटहिं दोष भर रजनी के।[20]
जोजन भरि तेहि बदनु पसारा।[21]
मांझ-मँझारी—मुनि मग मांझ अचल होइ बसा।[22]
भयउ कोलाहल नगर मँझारी।[23]

१—रा० सु० १४।४, २—रा० कि० ५।९ ३—रा० ल० १६।२ ४—रा० उ० ८।१३ ५—रा० ल० ३१।१३, ६—रा अर० २९।२१, ७—रा० अर० ३०।१७, ८—रा० ल० न० १०।३, ९—रा० ल० ३३।९, १०—पा० म० ५।१ ११—पा० म० २६।२ १२—रा० उ० १२।८, १३—जा० म० ११२।१, १४—जा० म ४९।२, १५—रा० उ० २०।१२ १६—बरव रा० ३०।२, १७—रा० कि० ५।१ १८—रा० बा० २८।२१ १९—रा० ल० १२।२८, २०—रा० सु० २।१३ २१—रा० उ० ६९।१७, २२—रा० अर० १०।२९ २३—रा० ल० १८।१५

गावहिं सब निज हृदय मझारी।[१]

मारा— जग मारा तारा भव।[२] रुचि न परेउ तपु कारन बट हियँ हारेउ।[३]

पार-पारहिं-परहिं—सिधु पार प्रभु डेरा कीन्हा। चढ़ि चढ़ि पारहिं जाहिं।[४]

जोगु—जोगु—सिला दल तरु घरउ पराई।[५]

जोगु-जागु—फाटे जागु बयारु अभागा। राम सरिस सुत कानन जोगू।[६]

रहित—बिसमय हरष रहित रघुराऊ।[७] जो सुत सहित परहु सबकाई।[८]

सम—तुलसी राम नाम सम मित्र न आन।[९] मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा।[१०]

करत चटक चट बतन बिमिष सम हिय हए।[११]

नाथ जि हहिं सुधि करिअ तिन्हहि सम तेइ हर।[१२]

सरिस—कृपाल भयकर सरिस।[१३] भूरि भाग तुम सरिस कतहु कोउ नाहिन।[१४]

समान—तन समान अलोकनि सबही।[१५] तन समान सुग्रीवहि जानी।[१६]

समाना—जग जोधा को मोहि समाना।[१७] देखत बालक काल समाना।[१८]

लाग—गुरु पद रजहिं लाग छलमाह।[१९]

लगि—जीव निरय केहि लगि तुम रोया।[२०] मोहि लगि सहेउ सबहिं सतापू।[२१]

लागि-मम हित लागि जन्म इह हारे।[२२] दरसन लागि कोसलाधीसा।[२३]

मम हित लागि तजे इन प्राना।[२४]

लागी—सब तरु फरे राम हित लागी।[२५] सब लगि रहहु दीन हित लागी।[२६]

लगे— गिरजहिं लगे हमार जियनु सुख सपति।[२७]

बिनु—बिनु कारन दीनदयाल हित।[२८] सो कि स्वयबर आनिहि बालक बिनु बल।[२९]

सग—तिन्ह के सग नारि एक स्यामा।[३०]

बठहि सभा सग द्विज सज्जन।[३१] सग नारि सुकुमारि सुहाई।[३२]

१—रा० ल० १४।३ २—रा० कि० १।२९, ३—पा० म० ४८।१, ४—रा० ल० ५।५ ५—रा० ल० ८।२२ ६—रा० कि० ६।१६ ७—रा० अयो० १६।३, ८—रा० अयो० ५०।३ ९—रा० अयो० १२।५ १०—रा० अयो० १९।५ ११—बरव रा० ६७।१ १२—रा० कि० ८।६ १३—पा० म० ६१।१, १४—पा० म० ७६।२ १—रा० कि० १।८ १६—पा० म० १६।१, १७ रा० सु० ५५।४, १८—रा० कि ८।४ १९—रा० ल० ८।४ २०—रा० अर० २२।११ २१—रा० अयो० ३१५।२४ २२—रा० कि० ११।१० २३—रा० अयो० १३।१३, २४—रा० उ० ८।१ २५ रा० उ० २७।२ २६—रा० ल० ११४।३ २७—रा० ल० ५।९ २८—रा० अर० ८।११ २९—पा० म १८।२ ३०—रा० ल० १११।२१ ३१—जा० म० ७८।२ ३२—रा० अर० २२।१६, ३३—रा० उ० २६।२, ३४—रा० कि० २।४

नाई— तुम्ह पूछहु कस नर की नाई ।[1] पूछेहु मोहि मनुज की नाई ।[2]
ऊपर—सुधा वृष्टि भ दुहुँ दल ऊपर ।[3] धवल धाम ऊपर नभ चुवत ।[4]
दूरि—दूरी—कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई ।[5] दूरि फराक रुचिर सो घाटा ।[6]
कृत दूरि महा महि भूरि रुजा ।[7] करइ क्रोध जिमि घर भइ दूरी ।[8]

७ ५ बलात्मक शब्दांश (निपात)

अवधी में कुछ अव्ययात्मक शब्दांश पाये जाते हैं जो वाक्य स्तर पर किसी पद विशेष पर बल प्रदान करने में सहायक होते हैं। तुलसी की अवधी रचनाओं में इन बलात्मक शब्दांशों की संख्या सीमित है। समस्त अव्ययात्मक शब्दांशों को दो भागों में बाँट सकते हैं—एकार्थक तथा समेतार्थक इन दोनों ही रूपों का निर्माण निम्न प्रत्ययों के योग से हुआ है —

हि—हिं—इ या ही—ई
हुँ—उ या हुँ—उँ अथवा हू—ऊँ

हि—हिं—इ— एकहि[9], छुवतहि[10] सुनतहि[11], अबहि[12], जातहि[13], सोइ[14], सबइ[15]
हीं— अबही[16]
हुँ—उ— दुहु[17], बहु[18], कतहु[19], अजहु[20], भरतहु[21], आदिहु[22], लछिमनहु[23], कसेहु[24], काल्हु[25] सोउ[26] दोउ[27], एकउ[28], चारिउ[29]
हूँ— हमहू[30] अजहू[31] तुहू[32] पिताहू[33], नारदहू[34], अजहू[35], नाहित[36] नतु[37], त[38] पै[39] (= ही निश्चय)

१–रा० कि० २।१६ २–रा० अर० १३।१८, ३–रा० ल० ११४।११ ४–रा० उ० २७।२३, ५–रा० अर० २७।२१ ६–रा० उ० २९।१, ७–रा० उ० १४।६ ८–रा० कि० १५।८, ९–रा० कि० ६।३०, १०–रा० बा० ३४३।१५ ११–रा० सु० १३।१० १२–पा० म० ७१।१, १३–रा० सु० ५४।४, १४–रा० बा० ७८।११ १५–पा० म० १०६।२ १६–रा० ल० १०।१५, १७–जा० म० ६३।१ १८–रा० बा० २२।१५ १९–रा० कि० २४।१, २०–रा० अयो० ३७।१९ २१–रा० उ० ८।१६, २२–रा० सु० १३।१२, २३–रा० अर० २४।९ २४–रा० कि० १८।३, २५–रा० कि० १८।४, २६–पा० म० ७४।२, २७–रा० अयो० ३१२।१२ २८–रा० अर० ८।११, २९–रा० उ० २९।६ ३०–रा० ल० ८१।३ ३१–रा कि० ९।२३ ३२–रा० अयो० ३२।१३, ३३–रा० बा० ६४।४, ३४–रा० बा० ६८।३, ३५–रा० बा० ८०।२ ३६–रा० अयो० २।११८ ३७–रा० उ० ११५।३८ ३८–रा० अयो० ३४।१६, ३९–रा० अयो० २७।१७।

८ | क्रिया-रूप-रचना

८ ० आलोच्य भाषा मे प्राप्त होने वाले क्रिया

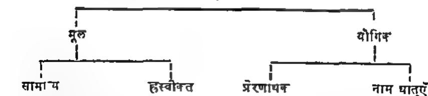
रूप काल वाच्य वचन पुरुष लिंग अर्थ आदि की द्योतन रचनात्मक प्रवृत्तियों से प्रभावित हैं। प्रत्येक क्रिया रूप की रचना इन समस्त व्याकरणिक प्रवृत्तियों से प्रभावित न होकर प्रायः उनमें से अधिकांश प्रवृत्तियों से प्रभावित हैं। कुछ क्रिया रूप संस्कृत से प्रभावित हैं यथा—

जयामि[1] नमामि[2] भवन[3] पल्लवत[4] निस्तरइ[5] राजति[6], भ्राजहिं प्रवर्सहिं[8], निगमहिं[9] पठनि[10], बिचरति[11] भजति[12] विभजि[13] मज्जहिं[14] भजामह[15]

किन्तु इस प्रकार के रूप तुलसी के अवधी की प्रकृति के अनुरूप न होकर संस्कृत भाषा के पट के परिचायक हैं जिनका प्रयोग संस्कृत (देववाणी) के प्रति निष्ठा द्योतन के लिए किया गया है। आलोच्य सामग्री में प्राप्त क्रिया रूपों का विश्लेषण करते समय अनेकानेक धातुएँ प्राप्त होती हैं जिनकी चर्चा सर्वप्रथम की जा रही है -

८ १ धातुएँ और उनका वर्गीकरण

आलोच्य सामग्री में रचना की दृष्टि से अनेक प्रकार की धातुएं प्राप्त होती हैं जिन्हें निम्न तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है—



१–रा० उ० १४।३५ २ रा० ल० १११।२१, ३–रा० उ० २।२ , ४–रा० उ० १३।३९ ५–रा० कि० ३।४ ६–रा० ल० १०९।२९ ७ रा० उ० २७।१८ ८–रा० अयो० २३।१९ ९–रा० अयो० २ ।१९ १०–रा० अयो० २३।१९ ११–रा० उ० १४।३२ १२–रा० अर श्लोक १२।६ १३–रा० उ० १३।६, १४–रा० बा० १।२६, १५–रा० उ० १३।३२

८ ११ मूल धातुएँ

ऐसी आधारभूत धातुयें मूल धातुयें कही गई हैं जिनमे प्रत्ययो के योग से अन्य धातुओं (सनामक, प्रेरणार्थक आदि) की रचना होती है। ये दो प्रकार की हैं—

१—सामान्य—इस वर्ग की धातुयें 'कर्तरि प्रयोग' प्रकट करती हैं, यथा—मार[1], काट[2], देख[3], कह[4], जान[5], कर[6] ला[7], पा[8], गा[9], मान[10]

२—ह्रस्वीकृत—इस वर्ग की धातुयें 'कर्मणि प्रयोग' को प्रकट करती हैं—जीत जित (जितावहि[11]), सीख सिख (सिखावहिं[11]), मेट मिट (मिटब[11]) माज मज(मजि[12]), पूज पुज(पुजि[13]), काट कट(कटहिं[14]), मान मना(मनावहिं) नाच नचा (नचाइहि)

इनका निर्माण सामान्य धातुओं से होता है। यदि सामान्य धातुओं में आक्षरिक स्वर दीर्घ होता है, ह्रस्व हो जाता है।

ह्रस्वीकृत धातुओं से ही प्रेरणार्थक धातुयें निर्मित होती हैं जिन पर विचार यौगिक धातुओं के अन्तर्गत किया जाएगा।

८ १२ यौगिक धातुएँ

ह्रस्वीकृत धातुओं में प्रत्ययों के योग से यौगिक धातुओं का निर्माण होता है। इसके अतिरिक्त नाम शब्दों में प्रत्ययों के योग से बनने वाली धातुयें भी यौगिक ही हैं। अतएव यौगिक धातुओं के दो वर्ग बन सकते हैं—प्रेरणार्थक और नाम धातुयें।

(१) प्रेरणार्थक— आलोच्य भाषा में प्रेरणार्थक प्रत्यय –रा, –आ एवं –वा हैं। '–रा' का प्रयोग अत्यल्प है। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जब अकर्मक धातुओं में—आ का योग होता है तो धातु सकर्मक मात्र हो जाती है, अतः ऐसी धातुओं में प्रेरणार्थक रूप–वा के योग से बनते हैं यथा—चल + आ = चला (सकर्मक), चल + वा (प्रेरणार्थक) सकर्मक धातुओं में—आ तथा—वा दोनों प्रत्यय प्रेरणार्थ का ही बोध कराते हैं, यथा – कर + आ = करा (प्रथम प्रेरणार्थक) तथा कर + वा = करवा (द्वितीय प्रेरणार्थक)

१—रा० ल० ९९।१८, २ रा० ल० ८७।१३, ३—बरव रा० १८।२, ४—बरव रा० ४६।२, ५—रा० ल० ९०।७ ६—रा० ल० १०५।७ ७—रा० ल० न० १७ १, ८—रा० ल० ९४।१४ ९—रा० बा० ३ ।४ १०—रा० बा० २०।८ ११—रा० अयो० ३६०।१५, १२—रा० उ० २५।६, १३—रा० अयो० ६८।१ १४—आ० म० छ० १।४ १५—रा० ग्रा० १९।८ १६—रा ल० ६८।९,।

ह्रस्वीकृत	प्रथम प्रेरणार्थक	द्वितीय प्रेरणार्थक	क्रिया-रूप
सुन+आ	सुना	—	सुनकर[1]
कर+वा		करवा	करवावा[2]
चल+आ	चला		चलावा[3]
जन+आ	जना		जनावा[4]
कह+आ	कहा		कहावा[5]
जित+आ	जिता		जितावहि[6]
सिख+आ	सिखा		सिखावहि[7]
नच+आ	नचा		नचाइहि[8]
चढ़+आ	चढ़ा		चढ़ावउ[9]
मन+आ	मना		मनाइय[10]
मग+आ	मगा		मगाइय[11]
पुर+आ	पुरा		पुराइय[12]
पि+आ	पिआ		पिआवहि[13]
फिर+आ	फिरा		फिरायो[14]
दिख+आ	दिखरा		दिखरावा[15]

कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जिनमें आलेखन की दृष्टि से तो आकारिक दीर्घ मूल स्वरों का ही प्रयोग मिलता है किन्तु उन्हें चौपाई दोहों में ह्रस्व मात्रा प्राप्त होने के कारण उनका ह्रस्वीकृत रूप स्वीकार किया जा सकता है —

ह्रस्वीकृत	प्रेरणार्थक	क्रिया रूप (प्रयुक्त)
दे+ -आ (-व-श्रुति)	देवा (देवा-दिवा)	देवाई[16]
देख+आ	देखा (देखा-दिखा)	देखावा[17]
खेल+ -आ	खेला (खेला-खिला)	खेलावा[18]
बोल+ -आ	बोला (बोला-बुला)	बोलाए[19]
बोल+ -आ	बोला (बोला-बुला)	बोलावा[20]
देख+ -रा	देखरा (देखरा-दिखरा)	दखरायो[21]

१–रा० अयो० ४८।१ २–रा० बा० ३०७।२० ३–रा० सु० २५।१७ ४–रा० कि० ७।७, ५–रा० उ० २१४९ ६–रा० अयो० २६०।१६ ७–रा० उ० २६।६ ८–बरव रा २४।२ ९–रा० अयो० १६।२६ १०–रा० ल० नं० ११। ११ रा० ल० नं ३।३ १२–रा० ल० नं० ६।१ १३–पा० म० ९९।२ १४–रा० ल० ७४। ५ १५–रा० बा० २।१० १६ रा० अयो० १९।२ १७–रा० बा० ८९।९ १८ रा० उ० ७६।२८ १९–रा० कि० १८।१ २०–रा० बा० १८९।९ २१–रा० उ० ७८।१६

किन्तु जिन सामान्य धातुओं में आक्षरिक संयुक्त स्वर आता है उनमें यथावत स्थिति रहकर ही प्रेरणार्थक प्रत्यय संलग्न होते हैं, यथा—

बैठ + -आ	बैठा	बैठाए[1]
बैठ + आ	बैठा	बैठावा[2]
पौन + -आ	पौना	पौनाए[3]

(२) नाम धातुएँ—नाम शब्दों (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि) में शून्य (०), -आ आदि प्रत्ययों के योग से नाम धातुओं की रचना हुई है। कुछ नाम धातुएँ इस प्रकार हैं—

संज्ञा शब्द से सरचित नाम धातुएँ—

नाम शब्द	—	प्रत्यय	—	नाम धातुएँ	—	प्रत्यय रूप
आदर		शून्य (०)		आदर		आदरही[4]
सनमान		,,		सनमान		सनमाने[5]
अनुराग		,,		अनुराग		अनुरागे[6]
जनम		,,		जनम		जनमे[7], जन्मौ[8]
बिस्तार		,,		बिस्तार		बिस्तारी[9]
दुलार		,,		दुलार		दुलारी[10]
हरष (हर्ष)		,,		हरष		हरषेउ[11]
प्रससा (प्रशस)		,,		प्रसस		प्रससी[12]
सकोच		,,		सकोच		सकोचो[13]
बिभास		,,		बिभास		बिभासी[14]
उपदेस		,,		उपदेस		उपदेसा[15]
सठ		,,		सठ		सठेउ[16]
सोभा (सोम)		,,		सोभ		सोभमि[17]
बिरोध		,,		बिरोध		बिरोधि[18]
रिस		-आ		रिसा		रिसाना[19]
लाज (-लज)		-आ		लजा		लजानो[20]

१–रा० कि० २०।१०, २–रा० [illegible] ८९।१४, ३–रा० बा० ३५६।१०, ४–रा० बा० १४।१४ ५–रा० बा० २९।१, ६–रा० उ० [illegible], ७–रा० बा० १२।[illegible], ८–रा० कि० १०।२।, ९–रा० लं० ८९।१२, १०–रा० उ० २।[illegible] ११–रा० अयो० [illegible]१४।१२ १२–रा० अयो० [illegible] १३–रा० अयो० ३२४।१० १४–रा० [illegible] ३२४।१०, १५–रा० अयो० [illegible] १६–रा० [illegible] १७–रा० उ० ११।[illegible], १८–रा० अर० २।१६ १९–रा० कि० [illegible] २०–रा० [illegible]

(३) विशेषण शब्दों से निर्मित नाम धातुएं—

नाम शब्द	प्रत्यय	नाम धातुएँ	प्रयुक्त रूप
अधिक	–आ	अधिका	अधिकाई[1]
विपुल	–आ	बिपुला	बिपुलाई[2]
तरन (–तरुण)	–आ	तरुना	तरुनाई[3]
द्रढ	–आ	द्रढा	द्रढाई
सीतल	–आ	सितला	सितलाई[4]

(४) क्रिया विशेषण—क्रिया विशेषण से बनी नाम धातुएँ अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हैं—

निअर नियर	–आ	निअरा	–नियरा	निअराया[5]
				नियरानि[6]

(५) सर्वनाम से बनी नाम धातुएँ–एक आध धातुएँ ही उपलब्ध हैं—

अपन	–आ	अपना	अपनाई[7] अपनाइअ[8]

इनके अतिरिक्त अनुकरणवाची संज्ञाओं से निर्मित नाम धातुएं भी आलोच्य भाषा में प्राप्त हैं—

कटकट	–आ	कटकटा	कटकटाइ[9], कटकटाहिं[10]
घुरघुर	–आ	घुरघुरा	घुरघुरात[11]
किलकिल	–आ	किलकिला	किलकिला[12]
हुआ	–०	हुआ	हुआहिं[13]
हुकर	–०	हुकर	हुकरि[14]
चिक्कर	–०	चिक्कर	चिक्करहिं[15]

८२ समापिका प्रकार

क्रिया स्थान पर प्राप्त होने वाले क्रिया रूप समापिका प्रकार के हैं अन्यत्र मिलने वाले रूप असमापिक प्रकार के हैं। समापिका प्रकार के क्रिया रूप दो कोटि के हैं—(१) तिङन्ती जिनकी रूप रचना कर्ता के पुरुष एवं वचन के अनुसार होती है और (२) कृदन्ती जिनकी रूप रचना कर्ता या कर्म के लिंग-वचन के

१—रा० उ० १२१।१४ २—रा० सु० ५५।१, ३—रा० लं० १८।८ ४—रा० सु० ४६।९ ५—रा० सु० ५।४ ६—रा० कि० ११।१० ७—जा० म० १५।१ ८—रा० अयो० १८।११ ९—रा० लं० ११६।१३ १०—रा० सु० १९।८ ११—रा० लं० १०१।३ १२—रा० बा० ५।११ १३ रा० सु० २८।४ १४—रा० लं० ८८।५८ १५—पा० म० १४३।१ १६—रा० लं० ४२।

अनुसार होती है। असमापिका प्रकार के अन्तर्गत क्रियार्थक संज्ञा तथा पूर्वकालिक कृदन्त आते हैं।

८२१ तिङन्ती रूप

ये चार श्रेणियों में प्राप्त होते हैं—

(१) वर्तमान (निश्चयार्थ) (२) सम्भावनार्थ (आज्ञार्थ)

(३) भविष्य (निश्चयार्थ) और आज्ञार्थ और (४) भूत (निश्चयार्थ)

८२११ वर्तमान निश्चयार्थ—आलोच्य भाषा में प्राप्त क्रिया रूपों की रचना निम्न लिखित प्रत्ययों के योग से होती है—

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उ० पु०	–अउँ–अऊँ , –औं	–अहिं–अहीं
म० पु०	–असि–असी, –अइ	–अहु–अहू, हु
अ० पु०	असि, –अइ–अई –ऐ, इ–ई, अहि– अही –ही अहिं–अहीं–	अहिं–अहीं –हिं, –एँ

उत्तम पुरुष एकवचन—

–अउ–अऊँ कहउँ प्रतीति मन की[१]।

यह बर माँगउ कृपा निकेता[२]। पुनि बंदउ सारद सुर सरिता[३]।

करन चहउँ रघुपति गुन गाहा[४]। जहँ तहँ मैं देखउँ दोउ भाई[५]।

जिअति भूरि जिमि जोयवत रहऊँ[६]। खल तव वचन कठिन सब सहऊँ[७]।

औं दीन करौं कछु बिनती बिलगु न मानब[८]।

सिय रघुबारहि बिबाहु जथामति गावौं[९]। बदौं अवधपुरी अति पावन[१०]।

ताके जग पद कमल मनावौं[११]। प्रनवौं पुरनर नारि बहोरि[१२]।

बहुवचन—

–अहिं–अही हमरे हृदय कपाट बहहिं हम सांचिअ[1]।

(द्रष्टव्य अ) हम छत्री मृगया बन करहीं[2]। तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं[3]।

इहाँ कुम्हड़ बतिया कोउ नाहीं[4]। एक बार कालहु सन लरहीं[5]।

मध्यम पुरुष एकवचन

–असि–असी हरष समय बिसमौ करसि[6]।

तहूँ मराहसि करसि निदाना[7]। जानसि मोर सुभाय सनहूँ[8]।

छाड़ बचन बान कहि कहसी[9]।

–अ काटइ निजकर सकल सरीरा[10]।

बहुवचन—

–अहु–अहू छत्री रूप फिरहु बन बारा[11]।

कवन हेतु बिरहु बन स्वामी[12]। का घूँघट मुख मूँदहु नवला नारि[13]।

कारन कवन बसहु बन[1]। कस न पिअहु भरि लोचन रूप सुधारस[14]।

तम जानहु सब राम सुभाऊ[15]। का पूँछहु तुम्ह अबहुँ न जाना[1]।

राम सत्य सब जो कछु कहहू[16]। मुधा मान ममता मद बहहू[17]।

–हु सतत दासन देहु बड़ाई[9]।

अन्य पुरुष-एकवचन—

–असि पूछसि लोगन्ह काह उछाहू[18]।

–अइ–अई सो कि दोष गन गनइ जो जेहि अनुरागइ[19]।

जिमि सुख लहइ न संकर द्रोही[20]। चढ़इ गिरिवर गहन[21]।

चाहिय अमिय जग जुरइ न छाछी[22]। उपमा कहत लजाइ भारती भाजइ[1]।

जुवति जूथ महं सीय समाइ बिराजइ[23]। एक रचइ जग गुन बस जाके[24]।

१-पा० म० १०।१२ २—रा० अर० १९।१७ ३—रा० अर० १९।१८, ४-रा० अर० १९।१९ ५-रा० अर० १९।२० ६-रा० अयो० १५।२९ ७-रा० अयो० ३२।१३ ८—रा० अयो० २६।७, ९—रा० लं० ३१।१४ १०—रा लं० २९।२० ११-रा० कि० १।१४ १२-रा० कि० १।१६ १३-बरवै रा० १७।१ १४-रा० कि० ४।१९, १५-जा० म० ६२।१ १६-रा० अयो० १२।६ १७-रा० अयो० १९।३ १८ रा० अयो० १९।० १९-रा० लं० ३७।१० २०-रा० अर० १३।२७ २१-रा० अयो० १३।३ २२-पा० म० ६०।२ २३-रा० कि० १७।१० २४—रा० बा० १।६ २५ रा० बा० ८।१४ २६-जा० म० १४।१, २७-जा० म० १४।११, २८—रा० अर० १५।११

जो सोचइ ससि कलह सो सोचइ गरहि ।[1]

पूजइ सिवहि समय तिहुँ करइ निमज्जन ।[2]

इसान महिमा अगम निगम न जानई ।[3] बल अनुमान सदा हित करई ।[4]

कहीं कहीं संधि हो जाने के कारण 'इ' अपने पूर्ववर्ती 'अ' के साथ मिलकर 'ऐ' हो गयी है—

अजसु जग जान ।[5] देखि न मान ।[6] रानिहि जानि ससोच समुझावै ।

–इ–ई— देइ सद्य फल प्रकट प्रभाऊ ।[8]

जो सुमिरत सिधि होइ ।[9] उतरु देइ न लेइ उसासू ।[10]

होइ जलद जग जीवन दाता ।[11] धूम कुसगति कारिख होई ।[12]

बिनु सतसग बिवेक न होई ।[13] सुरसरि सम सब कहँ हित होई ।[14]

-अहि-अही ही—सत्य कहहि दसकठ तव ।[15]

जानहि कछु करिबर गामिनी ।[16] कौसिक सराहही रुचिर रचना ।[17]

जासु भजन बिनु जरनि न जाही [18] एक ते छीनि एक लै खाही ।[19]

किसी किसी स्थल पर अन्य पुरुष बहुवचन के रूप आदरार्थ में एक वचन बन कर प्रयुक्त हुए हैं—

अहिं–अहीं–भीख माँगि भव खाहिं चिता नित सोवहिं ।[20]

हुँकरि हुँकरि सुलवाइ धेनु जनु धावहिं ।[21]

उमा मातु मुख निरखि नैन जल मोचहिं ।[22]

भाँग धतूर अहार छार लपटावहिं ।[23]

जोगी जटिल सरोष भोग नहि भावहिं ।[24]

सुनि सकुचाइ सोचहिं जनक ।[25] पूछहि कुसल खेम मृदु बानी ।[26]

निसि न नीद अन्न न खाही ।[27] उपजहि अनत अनन छवि लहही ।[28]

१—पा० म० ५५।१, २—पा० म० ३६।१, ३—पा म० छ० १३।४ ४—रा० कि० ७।१०, ५—जा० म० ७०।२ ६ —जा० म० ८७।१ ७ जा० म० ८४।१, ८—रा० बा० २।२६ ९—रा बा० १।२ १०—रा० अयो० १२।१ , ११—रा० बा० ७।२४, १२—रा० बा ७।९ १३—रा० बा० ३।१३ १४—रा० बा० १४।१८, १५—रा० ल० २३।२५, १६—रा० अर० ३६।२, १७—जा० म० ६।३, १८—रा० अयो० ४।१४, १९—रा० ल० ८८।४, २०—पा० म० ५०।१ २१—पा० म० १४३।२, २२—पा० म० १४४।१ २३—पा० म० ५१।१ २४—पा० म० ५१।२ २५—पा० म० छ० १२।३ २६—रा० अयो० २४। , २७—रा० अयो० १३।२, २८—रा० बा० ११।६ ।

अन्य पुरुष बहुवचन—

–अहिं-अही–हिं सत तहहिं दुस पर हित लागी ।[1]

–हीं गावहिं सब रनिवास देहिं प्रभु गारी हो ।[2]

प्रभुहि बिलोकहिं टरइ न टारे ।[3] नाचहिं नगन पिसाच पिसाचिनि ।

सो मुनि करहिं बखान । मुनि जहि ध्यान न पावहिं ।[4]

बिस्रवहिं बाम बिधातहिं दोष लगाव ।

प्रभुन्हि पुर नर नारि सब सजहिं ।[6]

गगन बान बीर चिक्करहा ।[7] घुमि घुमि जहँ तहँ महि परही ।[8]

–एँ सब मोहि कहँ जान दण्ड सवा ।[11] राप सकल सपल्लव मगल तरुबर ।[12]

जनक जय जय सब कहँ ।[13] ज रोइ अभिमत गति लहँ ।[14]

८२१२ सभावनाथ (आज्ञार्थ)—निम्न विभक्ति—प्रत्ययो के योग से रूप रचना होती है—

	एक वचन	बहु वचन
उ० पु०	–अउ –औं	—
म० पु०	–असि –उ अहि—अही	–अहु–अहू –हु–हू –अउ
अ० पु०	–अइ–ऐ –अउ	—

उत्तम पुरुष—

एकवचन—

–अउ करउ अनुग्रह तोर ।[15]

जारि करउ पुर छार ।[16] निसिचर हीन करउँ महि ।[17]

१—रा० लं० ११३।२९ २—रा० लं० नं० १८।१ ३—रा० लं० ४।१३ ४—पा० म० ५०।२ ५—रा० बा० १४।२६, ६—रा० लं० ११७।११, ७—पा० म० ३१।२ ८—रा अयो० २३।१९ ९—रा० लं० ८३।१७ १०—रा० लं० ८७।१८ ११ रा० अर० १६।२० १२—जा० म १८८।२ १३—रा० बा० ३२४।३२, १४—रा० बा० ३२४।३० १५—रा० बा० १।३ १६—रा० कि० १९।१८, १७—रा० अर० ९।१७ ।

-औं   कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई[1] ।

भामिनि करहु त कहौं उपाऊ[2] । जौ कछु कहौं कपटु करि ताही[3] ।

मध्यम पुरुष— मध्यम पुरुष के अंतर्गत प्रयुक्त क्रिया रूप दो प्रकार के प्राप्त हैं—

(१) सामान्य और (२) आदरार्थक

(१) सामान्य—इस प्रकार के रूपों की रचना निम्न विभक्ति प्रत्ययों के योग से होती है—

-असि   अब जनि नयन देखावसि मोही[4] ।

मनु जनि करसि मलान[5] । मारसि जनि सुत बाँधसि ताही[6] ।

भजसि न कृपासिंधु रघुराई[7] । पुनि अस कहसि कबहु घरफोरी[8] ।

-उ   राम कहा प्रनामु करु सीता[9] ।

सुनु सठ कन्या सम ए चारी[10] । देखु विभीषन दच्छिन आसा[11] ।

कारन मोहि सुनाउ[12] । आल बिदा करु बटुहि बड़ बरबर[13] ।

तीरथ पति पुनि देखु प्रयागा[14] । पुनि देखु अवधपुरी अति पावन[15] ।

-अहि-अही   भजहिं राम तजि काम मद[16] । करहि सदा सतसंग[17] ।

सुनु मम बचन मान परिहरही[18] । अब जनि बतबढ़ाव खल करही[19] ।

बहुवचन—

-अहु-अहू   तजहु सोच मन आनहु धीरा[20] । रचहु मंचु मन थोकि चारू[21] ।

कहहु बिभीषन सुनहु कृपाला[22] । सुमिरहु राम नाम करि सेवहु साधु[23] ।

करहु बचन बिस्वास[24] । अब सोइ जतनु करहु तुम्ह ताता[25] ।

सजहु सकल रथ नाग[26] । कौतुक एक भालु कपि करहू[27] ।

रघुबीर भुजबल लरहू[28] । आनि मूरति जनक कौतिक देखहू[29] ।

-हु-हू   केहु देहु सब सबहि हुलासु[30] । लेहु कि देहु अजसु करि नाहीं[31] ।

१-रा० बा० १६।१५, २-रा० अयो० २१।१५ ३-रा० अयो० २६।११, ४-रा० ल० ४९।६, ५-रा० अयो० ५३।२० ६-रा० सु० १९।३ ७-रा० ल० १२७।१२, ८-रा० अयो० १४।१५, ९-रा० ल० १२।१२ १०-रा० कि० ९।१४ ११-रा० ल० १३।१, १२-रा० अयो० २५।३१, १३-पा० म० ६२।२ १४-रा० ल० १२०।१३, १५-रा० ल० १२०।१७ १६-रा० अर० ४६।३१, १७-रा० ल० ४६।३२ १८-रा० ल० ३१।२, १९-रा० ल० ३०।१ २०-रा० कि० ५।१४ २१-रा० अयो० ६।१३, २२-रा० ल० १३।८ २३-बरव रा० ६।११, २४-रा० उ० १४।१८ २५-रा० ल० १०८।२ २६-रा० अयो० २२।१२, २७-रा० ल० १।१६ २८-जा० म० १२।२ २९-जा० म० १२।१, ३०-रा० अयो० १२।१२, ३१-रा० अयो० ३३।११

लंका जाहु कहहु हनुमाना ।[1] नृप सन वर अस दूसर लेहू ।
-अउ हरउ मगन मन क कुटिलाई ।[2]

(२) आदरार्थक रूप—निम्न विभक्ति प्रत्ययों के योग में रूप रचना होती है—

-इअ-इय कहउ करिअ सुरकाजु साजु सजि आपउ ।
लेइअ सग माहि छाडिअ जनि ।[3] आयसु देइअ हरषि हिय ।[4]
लगन वर भइ वगि विधान बनाइअ । नाथ कहिय सोइ जतनु ।[5]
सुनिये बिनती मुनि ।[6] कहा मोर मन धरि न वरिय बर बाउर ।[7]

-इज नाथ बयरु कीज ताही सो ।[8]
अब मुनिवर विलम्ब नहिं कीज ।[9] दीन जानि तोहि अभय करीज ।[10]

-ईजिए दास अगर कीजिए ।[11] कल्यान प्रभ लीजिए ।[12]

-ईज अब विलम्ब केहि कारन कीज ।[13] तुरत कपिन्ह कहु आयसु दीज ।[14]

अन्य पुरुष एकवचन—

-अइ-ऐ कुसल करइ करतार कहहिं हम साँचिअ ।[15]
कोउ जनि ससय ससय करै पर भवकूप ।[16]
मख कि स्वाद बखान ।[17] जार जोग सुभाव हमारा ।[18]

-अउ कोउ नृप होउ हमहि का हानी ।[19]

८.२.१.३ भविष्य निश्चयार्थ—रूप रचना में सहायक प्रमुख इस प्रकार हैं—

	एकवचन	बहुवचन
उ० पु०	-इहहु, -इहहु -इहउ -इहौं -हउ अब -अवि, उब ।	-अब -अवि, इहैं ।
म० पु०	-इहसि -अब -ब उब ।	-इहहु-अब -इबी
अ० पु०	इहि-ही -अब -उब ।	-इहहिं -इहैं -अब ।

१-रा० ल० १०७।२ २-रा० लं० ५८।८ ३-रा० अयो० १०।१६, ४-जा० म० २५।२ ५-रा० अयो० ६६।१८ ६-रा० अयो० ४५।२० ७-पा० म० १२२।२, ८-पा० म० १९। ९-पा० म० १३।२ १०-पा० म० ११।२ ११-रा० ल० ६।२ १२-रा० उ० १०।१५ १३-रा० कि० ४।६ १४-रा० कि० १८।२० १५-रा० कि० १०।४ १६-रा० सु० ३।२३ १७-रा० म० २४।१४ १८-पा० म० १३।१ १९-रा० बा० १०।३ २०-जा० म० ८३। २१-रा० अयो० १६।१३ २२-रा० अयो० १६।११ ।

उत्तम पुरुष

एकवचन—

–इहहुँ एहि सन दृढ करिहहु पहिचानी ।[1] रहिहहुँ निकट सैल पर जाई ।[2]
करिहहुँ जातुधान कर नरसा ।[3] पद पकज बिलोकि तरिहहु ।[4]

–इहहु– राम कज सब करिहहु ।[5]

–इहउ करिहउँ इहाँ संभु थापना ।[6] पद पकज बिलोकि तरिहउँ ।[7]
कब जैहउँ भव सागर पारा ।[8] एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी ।[9]
कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाला ।[10] करिहउँ बाउ मदित मन माही ।[11]

–इहौं सबहि भाँति पिय सेवा करिहौं ।[12]
मारग जनित सकल स्रम हरिहौं ।[13] कृपा निकत पद मन लइहौं ।[14]

–हउँ जाय अब भव देहउँ काहा ।[15] देहउँ उतरु जो रिपु चढ आवा ।[16]

–अब कस न करब हित लागि ।[17] सब विधि घटब काज मैं तोरे ।[18]
तौ मैं मरब काढि कृपाना ।[19] अब कछु कहव जीम करि दूरी ।[20]

–अबि मायावढ करबि मैं सोई[21]

–उब कृपासिंधु मैं आउब ।[22]

बहुवचन

–अब देखब कोटि बिवाह् जिअत जौ बाँचिम ।[23] हमहुँ कहव अब ठकर सोहाती ।[24]

–अबि – जीअत न करबि सवति सेवकाई ।[25]

–हैं हम सीता कै सुधि लीन्हे बिना ।
नहिं जैहैं जुवराज प्रबीना ।[26] (जा–ज+इहैं=जैहैं)

मध्यमपुरुष

एकवचन—

–इहसि जइहसि तै समत परिवारा[27] (जा–ज+इहसि=जइहसि)

१—रा० सु० ७।६, २—रा० कि० १२।१२ ३—रा० अर० २९।१८ ४—रा० उ० १८।१६, ५—रा० सु० २।२५ ६—रा० लं० २।४३ ७—रा० उ० १८।१६, ८— रा० बा० ५४।३ ९—रा० सु० ६।३ १०—रा० सु० १०।११ ११—रा० अयो० ६७।६ १२—रा० अयो० ६७।३ १३—रा० अयो० ६७।४ १४—रा० अर० २६।२०, १५—रा० बा० ५४।३ १६ –रा० लं० ३।११ १७—रा० अयो० २१।२०, १८—रा० अयो० २१।१३ १९—रा० सु० १०।१८ २०—रा० अयो० १६।२, २१—रा० बा० ८।१३, २२—रा० लं० ११५।२१ २३—रा० म० ११९।२, २४—रा० अयो० १६।७ २५—रा० अयो० २।१२ २६—रा० कि० २६।१८, २७—रा० लं० १७।५ ।

–अब –ब समुझब करब करब तुम्ह जोई[1] ।
आयसु देब न करब सकोची[2] । तिन्हहि मिले त होब पुनीता[3] ।
–उब तौ तुम्ह दुख पाउब परिनामा[4] ।
बहुवचन
–इहहु रामकाज सब करिहहु तुम्ह[5] ।
हिय हरि हठ तजहु हठे दुख पैहहु[6] । हमी करिहहु पर पुर जाई[7] ।
स्याह समय सिख मोरि मानि पछितहहु[8] । (पछिता-पछित+इहहु)
जब लगि तुम्ह अइहहु मोहि पाही[9] ।
–अब भुजबल विश्व जितब तुम्ह जाहिया[10] ।
–इबी एहि राजा साजा समन सबव जानिबो[11] ।
अन्य पुरुष
एकवचन—
–इहि–इही तिन्हहि कथा सुनि लागिहि फीकी[12] ।
मार मन अस आब मिलिहि बर बाउर[13] ।
जो न मिलिहि बर गिरिजहि जोगू[14] ।
बालि हतिसि मोहि मारन आइहि[15] ।
मिरत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही[16] । उर अपराधन एकउ परिही[17] ।
–अब जेहि बन जाइ रहब रघुराई[18] । तमकि ताहि ए तोरहि कहब महेस[19] ।
–उब चाप चढ़ाउब राम बचन फुर मानिअ[20] ।
अजहुँ अवसि रघुनंदन चाप चढ़ाउब[21] ।
वस्तुत '—अब और —उब' प्रत्ययों के योग से निर्मित रूप बहुवचन के हैं किन्तु आदरार्थक रूप में एकवचन प्रयुक्त हैं।
बहुवचन
–इहहि निसिचर मारि तोहि लै जइहहि[22] । कपिन्ह सहित अइहहि रघुबीरा[23] ।
जम धारि सहित निहारि सब नर नारि चलिहहि भाजि कै[24] ।

---

१ रा० अया० ३२३।१ २–रा० अया० ३२१।८ ३–रा० कि० १७।३ ४–रा० अया० ६२।६ ५—रा० सु० २।२६ ६–पा० म० ५६।१ ७–रा० बा० ९३।२ ८—पा० म० ५६।२ ९—रा० सु० २।२६ १०—रा० अर० ४१।२ ११ रा० ल० १२०।१७ १२–रा० बा० १४।१३ १३–पा० म० १७।१ १४–रा० बा० ७१।९ १५–रा० कि० ८।१५ १६–रा० सु० ५७।१ १७–रा० सु० ५७।१२ १८—रा० अर० २०।३ १९—पा० म० १५।२ २०—जा० म० ६।२ २१–जा० म० ७।१ २२—रा० सु० १६।९ २३—रा० सु० १६।१०, २४- रा० सु० १६।८

रहित निसाचर करिहहिं धरनी[1] । सुनि गुन भेद समुझिहहिं साधू[1] ।

सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी[2] ।

तुमहि सहित असवार बसहि जब होइहहिं[3] ।

निरखि नगर नर नारि बिहँसि मुख गोइहहिं[4] ।

सुनेउँ श्रवन ऐहहिं रामा[5] । (आ—अ+इहहिं=ऐहहिं)

-इहैं भूत पिसाच प्रेत अनेत ऐहैं साजि कै[6] । (आ—अ+इहैं=ऐहै)

कल्यान काज उछाह ब्याह सनेह सहित जो गाइहैं[7] ।

तुलसी उमा संकर प्रसाद मोद मन प्रिय पाइहैं[8] । नारदादि बखानिहैं[9] ।

-अब उतरु देत बधब अभागे[10] ।

भविष्य आज्ञार्थ—सामान्य आज्ञार्थ से इस काल का प्रयोग कुछ भिन्न है और इसीलिए रूप रचनात्मक विभक्ति प्रत्यय भी भिन्न हैं जिन्हें निम्न प्रकार से प्रदर्शित कर सकते हैं—

	एकवचन	बहुवचन
म० पु०	—एसु	—एहु, —एउ

उदाहरण इस प्रकार हैं—

एकवचन—

-एसु कहेसु जानि जिय सपन बुझाई[11] ।

परखेसु मोहि एक पखवारा[12] । नहि आवौं तब जानेसु मारा[13] ।

बहुवचन—

-एहु सो सब माया जानेहु भाई[14] ।

अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम[15] ।

सदा सबगत सबहित जानि करेहु अति प्रेम[16] ।

राखेहु नयन पलक की नाईं[17] । पितु समीप आएहु भैया[18] ।

जौ मन मान तुम्हार तौ लगन लिखायहु[19] ।

जाहु हिमाचल गेह प्रसंग चलायहु[20] ।

---

१ रा० बा० २१।६, २—रा० अर० २२।९ ३—पा० म० छ० ७।२ ४—रा० बा० ९।१४ ५—पा० म० ५७।१, ६—पा० म० ५७।२, ७—पा० म० छ० ७।२, ८—रा० अर० ८।४ ९—पा० म० छ० ७।१, १०—पा० म० छ० १६।४ ११—पा० म० छ० १६।२ १२—रा० कि० १।८, १३—रा० कि० ६।११, १४—रा० कि० ६।१२ १५—रा० अर० १५।६ १६—रा० उ० १६।२० १७—रा० उ० १६।२२, १८—रा० बा० ३५५।२० १९—रा० अयो० ५३।३, २०—पा० म० ७८।१, २१—पा० म० ७८।२

हमरे जान जनेस बहुत भल कीन्हेउ ।[1] (कीन्ह+एउ)
सिव उपास तजि बास अनत कस कीन्हेउ ।[2] " "
रोकि द्वारा तब मैना कौतुक कीन्हेउ ।[3] " "
आज हमहि सगि बनउब काहु न कीन्हेउ ।[4] " "

–यउ-यऊ गाधि सुवन तेहि अवसर अवध सिधायउ ।[5]
कौसिकहि पूजि प्रससि आयसु पाइ नृप सुख पायऊ ।[6]
लिखि लगन तिलक समाज सजि कुलगुरुहि अवध पठायऊ ।[7]

–एसि खाएसि फल अरु विटप उजारे ।[8] फल खाएसि अरु तोरै लागा ।[9]
पठएसि मेघनाद बलवाना ।[10] कछु मारेसि कछु जाय पुकारे ।[11]
उठि बहोरि कीन्हेसि बहुमाया ।[12] (कीन्ह+एसि)
कीन्हेसि कपट प्रबोधु ।[13] (कीन्ह एसि)
हरि लीन्हेसि सरबस अरु नारी ।[14] (लीन्ह+एसि)
लीन्हेसि परम भगति बर मागी ।[15] (लीन्ह+एसि)

बहुवचन—

–यउ नृपति कीन्ह सनमान भवन लै आयउ ।[16] (आदरार्थक बनकर एक वचन मे प्रयुक्त)
जे मुनि अवध विलोकि सुसरित नहायउ ।[17] " "

–एउ दलेउ जनम फलु भा बिबाह उछाहु उगमहि दस दिसा ।[18]
भा बिबाह सब कहहिं जनम फल पेखेउ ।[19]
देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ ।[20]
नृप समाज जनु तुहिन बनज बन हारेउ ।[21]
दीन्हेउ मोहि राज बरिआई ।[22] (दीन्ह+एउ)
राम लखन मुनि साथ गवनु तब कीन्हेउ ।[23] (कीन्ह+एउ)
करि लहकौरि गौरि हर बड सुख दीन्हेउ ।[24] (दीन्ह+एउ)

१—जा० म० ६७।२, २—पा० म० २८।२ ३—पा० म० १३४।२ ४—पा० म० ७३।१ ५—जा० म० १६।१ ६—जा० म० छ० १४।३, ७—जा० म० छ० १४।० ८—रा० सु० १८।७ ९—रा० सु० १८।२, १०—रा० सु० १८।४, ११—रा० सु० १८।४ १२—रा० सु० १९।१७, १३—रा० अयो० १८।१८, १४—रा० कि० ६।२२ १५—रा० कि० ११।१२, १६—जा० म १६। १७—जा० म० ११६।१ १८—पा० म०छ० १५।१ १९—पा० म० १३२।२ २०—पा० म० ८९।१, २१—पा० म० ८९।२ २२—रा० कि० ६।१८, २३—जा० म० ३१।२, २४—पा० म० १३४।२ ।

८२२ कृदन्ती रूप

कृदन्तीय रूपो की सहायता से आलोच्य भाषा मे वतमान निश्चयाथ, भूत निश्चयाथ तथा भूत सभावनाथ की अभिव्यक्ति हुई है। वतमानकालिक कृदन्ती रूपो के साथ कहा कही वतमानकालिक सहायक क्रिया रूपो के प्रयोग से वतमान निश्चयाथ का और भूतकालिक सहायक क्रिया रूपो के प्रयोग से भूतनिश्चयाथ का बोध कराया गया है। वतमानकालिक कदन्ती रूपो से भूत सभावनाथ की अभिव्यक्ति भी हुई है। प्रमखविभक्ति प्रत्यय दो प्रकार के हैं—अत त और '–आ' जो लिंग-वचन के अनुसार परिवतनशील हैं। –अत–त विभक्ति प्रत्यय युक्त कृदन्ती रूपो से काय की अपूणता और —आ विभक्ति प्रत्यय युक्त कदन्ती रूपो से काय की पूणता का बोध होता है। अत दो वग बनाकर कदन्ती रूपो पर विचार किया जा सकता है—

८२२१ अपूण—इस प्रकार के कृदन्ती रूपा की रचना केवल लिंग से प्रभावित मिलती है। दोनो वचनो मे विभक्ति प्रत्यय समान हैं। लिंग भद [redacted] अतर इस प्रकार है—

	एकवचन	बहुवचन
पु०	–अत–त	–अत
स्त्री०	–अति—अती, —ति	–अति

इन वि क्ति-प्रत्ययो के योग से सचरित कृदन्ती रूपो के द्वारा वतमान निश्चयाथ भूत सभावनाथ की अभिव्यक्ति होती है।

वतमान निश्चयाथ—

एकवचन (पु०)—

–अत, –त लाल कमल जनु लसत बाल मनोजन[1]। सुमिरत राम चरन जिन्ह देखा[2]।
कबहुँक सुरति करत रघुनायक[3]। नर भरकट इव सबहि नचावत[4]।
राजत राज समाज जुगल रघुकुल मनि[5]। तुम्हहू तात कहत अब जाना[6]।
एहि विधि सबहिं देत सुख। देत सबहिं सम गति अविनासी[7]।

स्त्री०

–अति–अती करति विलाप जाति नभ सीता[8]।
–ति–ती करति आरती सासु मगन[9]। सादर पुनि पुनि पूछति ओही[11]।
चितवनि वसति कनखियन अखियनु बीचु[11]।
जपति हृदय रघुपति गुन श्रेनी[11]।

१—जा० म ६४।२ २—रा० अर० ३०।३६ ३—रा० सु० १४।१० ४—रा० कि० ७।४७ ५—जा० म० ४९।१ ६—रा० सु० २७।१४, ७—रा० बा० ३४८।१७, ८—रा० कि० १०।८ ९—रा० अर० २९।४७ १०—पा० म० १३३।२ ११—रा० अया० १७।१, १२—बरव रा० ३०।२, १३—रा० सु० ८।१६

बदति जननि जगदीस जुबति जनि सिरजहि[1] ।
भूषन सजति बिलोकि मगु केकई[2] ।
होति प्रतीति न होहि महतारी[3] । बरनत बरन प्रीति बिलगाती ।

बहुवचन (पु०)

–अत गज केहरि निज सुनत प्रससा[4] । मरि परत उठि भट भिरत भरत[5] ।
देखत बालक काल समाना[6] । गावत गुन मुन मुनिबर बानी[7] ।
धवल धाम ऊपर नभ चुबत[8] । राजभवन सुख बिग्सत[9] ।
राजीव लोचन स्रवत जल[10] ।

स्त्री०—

–अति बिबिधि बाहिनी बिल्सति सहित अनत[11] ।

कहीं कहीं वतमानकालिक सहायता क्रियाओं के योग से भी वतमान निश्च याथ की अभिव्यक्ति हुई है—

परम चतुर हम जानत अहहू[12] । जानत हूँ अस प्रभु परिहरहीं[13] ।
जानत हूँ अस स्वामि बिसारी[14] ।

भूत संभावनार्थ—

	एकवचन	बहुवचन
पु०	–अत –त	–अते
स्त्री०	–अति	–अति

एकवचन (पु०)—

जौं बिधि लोचन करत अतिथि नहि रामहि[15] ।
तौ कोउ नपहि न देत दोष परिनामहि[16] ।
जौं न होत जग जनम भरत को[17] ।
बारि ब्याहि सिय देत दोष नहि भूपहि[18] ।

स्त्री० जौं न होति सीता सुधि पाई[19] ।
जौं रघुबीर होति सुधि पाई[20] । कतहुँ रहहु जौ जानति होई[21] ।

१—पा म० २३।२ २—रा० अयो० २६।१९ —रा० अयो० ४२।१२, ४–रा० बा० २०।७ ५ रा० अर० ३०।२४ ६–रा० अर० २०।८१, ७–रा० अर० २२।११, ८–रा० बा० २४।१२, ९—रा० उ० २७।१३ १०—बरव रा० २।११ ११–रा० उ० ५।२७ १२—बरव रा० ४।११ १३–रा० ल० १७।१४, १४–रा० कि० १२।९ १५–रा० सु० ८।१, १६—जा० म० ७८।१ १७—जा० म० ७४।२ १८– १९–जा म० ७४।१ २० रा० सु० २९।१, २१—रा० सु० १६।१, २२–रा० कि० १८।

बहुवचन (पु०)—

करते नहिं बिलब रघुराई[1] । (वस्तुत बहुवचन के ही रूप हैं किन्तु आदराथ रूप मे एकवचन प्रयुक्त हुए हैं ।)

जो जनते बन बधु बिछोहू[2] । पिता वचन मनते नहि आहू[3] ।

बूढ भयउ नहि करते कछुक सहाय तुम्हार[4] ।

भूतकालिक सहायक क्रियाओ के योग से भूत निश्चयाथ का भी अभिव्यक्ति होती है यथा—

खेलत रहा सो होइया भेंटा[5] । अह निसि विधिहि मनावत रहही[6] ।

प्रभु मुख कमल मनावत रहही[7] । बैठ रहेउ मै करत बिचारा[8] ।

जात रहेउ बिरचि के धामा[9] ।

उपर्युक्त अपूर्ण कृदन्ती रूपो का प्रयोग विशेषणवत भी मिलता है, यथा—

तलफत मीन पाव जिमि बारी[10] । आगे दीखि जरत रिस मारी[11] ।

लसत ललित कर कमल माल पहिरावत[12] ।

फरत करिनि जिमि हतेउ समूला[13] ।

राजत रामु सहित भामिनी[14] । चलत बिरचि कहा मोहि कीन्हा[15] ।

८ २ २ २ पूर्ण—इस प्रकार के कृदन्ती रूपो की रचना लिंग, वचन से प्रमाणित है लिंग वचन के अनुसार विभक्ति प्रत्यय इस प्रकार है—

	एकवचन		बहुवचन
पु०—	—अ — आ , इहु	— इहा	—ए इहे
स्त्री०	—ई — ई ईहि	— इही	—ई —ईंहि—ईही

अ—आ जाइ दीख रघुबस मनि[16] । प्रथम दीख दुख सुना न काऊ[17] ।

अस तप सुना न दीख कबहुँ काहु कहू[18] । पुनि कह कटु कठोर कीन्हई[19] ।

मैं सकर कर कहा न माना[20] । ताते मैं नहि प्रभु पहिचाना[21] ।

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला[22] । जेहि सायक मारा मैं बाली[23] ।

आपन चरित कहा हम गाई[24] । अति लघु बात लागि दुख पावा[25] ।

१—रा० सु० १८।२ २—रा० ल० ६९।११, ३—रा० ल० ६१।१२ ४—रा० कि० २८।२८ ५—रा० ल० १८।६ ६—रा० उ० २५।९, ७—रा० उ० २५।३ ८—रा० कि० ४।६ ९—रा० अर० ८।३ १०—रा० सु० २८।१० ११—रा० अयो० ३१।१ १२—जा० म० १००।१ १३—रा० अयो० २९।१६ १४—रा० ल० १९९।० १५—रा० सु० ४।१० १६—रा० अयो० ३९।१७ १७—रा० कि० ४०।६, १८—पा० म० ४०।२७ १९—रा० अयो० ५।५, २०—रा० बा० ५४।१ २१—रा० कि० २।१८ २२—रा० कि० ८।८ २३—रा० कि० १८।१९ २४—रा० कि० २।१३ २५—रा० अयो० ४५।१३

ईन्ह-ईन्ह तृन गिरि बरवट लीन्ह ।[1] देखें दुगह दुगु दीन्ह ।[2]
अति प्रिय निज उर लीन्ह बसेरा ।[3] बिरथ कीन्ह रघुकुमारा ।[4]
गवनु कीन्ह नर नाय ।[5] भुज उठाइ पन कीन्ह ।[6]
साइ छल हनुमान कह कीन्हा ।[7] पट उर लाइ सोच अति कीन्हा ।[8]
रायँ सुभायँ मुकर कर लीन्हा ।[9] तासु कपट कपि तुरतहि चीन्हा ।[9]

स्त्री०—

ई—ई मइ मम कपट भृ न का नाइ ।[10] गगन पथ देखी मैं जाता ।[11]
समुझी नहिं तस बार पन ।[12] मैं करि प्रीति परीक्षा देखी ।[13]
तुम्ह दखी सीता मृग नयनी ।[14] मइ गिरा मति फेर ।[15]

दी—ही लखि कुचालि कीन्हि कछ सनी । बिनती कहि उदार ।[1]
दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिनानी ।[16] कवल नहिं दीन्हि बडाई ।[17]
दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया ।[2] रामानुज दीन्ही यह पाती ।[3]
अस्तुति करि पनि आसिष दीन्ही ।[18] ल्याइ येहि बिधि सादर कीन्ही ।[19]

बहुवचन—

पु०

—ए दने जिते न्न म्म बैन ।[20] हम पितु बचन मानि बन आए ।[21]
बालम्बि दसरथ के जाए ।[22] (आन्राय रूप में)
मारे निसिचर केहि अपराधा ।[23] उतरइ पार सब काहू पाए ।[24]
सनत बचन जह तहँ जन धाए ।[25] बाँधे घाट मनोहर ।[1]
नाथ न मैं समुझ मुनि बना ।[26] (आन्राय रूप म)
गगन सुलन मद बचन उचारे ।[3]

१—रा० अयो० ४३।१८ २ रा अयो० २०।१८ ३—रा० लं० १२।१८ ४—रा० सु० १९।१० ५—रा० बा० ५१। ० ६—रा० अर० ९।१८ ७—रा० सु० ३।७ ८—रा० कि० ५।१२ ९— रा० अयो० २।११ १०—रा० सु० ३।८, ११—रा० अर० २४।१ १२— रा० कि० ५।७ १३—रा० बा० ३०।११, १४—रा० अयो० १ ।१२ १ —रा० अर० ३०।१८ १६—रा० अयो० १२।२० १७—रा० ७० ।/० १८—रा० सु० १ ।२० १९ —रा० ल० ११४।८ २०—रा० कि० ११६ २१— रा सु० ५६। ७ २२—रा० बा० २१।८, २४— रा० बा० ३/२ २ २ —रा० अर २१। —रा० कि २।२, २६—रा कि० २।१ २७— रा उ० २१। २८—रा० बा० ३५।३ २९—रा० ७० १।१५ ३०—रा० उ० ७।७ ३१—रा० बा० ७१।८ ३२—रा० उ० १६। ।

–न्हे	राजन्ह दीन्हे हाथी रानिन्ह हार हो ।[1]
दान अनेक दुजन्ह कहँ दीन्हे ।[2] दीन्हे भूषन बसन प्रसादा ।[3]
कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना ।[4] कीन्हे मुकुत निसाचर मारी ।[5]

स्त्री०

ई	उठी सखी मिस करि कीन्ह मदु बैन ।[6]
हिय हरषि सुतन्ह समेत रानी आइ रिषि पायन्ह परी ।
कौसिक दीन्ह असीस सकल प्रमुदित भई ।[7]
लावा होम विधान बहुरि भाँवरि परी ।[8]
मन भावत विधि कीन्ह मुदित भामिनि भई ।[9]
जिमि सकरहि गिरिराज गिरजा हरिहि श्री सागर दई ।[10]
बर दुलहिनिहि लवाइ सखी कोहबर गई ।[11]

न्हि-न्ही	बहुरि बुलाइ सुआसिन लीन्ही ।[12] निज निज सेम सयन तिन्ह कीन्ही ।[13]
कीन्ही सुमन वृष्टि हरषे सुर ।[14] रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्ही ।[15]

उपयुक्त पूर्ण कृदन्ती रूपो का प्रयोग विशेषणवत भी हुआ है यथा—
मरे निसाचर फिरि भिरहिं ।[16]
दीख मथरा नगरु बनावा ।[17] बने बराती बरनि न जाई ।[18]

८ २ ३ सहायक क्रिया

आलोच्य भाषा मे सहायक क्रियाएँ तिङन्त एव कृदन्त क्रिया-रूपो के साथ प्रयुक्त होकर कुछ कालो को स्पष्ट करने में सहायक होती हैं। कही कही इनका स्वतन्त्र रूप मे भी प्रयोग हुआ है। आलोच्य भाषा म प्रयुक्त समस्त सहायक क्रियाओ का इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

(१) वतमान काल—इस काल के सहायक क्रिया रूपो मे प्राप्त धातु 'अह' अथवा 'ह' है जिसमे पुरुष वचन के विभक्ति प्रत्यय सलग्न होकर अनेक रूप बनाते हैं। इसके अन्तगत प्राप्त सहायक क्रियाएँ इस प्रकार हैं—

एक वचन—

उ० पु०—

अहउँ–अहऊँ-तब लगि बठि अहउँ बट छाहो ।[19] (अह + अउँ)

१—रा० ल० न० १६।३, २—रा० उ० २४।२, ३—रा० उ० २०।२, ४—रा० सु० ५४।६, ५—रा० ल ११५।१८ ६-बरवै रा० १९।१ ७-जा० म० छं० २।४, ८—जा म० १७।१, ९— पा० म १३३।२, १०—जा० म० १४६।१, ११—जा० म० छं० १८।२, १२—जा० म० १४६।२ १३ —रा० बा० ३५३।९ १४—रा० बा० ३५६।१२ १५—रा० ल० ११९।१२ १६—रा० बा० ३५३।१० १७—रा० ल० ७५।१ १८—रा० अयो १३।१ १९—रा० बा० ३४८।७, २०—रा०

	नीति धरम हम जानत अहऊँ ।[1]	(अह + अऊ)
	परम चतुर मैं जानत अहउँ ।[2]	(अह + अउ)
	जानत हौं मोहि दीन्ह बिधि ।[3]	(ह + औं)
म० पु०—		
हसि	का अनमन हसि कह हँसि रानी ।	(ह् + असि)
अहसि	को तू अहसि सत्य कह मोही ।[5]	(अह + असि)
अ० पु० -		
हइ–है	बरनि सक छवि अतुलित अस कवि को हइ ।[6]	(ह् + अइ)
	है प्रभु परम मनोरथ ठाऊ ।	
	एक अहहि कुअँर किसोर कुलिस कठोर सिव धनु है महा ।[8]	(ह + ऐ)
	अब जीवन कहैआस न कोइ ।[9]	(ह + ऐ)
	कथा है कछु एक कही ।[10]	(ह + ऐ)
अहइ–अहई	अहइ कुमार मोर लघु भ्राता ।[11]	(अह + अइ)
	तुम्हहि कहाब परम प्रिय अहई ।[12]	(अह + अई)
	प्रभु आयसु जेहि कह जस अहही ।[13]	(अह् + अही)
अहै	तुम्ह कहुँ बिदित गति सबकी अहै ।[14]	(अह + ऐ)
बहुवचन—		
म० पु०—		
अहहू	सतत सील प्रेम बस अहहू ।[15]	(अह् + अहू)
हहु	जानति हहु बस नाह हमारे ।[16]	(ह + अहु)
	ये दोनो रूप आदरार्थक बनकर एकवचन म प्रयुक्त हुए हैं ।	
म० पु०—		
अहहिं–अहहीं	राम अहहिं दसरथ के लछिमन आनक हो ।[17]	(अह + अहिं)
	जे पातक उपपातक अहही ।[18]	(अह + अही)
	जग पतिव्रता चारि विधि अहही ।[19]	(अह + अही)
	ऐसे नर निकाय जग अहही ।[20]	(अह + अही)

१—रा० ल० २२।८ २—रा० ल० १७।१४ ३—रा० अयो० १४६।२० ४—रा० अयो० १३।१० ५—रा० अयो० ६२।१२ ६—जा० म० १०७।२ ७—रा० अर० १३।२९, ८—जा० म० ७।३ ९—बरव रा० ३८।१ १०—रा० सु० ३।४३ ११—रा० अर० १७।२२ १२—रा० अयो० २८।२ १३—रा० सु० ५९।७ १४—रा० बा० ३३६।३६ १५—रा० अयो० ८१।१५ १६—रा० अयो० १४।१० १७—रा० ल० न० १२।ध १८—रा० बा० ७।२७, १९—रा० उ० ९।२३, २०—रा० ल० ११९।१५ ।

भरत आगमनु सूचक अहही ।[1] (अह + अहीं)

हहिं — मानहुँ ग्रसन चहत हहिं लंका ।[2] (ह् + अहिं)

हहिं पुरारि तेउ एक नारि व्रत पालक ।[3] (ह् + अहिं)

सो बिचारि सुनि हहिं सुमति ।[4] (ह् + अहिं)

हैं — हहकनि हैं उनिअरियाँ निसि नहि घाम हो ।[5] (ह् + एँ)

(२) भूतकाल—इस काल के सहायक क्रिया रूपों में प्राप्त धातु 'भ' है। इसके अतिरिक्त ह्—एवं रह्—धातुयें भी हैं। इन सब में लिंग वचन के अनुसार विभक्ति प्रत्यय लगकर रूप रचना होती है। प्राप्त रूपों को इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

एकवचन—

पु०—

भा — अब मोहि भा भरोस हनुमंता ।[6] (भ + आ)

भा मोहि तें कछु बड़ अपराधू ।[7] (भ + आ)

कह सीता विधि भा प्रतिकूला ।[8]

भा कुबरी उर सालू ।[9] राम तिलकु सुनि भा उर दाहू ।[10]

रावन उर भा क्रोध बिसेषी ।[11] लखि नारद नारदी उमहि सुख भा उर ।[12]

भयउ-भयऊ — छेन भूल सुत भयउ घमोई ।[13]

नाम अपरना भयउ परन जब परिहरे ।[14] तुरत पवनसुत गवनत भयऊ ।[15]

भयो — राम बिमुख कलिकाल को भयो न भाँडु ।[16]

रहा — तरु पल्लव महँ रहा लुकाई ।[17] मोहि रहा अति अभिमाना ।[18]

खेलत रहा सो होइ गै भेंटा ।[19] राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी ।[20]

रहा एक दिन अवधि कर ।[21] र । हृदय भरि पूरि उछाहू ।[22]

कृत भूप बिभीषन दीन रहा ।[23] कृत भूप बिभीषन अध नाही ।[24]

रहेउँ — भरत रहेउँ नृप नीति ।[25]

१—रा० कि० १४।२० २—रा० सु० ५५।१६ ३—पा० म० १०४।२ ४—रा० बा० ९।२५, ५—बरव रा० ३७।२, ६—रा० सु० ७।७, ७—रा० अयो० ४२।१४ ८-रा० सु० १२।१३ ९—रा० अयो० १३।२०, १०—रा० अयो० १३।४ ११—रा० लं० १९।१४ १२—पा० म० १७।२ १३—रा० उ० १०।६ १४—पा० म० ३०।१, १५—रा० लं० १२१।५ १६—बरव रा० ६६।२ १७—रा० सु० ९।१, १८—रा० लं० ११३।२१ १९—रा० लं० १८।६ २०—रा० सु ५७।२२, २१—रा० उ० १।१, २२—रा० बा० ३५४।२, २३—रा० लं० १११।१६ २४—रा० उ० २।१६, २५—रा० अयो० ३१।२०।

स्त्री०

भइ भई भे देखि विकल भइ जुगल कुमारा[1] ।

(अइ-ए) बालि बचन इह भइ परतीती[2] । विवध धारि भइ गुन गुहारी[3] ।

इन तें भइ पित कीरति अति अभिमान[4] । दंड एक भइ मुरछा तेही[5] ।

कुअरि लागि पितु काँध ठाढ़ भइ सोहई[6] । विगत भई सब पीर[7] ।

उमहि बालि रिपि पवन मातु मस्त भई[8] । सुधा वृष्टि भै दुहु दल ऊपर[9] ।

रही कीरति रही भुवन भरि पूरी[10] । छुधा न रही तुम्हहि तब काहू[11] ।

जेहि विधि जनकसुता तहँ रही[12] । प्रीति रही कछु बरनि न जाई[13] ।

बहुवचन—

पु०—

भए राम जपत भए तुलसी तुलसीदास[14] । (आदराथ रूप मे प्रयुक्त)

उल्टा नाम जपत कोल ते भए रिपि राउ[15] ।

कौसिक सराही रुचिर रचना मुनि हरपित भए[16] ।

रमाकर भए तिन्ह के मन[17] ।

सुनि सहम परि पाइ कहत भए दंपति[18] ।

सात दिवस भए साजत सकल बनाउ[19] ।

सिय रघुबर के भए उनीदे नयन[20] । विबुध मन प्रमन्ति भए[21] ।

भे भे निरास सब भूप[22] ।

रहे रहे परन गहू छ द[23] ।

रजनीचर व द पतंग रहे[24] । परिहरि दास तव जे हाइ रहे[25] ।

जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना[26] । बोलि अकेलि जेहि आश्रित रहे[27] ।

हुते सग सुभामिनि भाइ भली दि हो जनु औघ हुत पहुनाई[28] ।

१—रा० अर० १७।८ २—रा० कि० ७।२६ ३—रा० अयो० ३१७।६, ४—बरव रा० ३४।२ ५—रा० अर० २९।४०, ६—पा० म० १२।१ ७—रा० अर० ३०।२०, ८—पा० म० १।१।१ ९—रा० ल० ११४।११ १०—रा० बा० ३५७।६ ११—रा० ल ९।४ १२—रा० सु० ८।६, १३—रा० कि० ६।२ १४—बरवै रा० ५९।२ १५—बरव रा० ५४।२ १६—जा० म० ६।३ १७—रा० ल० ११४।१२ १८—पा० म० १८।१, १९—बरव रा० २०।१, २०—बरवै रा० १९।२, २१—रा० बा० ३२१।२४, २२—जा० म० ५७।१, २३—रा० अर० १३।४०, २४—रा० उ० १४।७ ५—रा० उ० १३।२२ २६—रा० कि० १५।२३ २७—रा० उ० १३।३२, —जा०

स्त्री०—

भई सकल हियँ हरषित भई[1] । अस्त भएँ बिगसत भई[2]।

दिन दुसरे भूप भामिनि दोउ भई सुमगल खानी[3] । बिगत भई सब पीर[4]।

(३) भविष्यकाल—

इस काल मे मुख्य क्रिया धातु हो— से निर्मित रूप सहायक क्रियाओ की तरह प्रयुक्त मिलते हैं। ये तिड॰त रूप होते हैं। जिन पर विचार विषयक्रम ८ २ १ ३ के अन्तगत किया जा चुका है।

८ ३ १ पूर्वकालिक कृदन्त

इस प्रकार के रूपा मे धातुओं के साथ –इ ई (मात्रा पूर्ति हेतु) प्रत्यय का योग बहुलता से मिलता है। कुछ रूपो मे आलोक की दृष्टि से केवल '–अ' निकल पाता है। इन प्रत्ययो के योग से निर्मित रूपो के साथ कभी कभी परसग क–काइ भी प्रयुक्त हुए हैं।

–इ–ई राम लखन छवि देखि मगन भए पुरजन[5] ।

घर ते खेलत मनहुँ अबहिं आई उठि[6] ।

हिएँ हेरि हठ तजहु[7] । सजल कठौता कर गहि कहत निषाद[8] ।

कहहु विप्रजन कथा बुझाई[9] । जो असत्य कछु कहब बनाई[10] ।

अनुलेखन विविधता के कारण इ के स्थान पर 'य' भी कहीं कहीं प्रयुक्त है–

हाट पटारिहि दाय सकल तरु लाइन्हि[11] ।

एक घरहिं धनु धाय नाय सिरु बैठहि[12] ।

–ऐ गुजत अलि लै चलि मकरदा[13] । (ले—ल+ऐ)

सासु कुसल लै तुम्ह चलि आवहु[14] । " , ,

लछिमन कर प्रथमहि ल नाथा[15] । , , "

सुग्रीव सग रघुनाथा[16] । ,

ल पुष्पक प्रभु आगे राखा[17] । , , "

सचिव सग लै नभ पथ गयऊ[18] । ,

–अ चला अकेल जान चढ़ि तहवाँ[19] । बोली वचन क्रोध कर मारी[20] ।

१—रा० बा० ३१८।२", २ रा० उ० ९।२१, ३—रा० बा० ६०।३, ४—रा० अर० ३०।४० ५—जा० म० ५५।१, ६—पा० म० ७१।२, ७—पा० म० ५६।१, ८—बरव रा० २५।१ ९—रा० कि० २।८ १०—रा० अयो० १९।९ ११—पा० म० ८७।२ १२—जा० म० ११।२ १३—रा० उ० २३।८ १४—रा ल० १०७।६, १५—रा० अर० २७।२९ १६—रा० कि० ७।४९ १७—रा० ल० ११७।७ १८—रा० सु० ४१।१७ १९—रा० अर० ३।१३, २०—रा० अर २१।११

परसर्ग के योग से बने रूप—
कै　　त्याग विभूषन सगुनि पल मन बहुरि धीरज आनि कै।[1]
　　कै चल दिगावन रणभूमि अनेक विधि सनमानि कै।[2]
　　पछिताव भूत पिसाच प्रेत जनन एहैं माजि कै।[3]
　　जमपार सरिस निहारि सब नरनारि चन्हिहि भाजि कै।
　　गज अजिन दिव्य दुकूल जारत सखी हँसी मसमारि कै।[4]
　　कोउ प्रगट कोउ हिये कहिहि मिल्वन अमिय माहुर घोरि कै।[5]

८ ३ २ क्रियार्थक संज्ञा रूप

इस प्रकार की रूप रचना में -अन-अना-ना -अब आदि प्रत्ययों का योग होता है यथा—

-अन-अना　चाहिय करन सो सब करि बीन।
　　पुरुष मिपबन मलन आए।[6] विश्वामित्र चलन नित चहहीं।[7]
　　महिपाल मुनि की मिलन सुख।[10] काहू कहन कहा न ओही।[11]
　　दसन चलित उचार।[11] रामपान सिल दन पठाए।[11]
　　कहन चहत है आजु।[1] मिलन जिमि छाडन चाहत।[1]
　　सो धनि कहिम बिलावन भूप कि सोरिहि।[11]
　　उभय भाँति देखा निज मरना।[1]
-ना　　जाना चहहि गूढ़ गति जेऊ।[16] मूढ़ ना मूढ़ दना।[17]

कहा कहीं—आ प्रत्यय के योग से भी क्रियार्थक संज्ञा रूपों की सरचना हुई है यथा

-आ　　निज नयनन्हि देखा चहहि नाथ तुम्हार बिवाहु।[1]
　　सठ चाहत रघुपति बल देखा।[11] मारा चहसि अधम अभिमाना।[11]

-आ प्रत्यय के योग से बने क्रियार्थक संज्ञा रूपों के तिर्यक रूपों में -ए प्राप्त होता है यथा—

१—जा० म० छ० ६।१ २—जा० म० छ० ६।२ —पा० म० छ० ७।१, ३—पा० म० छ० ७।२ ४—पा० म० छ० ७।३ ,—पा० म० छ० ७।४ ७—रा० ल० ७।३ ८—रा० अर० २२।६ ९—रा० बा० ३६०।१ १०—जा० म० २।२ ११—रा० अर० २।१ १२—रा० ल० ११५।२२ १३—रा० अयो० ९।२ १४—रा० उ० १।१२, १५—रा० ल० २८।१९ १६—पा० म० ९४।१ १७—रा० अर० २६।१ १८—रा० बा० २२।५ १९ —रा० उ० ३९।१३ २०—रा० अयो० ३।२ २१—रा० अर० १।१४ २२—रा० कि० १।२०।

त   ताहि बधे कछु पाप न होई ।[1] मारे मरिअ जिआए जीजै ।[2]
जेहि गाये सिधि होइ परम निधि पाइय हो ।[3]
अब   बिनु सिय राम फिरब भल नाही ।[4]
प्रेम मगन तोहि उठब न भावा ।[5] तुम्हहि कोहब परम प्रिय अहही ।[6]
तियक रूपो मे–'अबे' का योग होता है, यथा—
जिनके लरिबे कर अभिमाना ।[7] जानिबे जनि प्रायलाए ।[8]

=४ सयुक्त क्रियाएँ

४० आलोच्य भाषा मे यद्यपि सयुक्त क्रियाओ का प्रयोग प्रचुरता से नही हुआ है, फिर भी अच्छी सख्या मे उदाहरण उपलब्ध हैं। कालवाची कृदन्तो, क्रियार्थक सज्ञाओ मूल धातुओ और नाम शब्दो के साथ अनेकानेक मुख्य क्रियाएँ सहायक रूपों मे प्रयुक्त करके विविध अर्थों की सिद्धि की गई है। एक से अधिक क्रिया रूपो की सयुक्तता से कही लाक्षणिक अर्थ, कही व्याकरणिक अर्थ तो कहीं अभिधार्थ स्पष्ट होता है, यथा—दिए डारि[9]=डारि दिए (=डाल दिए, लाक्षणिक अर्थ) बठे निहारी[10] =निहारी (निहारि) बैठे (=देख बठे लाक्षणिक अर्थ) जानि परँ[11] (जान पडता है, लाक्षणिक अर्थ) करनि रहति[12] (=करती रहती है लाक्षणिक अर्थ) कहि न जाइ[13] (=कहा नही जाता व्याकरणिक अर्थ), बरनि न जाई[14] (वणन नही की जाती है, व्याकरणिक अर्थ), न जाइ बखानि[15]=बखानि न जाइ (=बखाना नहीं जाता व्याकरणिक अर्थ), बरनत नहिं बन[16] (वणन करते नहीं बनना, व्याकरणिक अर्थ), तजि चले[17] (=छोड कर चले अभिधार्थ), उठि धाई[18] (=उठ कर भागी अभिधार्थ), कहन चहत[19] (=कहना चाहता है, अभिधार्थ), आवन चहत (=आना चहता है अभिधार्थ)।

यहाँ केवल गठन की दृष्टि से वग बनाए जा रहे हैं जो निम्न प्रकार हैं–

१–वतमान कालिक कृदन्त	+	सहायक क्रिया
२–भूत कालिक कृदन्त	+	सहायक क्रिया
३ मूल धातु	+	सहायक क्रिया
४–पूव कालिक कृदन्त	+	सहायक क्रिया

१—रा० कि० ९।१६, २—रा अर० २५।१८, ३—रा० ल० न० १।३ ४–रा० अयो० ८०।१४, ५–रा० सु० ३३।२, ६–रा० अयो० २८।२ ७–रा० सु० २०।३ ८–रा० अर० २५।१२ ९–रा० अर० २९।४९, १०–रा० बा० ३२६।३२ १–बरव रा० १२।२ १२–रा० सु० ३०।२६ १३–रा० ल० १०४।५ १४–रा० सु० ५।१८ १५–पा० म १२।२ १६–रा० मु० ३।३०, १७–बरव रा २१।२ १८–रा० उ० ३।५ १९–रा० उ० १।१२, २०–जा० म० ८६।२ ।

५–क्रियार्थक संज्ञा + सहायक क्रिया
६–नाम शब्द + सहायक क्रिया

(१) वर्तमान कालिक कृदन्त+सहायक क्रिया (मुख्य क्रियाओं के विविध क्रिया रूप)—

पूछत	+	चले	=पूछत चले[1]
कहत	+	बनइ	=कहत बनइ[2]
बरनत	+	बनइ	=बरनत बनइ[3]
बनावत	+	बनै	=बनै बनावत[4]
सोहत	+	जात	=सोहत जात[5]
खिलावत	+	रहहीं	=खिलावत रहहीं[6]
मनावत	+	रहहीं	=मनावत रहहीं[7]
सुनत	+	चलेउ	=सुनत चलउं[8]
होत	+	सर्म	=होत सर्म[9]
करति	+	गईं	=करति गईं[10]
निरखत	+	चलउ	=चलउ निरखत[11]
सुनत	+	भेंटेउ	=सुनत भेंटउ[12]
बदत	+	कही	=बदत कही[13]

(२) भूत कालिक कृदन्त+सहायक क्रिया (मुख्य क्रियाओं के विविध क्रिया रूप)—

चढी	+	देवहिं	=चढी देवहिं ।[14]
मारा	+	जानेसु	=जानेसु मारा ।[15]
कहा	+	माना	=कहा माना ।[16]
चीता	+	चाहत	=चाहत चीता ।[17]
मारा	+	चहसि	=मारा चहसि ।[18]

(३) पूर्व कालिक+सहायक क्रिया (मुख्य क्रियाओं के विविध क्रिया रूप)—

पैठ	+	जाई	=पैठ जाई ।[19]
दीन	+	आइ	=आइ दीन ।[20]
सह	+	जाई	=सह जाइ ।[21]

१—रा० अर० ३०।१८ २—रा० लं० १२ ३४ ३—रा० उ० २८।१७ ४—जा० म० १३।२ ५—जा० म० ४।३ ६—रा० उ० २५।३ ७—रा० उ० २५।९ ८—गी० बा० १२।१४ ९—जा० म० २९।२ १०—रा० बा० ८७।२० ११—रा० उ० १०।१२ १२—रा० उ० २।१८ १३—रा० अयो० ५।१४ १४—रा० उ० ८।२५ १५—रा० कि० । १६—रा० बा० १४।१ १७—रा० अयो० ४५।४ १८—रा० कि० ९,२०, १९—रा० कि० ६। , २०—रा० अयो० २९।१७ २१—रा० सु० १२।४ ।

जान	+	परी	=जान परी।[1]
पहिचान	+	परी	=पहिचान परी।[2]

(४) पूर्वकालिक कृदन्त के योग से बने संयुक्त क्रिया रूप—संख्या की दृष्टि से सबसे अधिक हैं—

पूर्वकालिक कृदन्त	+	अन्य क्रिया रूप	=संयुक्त क्रिया
सजि	+	आयउ	=सजि आयउ[3]
उतरि	+	चाहु	=उतरि चाहु[4]
गहि	+	लिए	=गहि लिए[5]
गिरि	+	आयउ	=गिरि आयउ[6]
बोलि	+	लिए	=बोलि लिए[7]
चलि	+	गयऊ	=चलि गयऊ[8]
चलि	+	आवा	=चलि आवा[9]
हनि	+	मागा	=हनि मागा[10]
उठि	+	धाई	=उठि धाई[11]
भाजि	+	चला	=भाजि चला[12]
छूटि	+	चलि	=छूटि चलि[13]
बोलि	+	लीन्हे	=बोलि लीन्हे[14]
मागि	+	लीन्हा	=मागि लीन्हा[15]
उठि	+	आई	=उठि आई[16]
बखानि	+	कहौं	=बखानि कहौं[17]
तजि	+	चले	=तजि चले[18]
नाई	+	चले	=चले नाई[19]
अकुलाई	+	परेउ	=अकुलाई परेउ[20]
उठाई	+	लिए	=लिए उठाई[21]
लै	+	आयउ	=लै आयउ[22]

१—बरवै रा० १२।२ २—रा० बा० २११।१०, ३—पा० म० २५।२ ४—बरवै० रा० ६१।२ ५—रा० अर० १०।४३ ६—रा० उ० १९।२८, ७—रा० लं० १०८।६ ८—रा० सु० १३।१५, ९—रा० लं० १२०।१, १०—रा० अर० १।७ ११—रा० उ० ३।५ १२—रा० अर० २।२ १३—रा० कि० १५।१३, १४—रा० बा० ३५।१७, १५—रा० बा० ३५३।१ १६—पा० मं० ७१।२, १७—बरवै रा० ४।२ १८—बरवै रा० २१।२ १९—रा० कि० १९।१४, २०—रा० कि० ३।६ २१—रा० अर० १०।४३ २२—जा० म० १५।२

लै	+	गयउ	=लै गयउ[1]
धाय	+	बठहि	=धाय बठहि[2]
जान	+	चला	=चला जान[3]
तज	+	चले	=तज चले[4]

पूर्वकालिक कृदन्त रूपों के योग से निर्मित संयुक्त क्रिया अर्थ की घनिष्ठता की दृष्टि से शिथिल हैं। मुख्य क्रिया रूपों का अर्थ अपने अस्तित्व का आभास प्राय देता रहता है।

५–क्रियार्थक संज्ञा + सहायक क्रिया (मुख्य क्रियाओं के विभिन्न रूप)

आवन	+	चहत	=आवन चहत[5]
कहन	+	चहत	=कहन चहत[6]
देन	+	चहत	=देन चहत[7]
मारा	+	चहसि	=मारा चहसि[8]
जाना	+	चहसि	=जाना चहसि[9]
करन	+	चाहिय	=करन चाहिय[10]
करन	+	आएहु	=करन आएहु[11]
देखन	+	गए	=देखन गए[12]
जोहारन	+	आए	=जोहारन आए[13]
बैठन	+	कहा	=बैठन कहा[14]
बचावन	+	लाग	=बचावन लाग[15]
करे	+	लाग	=करे लाग[16]
करन	+	लागे	=करन लागे[17]
सजन	+	लागी	=सजन लागी[18]
चलन	+	लागे	=चलन लागे[19]
बाजन	+	लागे	=बाजन लागे[20]
देखन	+	लाग	=देखन लागे[21]

१—जा० म० छ० ५।१ २—पा० म० ८७।१२ ३—रा० अर० २।१३, ४—रा० कि० १६।७१ ५—जा० म० ८६।१ ६—रा० उ० ११।२, ७—रा० अयो० १०।४, ८—रा० कि० ९।२० ९—रा० बा० २।५ १०—रा० लं० ७।२ ११—रा० सु० ६।१६ १२—जा० म० छ० ११।४ १३—रा० बा० ३५८।१२ १४—रा० अर० २।९ १५—रा० सु० ५६।२०, १६—रा० सु० ६।३ १७—रा० अर० २१।२६, १८—रा० अयो० ८।४ १९—रा० अयो० ३१२।१८, २०—रा० बा० ३५१।२२ २१—जा० म० ८।३

बोलन	+	लगे	=बोलन लगे[1]
ठिवन	+	चले	=पठवन चले[2]
[illegible]रिता	+	चहत	=चरिगा चहत[3]
देखा	+	चहत	=देखा चहत[4]
मुसाना	+	फिरउँ	=फिरउँ मुसाना[5]
६—नाम शब्द	+	अन्य क्रिया रूप	
बापू	+	लियो	=लिया बापू[6]
बिनय	+	कीन्ह	=बिनय कीन्ह[7]
बिदा	+	कीन्ह	=बिदा कीन्ह[8]
दुख	+	पायउ	=दुख पायउ[9]
पगु	+	धारा	=पगु धारा[10]
बिचार	+	कीन्ह	=बिचार कीन्ह[11]
आयसु पा	+	पाई	=आयसु पाई[12]
आसिस	+	दई	=आसिस दई[13]
प्रनाम	+	कीन्ह	=प्रनाम कीन्ह
बिदा	+	किए	=बिदा किए
गवनु	+	कीन्ह	=गवनु कीन्ह
बिवाह	+	करइ	=करइ बिवाह
प्रचार	+	होत	=होत प्रचार
सिख	+	दीन्ही	=सिख दीन्ही
मत	+	लागै	=मत लागै
मल	+	कीन्ह	=मल कीन्ह
लजानी	+	जानि	=जानि लजानी

अस्तु, सामान्यतः उठ–, चल –, जा–, दे–, पर् (=पड़) पार–, पा–रह–, कर्–, राख्–, लाग्– ले–हो–, सक–आदि धातुओं से बने रूपों के योग से संयुक्त-क्रियाओं का निर्माण हुआ है।

१—रा० बा० ३५८।१०, २—रा० उ० १९।२, ३—रा० अयो० ४७।६, ४—रा० अर० १।१४ ५—रा० कि० २।१७ ६—रा० बा० ३५४।१०, ७—रा० बा० ३५३।१, ८—रा० अयो ३२१।१ ९—पा० म० ४।११ १०—रा० सु० ३७।१४, ११—रा० कि० ।४६, १२—रा० अर० १३।३५ १३—पा० मं० ११।३

९ वाक्य-रचना

९.०

छन्दोबद्ध होने के कारण आलोच्य भाषा में वाक्य संरचना का अध्ययन कुछ जटिल है। काव्य में प्रयोग स्वच्छन्दता रहती है। इसलिए प्रयोग शैथिल्य मिलता है। छन्द लय के निर्वाह से पदक्रम पदान्वय आदि अस्त-व्यस्त हो जाता है। परसर्ग का प्रयोग होना भी है और कहीं-कहीं छन्दानुरोध में उनका लोप भी रहता है। अर्थ करते समय पाठक को परसर्ग-योजना अपने पास से करनी पड़ती है। कहीं कहीं कर्ता कर्म क्रियादि में से किसी एक का लोप मिलता है तो कहीं समुच्चयबोधक अव्ययों का लोप। कहीं विधेय पहले प्रयुक्त हुआ है तो कहीं उद्देश्य पहले। वाक्य में सुरलहर की सही स्थिति समझ पाना भी अति कष्ट साध्य है।

९.१ वाक्य कोटियाँ

संरचना की दृष्टि से वाक्य तीन प्रकार के होते हैं –

१–सामान्य २–संयुक्त ३–यौगिक।

९.१.१ सामान्य वाक्य

सामान्यतः सामान्य वाक्यों में एक उद्देश्य तथा एक विधेय रचनात्मक संघटक होते हैं। इन्हें महत्तम समीपी संघटक कहा जाता है। उद्देश्य तथा विधेय की स्थितियों को स्पष्ट करने के लिए वर्गीकृत उदाहरण इस प्रकार हैं—

(१) कर्तरि प्रयोग-

बोले राजिव-नयन।[1] गर्जहिं भालु कपीस।[2]
आए चारिउ भाइ।[3] प्रभु प्रताप मैं जाउ सुखाई।[4]
राउ कहेउ कर जोरि।[5] भए प्रगट करुनासिंधु।[6]

तथा— निज भवन गवनेउ सिंधु।[7] बोले बामदेव सब साँची।[8]
अवध उजार कीन्ह कैकेईं।[9] गिरिवर सुनिय सराहना।[10]

१–रा० लं० ६७।२० २–रा० लं० ४७।१७ ३–रा० बा० ३५८।२० ४–रा० सु० ५९।१२ ५–जा० म० २१।१ ६–पा० म० छं० ८।४ ७–रा० सु० ६।१७, ८–रा० बा० ३५९।१ ९–रा० अयो० २९।१७ १०–पा० म० १५।२।

सजि समाज गिरिराज दीन्ह सबु ।[१] सखी मुख गौरि निहारेउ ।[२]

(२) कर्मणि प्रयोग—

बर अनुहरत बरात बनी ।[३] बंटुरि भाँवरि परी ।[४]

घर घर बाजन लगे बधाए ।[५] पुर नर नारि सकल पहिराए ।[६]

भूपति बोलि बराती लीन्हे ।[७] विपुल बाजन लागे ।[८]

सो छवि जाय न बरनि देखि मन मानहि ।[९]

करि न जाइ सर मज्जन पाना ।[१०]

राम तिलक हित लगन धराई ।[११]

पूजे कुल गुरु देव कलसु सुभ सिल धरी ।[१२]

कर कमलनि जयमाल जानकी सोहइ ।[१३]

(३) भावे प्रयोग—

जाइ न बरनि समउ सखु सोई ।[१४] बने बराती बरनि न जाई ।[१५]

महिमा जाइ न जलधि क बरनी ।[१६] कहिं न जाय कपि जूथप भीरा ।[१७]

उपर्युक्त वाक्यों में कर्तरि प्रयोग के अन्तर्गत यथार्थ कर्ता के दर्शन होते हैं जबकि कर्मणि प्रयोग के अन्तर्गत व्याकरणिक कर्ता के। तीसरे वर्ग 'भावे प्रयोग' के अन्तर्गत भी व्याकरणिक कर्त्ता ही है। 'भावे प्रयोग' का तीसरा वर्ग इसलिए बनाया गया है कि उद्धृत वाक्यों में असामर्थ्य का बोध होता है। और असामर्थ्य का भाव प्रबल होने के कारण इस प्रकार के उदाहरणों को 'भावे प्रयोग' के अन्तर्गत ही स्थान दिया जा सकता है।

सामान्य स्वतन्त्र वाक्य संघटन—

(१) उद्देश्य	+	विधेय (अकर्मक क्रिया युक्त)
राजिवनन	+	बोले[१८]
कृपासिंधु	+	बोले[१९]
अभिमानी	+	बिहँसा[२०]
नृप	+	अभिलाषे[२१]

१—पा० म० २३।१ २—पा० म० ४८।२ ३—पा० म० १ ०।१, ४—पा० म० १३१।२ ५—रा० बा० ३११।१७, ६—रा० बा० ५१।११ ७—रा० बा० ३५०।७ ८—रा० बा० ३४८।५, ९—जा० मं० ८७।१ १०—रा० बा० ३९।५ ११—रा० अयो १८।१२, १२—पा० म० १३१।१, १३— जा० मं० १०७।१ १४—रा० बा० ३४५।१४ १५—रा० बा० ३४८।७ १६—रा० लं० ६२।१७ १७—रा० लं० ८२।४ १८—गी० बा० ६७।२०, १९—गी० बा० ८७।१२ २०—रा० सु० ३८।२ २१—रा० अयो० ७।२।

उपयुक्त उद्देश्य एवं विधेय संघटकों के समीपी संघटकों के योग से वृहत् संघटन बन जाता है—

आए चारिउ भाइ[1]। चारिउ भाइ आए

करहिं परस्पर कोकिल बयनी[2]। कोकिल बयनी परस्पर करहिं

आगे चले बहुरि रघुराया[3]। रघुराया बहुरि आगे चले

(२) उद्देश्य + कर्म + विधेय (सकर्मक क्रिया युक्त)

नरनारि रघुकुलदीपहिं निहारहिं

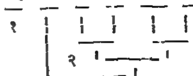
इन तीन संघटकों का समीपी संघटकों के योग से वृहत संघटन बन जाता है—

पूछी मधुर वचन महतारी[4]। महतारी मधुर वचन पूँछी

विप्र साधु सुर पूजत राजा[5]। राजा विप्र साधु सुर पूजत

सुग्रीवहु सुधि मोरि बिसारी। सुग्रीवहुँ मोरि सुधि बिसारी

अब सो मत्र देहु प्रभु मोही[1]। प्रभु अब सो मत्र मोही देहु



करहिं भालु कपि अदभुत करनी[2]। भालु कपि अदभुत करनी करहिं



सिंधु पार प्रभु डेरा कीन्हा[3]। प्रभु डेरा सिंधु पार कीन्हा



आलोच्य भाषा में अनेकानेक समीपी संघटकों के योग से बहुत लम्बे वाक्य का गठन भी सम्भव हुआ है, यथा—

आयसु माँगि राम पहिं अंगदादि कपि साथ,
लछिमन चले क्रुद्ध होई बान सरासन हाथ।[4]

९.१.२ संयुक्त वाक्य (Compound)

संयुक्त वाक्य में एक से अधिक प्रधान उपवाक्य भी हो सकते हैं। संयुक्त वाक्यों में समानाधिकरण उपवाक्यों का समाजन निम्नलिखित समुच्चय बोधक अव्ययों से होता है, यथा—

९.१.२.१ संयोजक—

तजहु सोच मन आनहु धीरा। (और का लोप)
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं[5]। ,,
तुम सम पुरुष न मो सम नारी[6]। ,, ,,

१–रा० अर० १३।६ २–रा० उ० ४७।१४ ३–रा० लं० ४।८ ४–रा० कि० ५।१४,
५–रा० उ० ७०।१९ ६–रा० अर० १७।१५

लोचन जल वह पुलक सरीरा ।[1]
मजु मनोरथ कलस भरहिं अरु रितवहिं
गयउ सहमि नहिं कछु कहि आवा ।[2] (और का लोप)
औरु करै अपराधु काउ और पाव फल भागु ।
बरसन लगे सुमन सुर दुंदुभि बाजहिं ।[3] " "
रितवहिं भरहिं धनु निरखि छिनु छिनु निरखि रामहिं सोचहिं ।[4]
(और का लोप)
दुलहिनि उमा ईसु बरु साधक ए मुनि । "
सुनि मुनि बिनय महेस परम सुख पायउ । "
कथा प्रसग मुनीसन्ह सकल सुनायउ ।[5] "
निज दुख गिरि सम रज करि जाना । , "
मित्रक दुख रज मरु समाना ।[6] ,
अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो वर मागऊ ।[7] ,
गहि बांह सुर नर नाह आपन दास अगद कीजिए ।[11] ,

९ १ २ २ विभाजक

गरस होउ अथवा अति फाका ।[11] की भइ भेंट कि फिरि गए ।[11]
की तुम राम दीन अनुरागी ।[1] आयहु करन मोहि बड भागी ।[11]
हमहु कहब अब ठकुर सोहाती । नाहि त मौन रहब दिन राती ।
सोवहिं सिंध सहित झष ब्याला । पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला ।[11]
देहु उतरु अनु करहु कि नाही ।[1] छाडहु बचनु कि धीरज धरहू ।[16]

९ १ २ ३ प्रतिषेधक—

बिधि गति जानि न जाइ अजसु जग जाग ।[1] (किन्तु का लोप)
परम क्रोध मीजहि सब हाथा । आयसु प न देहिं रघुनाथा ।[1]
मोर जिय भरोस दृढ नाही । भगति बिरति न ग्यान मन माहा ।[11]
(क्योंकि का लोप)

१- रा० अर० ६।२० २—जा० म० ८०।२ ३—रा० अयो० २९।६, ४—रा० अयो० ७७।१८ ५-जा० म० ९७।१ ६—जा० म० छ० १०।५ ७-पा म० ८०।१, ८ -पा० म० ७७।२ ९—रा० कि ७।४ १०—रा० कि० १०।२०, ११—रा० कि० १०।७ १२—रा० बा० ८। २, १३—रा० सु० ५३।१७ १४—रा० कि० ६।१६ १५—रा० अयो० ६।८ १६—रा० सु० ५५।१२ १७—रा० अयो० ०।३ १८—रा० अयो० ३।१३ १९—जा० म० ७०।२, २०—रा० सु० ५५।१० २१—रा० अर० १०।१२

९१२५ परिणाम बोधक—

जातें मोहि न कहत कछु राऊ। मोरि सपथ कछु सति भाऊ ॥[1]
तब मायावस फिरहु भुलाना। तोते मैं नहिं प्रभु पहिचाना ॥[2]

९१३ यौगिक वाक्य

इसमे मुख्य उपवाक्य एक ही रहता है, पर आश्रित उपवाक्य एक या एक से अधिक आ सकते हैं। यौगिक वाक्यो को तीन भागो में बाँटा गया है—

१–सज्ञा उपवाक्य २–विशेषण उपवाक्य ३–क्रिया विशेषण उपवाक्य

९१३१ सज्ञा उपवाक्य –

मुख्य उपवाक्य की किसी सज्ञा या सज्ञा वाक्याश के बदले जो उपवाक्य आता है उसे सज्ञा उपवाक्य कहते हैं। वाक्य मे प्राय 'कि' का लोप पाया जाता है—

सुनहु तात तुम्ह कहुँ मुनि कहहीं। राम चराचर नायक अहही ।[1]
निकसि वसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े। देखे लोग बिरह दव दाढ़े।
लखन लखेउ, भा अनाथ आजू।[2] सकल सुकृत कर फल सुत एहू।
राम सीय पद सहज सनेहू।[3] कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा।[4]
ता पर मैं रघुबीर दुहाई। जानहुँ नहिं कछु भजन उपाई।[5]
मुनि हँसि कहेउ जनक यह मूरति सोहइ।
सुमिरत सकृत मोह मल सकल बिछोहइ।[6]

जो— मैं जो कहा रघुबीर कृपाला बधु न होइ मोर यह काला।[7]
जो कछु कहेउ सत्य सब होई।[8]
जो सुनि करहिं बखान सहज बयरु बिसराय रिपु।[9]
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ।[10]
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। बदनीय जेहिं जग जस पावा ॥[11]

९१३२ विशेषण उपवाक्य—

विशेषण उपवाक्य मुख्य वाक्य की किसी सज्ञा की विशेषता प्रकट करता है। इसलिए वाक्य मे सज्ञा के स्थान पर अथवा सज्ञा के साथ विशेषण उपवाक्य लगाया जाता है—

धावा क्रोधवत गग बर्सें । छूटइ पवि परवत कहुँ जमें ।[१]

घनु रुचिर रचना बनी जनु प्रगटि । चतुरानन चतुरता देखाई सब आपनी ।[२]

(४) परिमाणवाचक—

परिमाण वाचक क्रिया विशेषण स अधिकता या तुल्यता या न्यूनता का बोध होता है * यथा—

बरषहिं जल्द भूमि निअराए । यथा नवहिं बुध विद्या पाए ॥[३]

दुष्ट उदय जग आरत हतू । जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह कतू ॥

(५) कार्यकारण वाचक—

कार्यकारण वाचक क्रिया विशेषण म निम्नलिखित अर्थों का द्योतन होता है—

(अ) परिणाम—

तात मैं अनि अलि बखान । थारे महु जानिहैं सयान ॥[५]

तव माया बस फिरहु भुलाना । ताते हैं नहिं प्रभु पहिचाना ॥[६]

(ब) उद्देश्य या कारण—

जात होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ । जार जोगु सुभाउ हमारा । अनमल देखि न जाइ तुम्हारा ॥ (क्योंकि का लोप)

(स) कार्य या निमित्त—

सवति सुभाउ सकहि नहिं देखी । (इसलिए का लोप)

राम तिलक हित लगन धराई ।[९]

साइअ पहिरिअ राज तुम्हारें

सत्य कहु नहिं दोष हमारें ।[१०]

आलोच्य भाषा म सकेत वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्या म जौ–तौ युग्म का प्रयोग मिलता है और बाद वाले तो स सम्बधित वाक्य सकेतवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य होता है यथा—

जौ मन मान तुम्हार तौ लगन धरावहु ।[११]

तौ फुरि होउ जो कहेउँ सब ।[१२]

जौ बर लागि करहु तप तौ लरिकाइअ ।[१३]

पारस जौ घर मिल तौ मरु कि जाइअ ।[१४]

१—रा० अर० २०।२० २—जा० म० छ० ११२ ३—रा० कि० १४।६ ४—रा० उ० १२१।४० ५—रा० बा० १२।१२ ६—रा० कि २।१८ ७—रा० अर० १४।१९ ८—रा० अयो० १६।१४ *—कामता प्रसाद गुरु हिंदी व्याकरण पृ० ५३३ ९—रा अयो० १८।१२ १०—रा० अयो० १९।८ ११—पा० म० ७८।२ १२—रा० बा० ९।१२५ १३—पा० म० ४६।१, १४ –पा० म० ४६।२ ।

जो यह साँची है सदा तौ नीको तुलसीक ।[1]
जो कदाचित मोहि मारिहि तौ प्रति होउँ सनाथ ।[2]
जो विधि लोचन अतिथि करत नहि रामहि ।
तौ कोउ नपहि न देन दाप परिनामहि ।[3]

(द) विरोध–मुनिबर तुम्हरे बचन मेरु महि डोलहिं ।
तदपि उचित आचरज पाँच भल बोलहिं ।[4]
जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें ।
सेवक प्रभुहि पर नहि भोरें ।[5] (तदपि का लोप)
फूलइ फलइ न बेंत, जदपि सुधा बरषहिं जल्द ।[6] „ „ „

वाक्यगत पदो म जिस सुनिश्चित व्यवस्था की आवश्यकता होती है, उसका विश्लेषण निम्न विभागो के अन्तगत कर सकते हैं—

१–पदक्रम (Word-order) २–पदान्वय (Concord)
३–पदाधिकार (Government)

९ २ पदक्रम (Word order)

अभीष्ट अथ का द्योतन कराने के लिए वाक्यगत पदो में एक निश्चित क्रम का होना आवश्यक होता है। ऐसा न होने पर अथ के अनथ होने की सम्भावना विद्यमान रहती है। लेकिन काव्यकार की भाषा म पदक्रमादि का व्याकरणिक बधन बहुत महत्वपूण नही होता है। उसे छन्द लय आदि के निर्वाह करने क लिए पदक्रम भग करने की स्वत त्रता रहती है। इतना होने पर भी यह क्रम भग इस कोटि तक नहीं पहुँच पाता है कि अभीष्ट अथ समाप्त हो जाय। महाकवि तुलसीदास ने अपनी अवधी रचनाओ म व्याकरण की दृष्टि से भी पदक्रम का निर्वाह करके अदभुत काव्य कौशल का परिचय दिया है। आलोच्य भाषा म प्राप्त पदक्रम को निम्नलिखित ढग से स्पष्ट किया जा सकता है, यथा—

(१) कर्त्ता, (२) कम (३) समापिका क्रिया (४) असमापिका क्रिया, (५) अव्यय।

(क) बलात्मक निपात (ख) क्रियाविशेषण, (ग) समुच्चयबोधक (घ) निषेधसूचक शब्द।

(६) प्रश्नवाचक शब्द

(१) कर्त्ता—कर्त्ता वाक्य के आदि, मध्य तथा अन्त तीनो ही स्थितियो म मिलता है यथा—

१—रा० बा० २९।२४ २—रा० कि० ७।६२ ३—जा० म० ७४।२ ४—जा० म० ९१।२ ५—रा० कि० ३।१ ६—रा० लं० १६।२२।

आदि मे—

रघुपति अनुजहि आवत दखी[1] । पुर नर नारि निहारहिं रघुकुल दीपहिं[2]।
नृप करि विनय महाजन केरे[3] । रघुपति पितहि प्रेमबस जानी[4] ।
कोउ कह नर नारायन हरिहर कोउ[5] ।
राय कौसिकहि पूजि दान विप्रन्ह दिए[6] ।

मध्य—

उठी सखी हँसि मिस करि कहि मृदु बैन[7] ।
मीठ काहि कवि कहहिं जाहि जोइ भावइ[8] । देखत देव सिहाहिं[9] ।
अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी[10] । एहि विधि राउ मनहि मन मापा[11] ।

अन्त—

जिमि सुख लहहिं न सकर द्रोही[12] ।
लागि झरोखन्ह झाँकहि भूपति भामिनि[13] ।
बोले बचन मृदुल रघुराया[14] । कीन्ह धीर धरि गवनु महीसा[15] ।

(२) कम—इसका भी क्रम परिवर्तनशील है । आदि मध्य अन्त तीनो स्थितियो मे मिलता है यथा—

आदि मे—

कथा प्रसग मुनिन्ह सकल सुनायउ[16] ।
रघुबर चरित पुनीत निसिदिन दास तुलसी गावहीं[17] ।
नल नीलहि सब कथा सुनाई[18] ।

मध्य—

कौसिक जनकहि कहउ देहु अनुसासन[19] ।
रिपि निकाय मुनिबर गति दखी[20] ।

अन्त—

जनक नगर ■ गयउ महामुनि रामहिं[21] ।
सो धनु कहिय बिलोकन भूप किसारहिं[22] ।
पावन करो सो गाइ भवस भवानिहि[23] । सुनु खगेस प्रभु कै यह बानी[24] ।

१—रा० अर० ३०।१ २—जा० म० ६५।१ ३—रा० बा० ४०।१ ४—रा० अयो० ६५।७ ५ बरवै रा० २२।६ ६—जा० म० १२३।१ ७ बरवै रा० १९।१, ८—पा० म० ६५।२ ९—जा० म० १२६।२ १०—रा० अयो० ३ ।१ ११—रा० अयो० ३०।१, १२—रा० कि० १७।१०, १३—जा०म० ७२।१ १४—रा० लं० ११८।६ १५—रा० अयो० ३१९।६ १६—पा०म० ७७।२ १७—रा० अर० ६।१८ १८—रा० लं० ७।२२ १९ जा० म० ८९।२ २०—रा० अर० ९।५ २१—जा० म० ६०।२, २२—जा० म० ९८।११ २३—पा० म० ६।२ २४ रा० लं० ११४।५

(३) क्रिया—सामान्यत क्रिया वाक्य के अन्त म प्रयुक्त होती है। काव्य म लय तथा तुकान्त की दृष्टि स क्रिया का प्रयोग-आदि, मध्य तथा अन्त म किसी भी स्थान पर किया जा सकता है। आलोच्य भाषा म भी क्रिया का स्थान निश्चित नही है कभी आदि, मध्य म तो कभी अन्त म प्रयोग मिलता है—

अन्त म—

जनु मगराज किसोर महागज भजेउ ।[1]
अचल सुना मनु अचल बयारि कि डोलइ ।[2]
हाथ जोरि करि बिनय सबहि सिर नावौं ।[3]
रथ जनु पथिक हकारहि ।[4] पावन अस त्रिभुवन विस्तारयो ।[5]

मध्य— तौ कोउ नृपहि न देत दोषु परिनामहि ।[6]
कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा ।[7] जानतहूँ पूछिअ कस स्वामी ।[8]

आदि—आवा निकट जती के बेषा ।[9] चला विमान तहा ते चोखा ।[10]
मिलेहु राम तुम्ह समन बिषादा ।[11] भए प्रगट करुनासिंधु ।[12]

(४) असमापिका क्रिया—

आलोच्य भाषा म असमापिका क्रियाओ का भी स्थान निश्चित नही है। इस प्रकार के रूप आदि, मध्य तथा अन्त तीनो स्थानो पर प्रयुक्त हुए हैं यथा—

आदि— लखि नारद नारदी उमहि सुख भा उर ।[13]
समझि ताहि यह तारहि कहब महेस ।[14]
देखन भालु कीस सब आए ।[15] कहन चहत अब कोइ ।[16]

मध्य— भीख मागि भव खाहि ।[17] सजल कठौता कर गहि कहत निषाद ।[18]
काहु बचन कहा न टाहा ।[19] आए मिलन जगत अधारा ।[20]

अन्त— कस प्रभु नयन कमल अस कहौं बखानि ।[21]
घर ते खेलन मनहुँ अबहि आइ उठि ।[22]
नहिं सगुन पायउ रह मिसु करि एक धनु स्यन ।[23]

१—जा० म० १०४।२, —पा० म० ५८।२ — जा० म० २।१ ४—रा० उ० २९।४, ५—रा० उ० ११६।६ ६—जा० म ७४।२ ७—रा० सु० २।१४, ८—रा० अर० ९।१४ ९—रा० अर० २८।१४ १०—रा० ल० १२०।८ ११—रा० कि० ७।३८ १२—पा० म० ७० ८।४ १३—पा० म० १७।२ १४—बरव रा० १५।२ १५—रा० ल० १०८।१९ १६—रा० उ० ११२ १७—पा० म० ५०।१ १८—बरव रा० २।११ १९—रा० अ० २।९ २०—गी० अर० १२।१४ २१—बरव रा० ६।२

(५) अव्यय—

क बलात्मक निपात—इस प्रकार के अव्यय बल प्राप्त पदों के ठीक बाद में मिलते हैं यथा—

कालहु जीति निमिषि महु लावौं ।[1] मुएहु न मिटिहि न जाइहि काऊ ।[2]
अजहु प्रीति उर रहति न राकी ।[3] काहू बठन कहा न आई ।[4]
कबहू जोग वियोग न जाके ।[5] अजहू हृदउ जरत तहि आँचा ।[6]
तुहू सराहसि करसि सनेहू । एक बार कसहु सुधि जानी ।[7]

ख क्रियाविशेषण—वाक्य में क्रिया विशेषणो का स्थान भी निश्चित नहीं मिलता है यथा—

आदि— अबहो ते उर ससय होइ ।[8] आगे परा गीधपति देखा ।[9]
कबहु निबिड है निवस महु ।[10] जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा ।[11]
जह जह जाहिं देव रघुराया ।[12] कहु कहुँ सरिता तीर उदासी ।[13]
यहाँ तहा मज्जन कर बासा ।[14] तह तहँ राम निबाहिब नाथ सनेहु ।[15]
मध्य— नेहि न होइ पाछे पछिताऊ ।[16] खल के प्रीति जथा थिर नाही ।[17]
नए बहुत जबत प्रभु आए ।[18]
रामहि भाइन्ह सहित जबहि मुनि जोहेउ ।[19]
सिंह ठवनि इत उत चितव ।[20]
जनम जनम जह जहँ तनु तुलसिहि देह ।[21]
दर्शन मघ तह नह नभ छाया ।[22] रंग तह तह कर जारि ।[23]
अन्त— कीन्ह निवासु रमापति जबम ।[24]
खलु खद्योत दिन करहि जमा ।[25] सब सनमानि बहोर बहोरी ।[26]

ग समुच्चय बोधक शब्द—इस वर्ग में अरु कि की अथवा त नाहित, नत, किंवा, पै जो तात आदि प्राप्त हैं।

१—रा० कि० १८।४ २—रा० अयो० २६।१० ३—रा० बा० ५०।१६, ४—रा० अर० २।१ ५—रा० बा० ४।१६ ६—रा० अयो० ३१।९ ७—रा० अयो० ३२।१३ ८—रा० कि० १८। ९—रा० लं० ०।६ १०—रा० अर० ०।३ ११—रा० कि० १५।१० १२—रा० अर० १६।८ १३—रा० अर० ७।१ १४—रा० उ० २९।१ १५—रा० म० । १६—बरवै रा० ६९।२ १७—रा० अयो० ६।१० १८—रा० कि० १५।४ १९—रा० कि० २।६ २०—जा० म० १८।१ २१—रा० लं० १८।२३, २२—बरवै रा० ६६।२ २३—रा० उ० ७।१० २४—रा० लं० ११०।६ २५—रा० कि० १२।१० २६—रा० उ० ।१२ २७—रा० अयो० ३१८।१६ ।

(१) सयोजक –'अरु' शब्द वाक्य के मध्य म ही प्रयुक्त हुआ है—

सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता[1] । हरि लीन्हेसि सबसु अरु नारी[2] ।

(२) विभाजक—इस प्रकार की शब्दावली के प्रयोग का भी वाक्यो मे स्थान निश्चित नही है ।

आदि— नाहिं त सपदि मानु मम बानी[3] ।

नाहि त मौन रहब दिन राती[4] । की मैनाक कि खगपति होई[5] ।

मध्य— सरस होउ अथवा अति फीका[6] । सुमुखि होत न त जीवन हानी[7] ।

सुधा कि रोगिहि चाहिइ रतन कि राजहिं[8] ।

अत— नप अभिमान मोहबस किंवा[9] ।

(३) प्रतिषेधक—इस वग के शब्दो का प्रयोग अत्यल्प है, यथा—

आयसु पैन देहिं रघुनाथा[10] ।

(४) परिणाम सूचक—इस प्रकार के शब्द प्राय वाक्यादि मे ही मिलते हैं, यथा—

ताते तात न सकहुँ समझायउ[11] । ताते मैं नहिं प्रभु पहिचाना[12] ।

(५) विस्मयवादी बाधक शब्द—इस प्रकार के शब्दो का क्रम निश्चित नही है। इन शब्दो का सर्वाधिक प्रयोग वाक्य के आदि म हुआ है यथा—

आदि— हा लछिमन तुम्हार नहिं दोषा[13] । हा गुनखानि जानकी माता[14] ।

हा जग एक बीर रघुराया[15] । रे कपि बबर खब खल[16] ।

मध्य— राम अनुज कप रे सठ सगा[17] ।

अत— निरखति सबानन सादर ए[18] । कृकस्प बिभो सब बानर ए[19] ।

(६) निषेध सूचक शब्द—सामान्यत नकारात्मक शब्दो की स्थिति कर्त्ता के बाद एव क्रिया स पहले पाई जाती है किन्तु आलोच्य भाषा म शब्दो का प्रयोग आदि मध्य और अत तीनो स्थानो पर किया गया है यथा—

आदि— नहि कोउ मोहि समान[20] ।

नहि ज हैं जुबराज प्रवीना[21] । जनि दिन कर कुल होसि कुठारी[22] ।

मध्य— अकथ अनामय नाम न रूपा[23] । देबि करौ कछु बिनती बिलगु न मानब[24] ।

१—रा० बा० ८। ८ २—रा० कि० ६।२२ ३—रा० सु० १०।3 ४—रा० अयो० १६।८ ५—रा० अर० २९।२५ ६—रा० बा० ८।२२ ७—रा० स० १०।४ ८—पा० म० ४६।२, ९—रा० ल० ४०।९, १०—रा० सु० ५५।१०, ११—रा० अयो० ३।२० १२—रा० कि० २९।५ १३—रा० अर० २९।५ १४—रा० अर० ३०।१३, १५—रा० अर० २९।१ १६—रा० ल० २६।२०, १७—रा० ल० २६।९, १८—रा० ल० १११।३४, १९—रा० ल० १११।३५ २०—रा० उ० ११२।२२, २१—रा० कि० २६।२८ २२—रा० अयो० ३३।१२ २३—रा० बा० २२।४, २४—पा० म० ४३।१

चलि विचारि विबुध मति पोची[1] । (एकवचन, स्त्री०)
सुमन बरषि सब सुर चले[2] । (बहुवचन पु०)
गई गिरा मति फेरि[3] । (एकवचन स्त्री०)
राम लखन छबि देखि मगन भए पुरजन[4] । (बहुवचन पु०)
हिय हरषे नर नारि[5] । (बहुवचन पु०)

(२) पुरुष-वचन (कर्त्ता एवं क्रिया)—

(१) वर्तमानकालिक तिङन्त रूप—

उ० पु०

एकवचन जहं जहँ मैं हरउ दोउ भाई[6] । तुम्ह पूछउ मैं कहत डेराऊं[7] ।
बंदौं लछिमन पद जल जाता[8] । (कर्त्ता का लोप)
सिय रघुबीर बिबाह जथामिति गावौं[9] । (कर्त्ता का लोप)

बहुवचन— कुसल करहिं करतार कहहिं हम साँचिअ[10] ।
हम छत्री मृगया बन करहीं[11] ।
तुम्ह से खलमृग खूँदत फिरहीं[12] । (कर्त्ता का लोप)

म० पु०

एकवचन— हरष समय बिसमौ करसि[13] । (कर्त्ता का लोप)
महामद मन सुख चहसि[14] । कहहि सचिव सुनु निचर नाहा[15] ।

बहुवचन— तुम्ह जानउ सब राम प्रभाऊ[16] । तुम्ह पूछउ कस नर की नाई[17] ।

अ० पु०

एकवचन— का पूछहु तुम्ह अबहु न जाता[18] । कबहुँकि नलिनी करइ बिकासा[19] ।
जो सोचइ ससि कलह सो सोचइ रौरेहि[20] ।
दोइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ[21] । (कर्त्ता का लोप)

बहुवचन— संत सहहिं दुख पर हितलागी[22] । रोप सकल सपल्लव मंगल तरुबर[23] ।
जनक जय जय सब कहहिं[24] । भरत आगमनु सकल मनावहिं[25] ।

१—रा० अयो० १२।१० २-रा० लं० ११४।२१ ३-रा० अयो० १२।१० ४—जा० म० ५।१५ ५-रा० अयो० ८।१४ ६-रा० अर० २४।१ ७-रा०अयो० १७।५, ८—रा० बा० १६।७ ९—जा० म० १२, १०—पा० म० १०७।१ ११—रा० अर० १९।१७ १२—रा० अर० १९।१८ १३—रा० ।२९ १४—रा० अर० ३६।३७, १५—रा० लं० ८।१७ १६— रा० कि० २१, १२।६ १८ रा० अयो० १९।३ १९—रा० स २०— २१—द् बा० २।२६ २२—रा० उ० १२१। —जा० ० ३२४।३२ २५-रा० अयो० ११।

विलपहि बाम विधातहि दोष लगावहिं[1] ।

वद पुरान सत सब कहहीं[2] ।

(२) सम्भावनार्थ एवं भविष्यत्कालिक तिङन्त रूप—

पुर न जाउ दस चारि बरीसा[3] । (कर्त्ता का लोप, उ० पु० एकवचन)

जाय उतरु अब देहउँ काहा[4] । " " "

कालहु जीति निमिष महि आनौं[5] । " " "

मागौं तुरत तजौं यह सैला[6] । " " "

अचल करौं तनु राखहु प्राना[7] । " " "

रहिहहु निकट सैल पर जाई[8] । " " "

राम काज सब करिहहु[9] । " " "

कृपा निकेत पद मन लाइ हैं[10] । " " "

हम सीता कइ सुधि लीन्हे बिना । " " "

नहि जहँ जुबराज प्रवीना[11] । (उ० पु० बहुवचन)

राम बिराधि न उबरसि[12] । (कर्त्ता का लोप, म० पु० एकवचन)

पुनि असि कहसि बचहुँ घरफोरी[13] । (कर्त्ता का लोप, म० पु० एकवचन)

हिएँ हेरि हठ तजहु हठ दुख पैहहु[14] । (कर्त्ता का लोप, म०पु० बहुवचन)

याहि समय सिख मोरि समुझि पछितैहहु[15] । " " "

राम काज सब करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान[16] । (म० पु० बहुवचन)

पछिताब भूत पिसाच जनेत एहँ साजि क[17] । (अ० पु० बहुवचन)

तुम्हहि सहित असवार बसहँ जब होइहहिं[18] । (" " ")

(३) लिंग वचन (कर्म एवं क्रिया)—भूत निश्चयार्थ सकर्मक क्रिया रूप-कर्म के लिंग वचन से प्रभावित —

कपट छुरी उर पाहन टेई[19] । सुनि सुबरी तिय माया ठनी[20] ।

अब ते कुमति सुनी मैं भामिनि[21] । गति पाई जो मुनिबर पाया[22] ।

१—पा० म० ३।१२ २—रा० अर० ५।२२, ३—रा० कि० २।१०, ४— रा० बा० ५४।६ ५—रा० कि० १८।३ ६—रा० कि० २।१८, ७ रा० कि० १०।१, ८—रा० कि० १८।१२, ९—रा० सु० २।२६ १०—रा० अर० २।२०, ११—रा० कि० २६।१८, १२—रा० सु० ५६।२३, १३—रा० अयो० १।१५, १४—पा० म० ५६।१, १५—पा० म० ५६।२ १६—रा० सु० ३।२६ १७—पा० म० ८६।२, १८—पा० म० ५७।१ १९—रा० अयो० २२।२ २०—रा० अयो० २१।६, २१—रा० अयो० २१।११ २२—रा० लं० ११४।२०

जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा[1] ।
मुनिबर जतनु करहिं जेहि लागी[2] ।

(२) कम रूप म प्रयुक्त सजीव सज्ञा या उसके स्थान पर प्रयुक्त सवनाम तथा विशेषण बोधक शब्दावली सकमक क्रियाओ द्वारा अधिकृत होती है अर्थात उनका तियक रूप हो जाता है यथा—

कुबरिहि रानि प्रान प्रिय जानी[3] ।
सादर सकल कुअरि समुझाई ।
बहु बिधि भूप सुता समुझाई[5] ।
दलत रामहि भए सुखारे[6] ।

१—रा० कि० ११।१०, २—रा० ल० ७।१? ३—रा० अयो० ? ।? ४—रा० बा० ?३?।?? ५—रा० बा० ??।? ६—रा० बा० ३४८।१०

१० | उपसंहार

१० १ स्थानीय तथा तुलसी की अवधी

१० १ ० तुलसी की अवधी का विस्तृत भाषा वैज्ञानिक विवेचन पिछले अध्यायों (दो से नौ) में किया जा चुका है। अतएव यहाँ स्थानीय (वर्तमान) अवधी के स्वरूप से आलोच्य भाषा के स्वरूप में कितना साम्य-वैषम्य है, इस पर चर्चा करना अभीष्ट है। स्थानीय अवधी के प्रमुखतया तीन वर्ग-१-पश्चिमी, २-केन्द्रीय और ३-पूर्वी माने गये है।[1]

अवधी का पश्चिमी स्वरूप-खीरी, सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव और फतेहपुर जिलों में बोला जाता है। केन्द्रीय रूप-बहराइच, बाराबंकी तथा रायबरेली के जिलों में बोला जाता है और पूर्वी रूप—गोंडा, फैजाबाद, सुल्तानपुर प्रतापगढ़, इलाहाबाद, जौनपुर और मिर्जापुर जिलों बोला जाता है। अवधी के इन क्षेत्रीय रूपान्तरों का प्रभाव तुलसी की अवधी में भी मिलता है। अत तुलसी के समय में भी अवधी का एक रूप न होकर बड़े क्षेत्रीय रूप रहे हैं इसीलिए शब्दों में उच्चारण-भेद मिलता है और व्याकरण-स्तर पर रूप-वैभिन्न। आलोच्य भाषा के सामान्य स्वरूप पर विषय क्रम १ ४ में प्रकाश डाला जा चुका है। तुलसी की अवधी में प्राप्त ध्वनियों के उच्चारण के सम्बन्ध में कुछ निश्चित रूप से कहना कठिन है। हाँ इतना अवश्य है कि आधुनिक अवधी की ध्वनियों के उच्चारण के आधार पर तथा मात्रा पूर्ति के आधार पर सत्यता के निकट पहुँचा जा सकता है। वस्तुत इसी आधार पर अनुसंधितसु ने तुलसी की अवधी में प्राप्त ध्वनियों का विवेचन विषय क्रम २ ३ में किया है। डा० बाबूराम सक्सेना जैसे लब्धप्रतिष्ठ भाषाविद आधुनिक (स्थानीय) अवधी और उसके विकास का बड़े ही खोज पूर्ण एवं वैज्ञानिक ढंग से विस्तृत विवेचन प्रस्तुत कर चुके हैं। इसलिए यहाँ और अधिक विस्तार में जाना समीचीन नहीं जान पड़ता है। आधुनिक अवधी में उच्चारण सुनने की सुविधा होने के कारण ध्वनियों का स्वरूप स्पष्ट है। तुलसी की अवधी में फुसफुसाहट वाले स्वरों इ उ ए तथा ए और ओ ह्रस्व रूप ए तथा ओ के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है जबकि आधुनिक अवधी में ये पूर्णत स्पष्ट हैं।

१—डा० बाबूराम सक्सेना—एवाल्यूशन ऑव अवधी पृ० १।

तुलसी की अवधी में मात्रा–गणना तथा लयात्मक उच्चारण एवं आधुनिक अवधी की उच्चारण प्रवृत्ति के आधार पर इनके अस्तित्व को स्वीकार किया जा सकता है। उल्लेखनीय बात यह है कि आधुनिक अवधी की पश्चिमी बोलियों में फुसफुसाहट वाले स्वर अधिक स्पष्ट हैं जबकि पूर्वी बोलियों में दुर्लभ हैं। फुसफुसाहट वाले स्वर प्रयोग में आते हैं किन्तु अक्षर–निर्माण में योग नहीं देते हैं। मूल और संयुक्त स्वर तुलसी तथा आधुनिक अवधी दोनों में लगभग एक से ही हैं उनमें कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों में ही मूल और संयुक्त स्वर शब्द की तीनों स्थितियों में प्राप्त हैं। तुलसी की अवधी प्राप्त स्वरों का उल्लेख विषय क्रम २.२ में किया जा चुका है क्षेत्रीय भिन्नता के कारण ए, ऐ, ओ तथा औ के उच्चारण में भिन्नता पाई जाती है। व्यंजनों की प्रकृति स्वरूप और वितरण की दृष्टि से भी आलोच्य भाषा में कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं मिल पा रहा है। लिखित भाषा होने के कारण तत्सम शब्दों में 'ण', ष और श का प्रयोग मिल जाता है। आधुनिक अवधी में इनका प्रयोग नहीं मिलता है। आलोच्य भाषा में जितने व्यंजन–ध्वनिग्राम मिले हैं उतने ही आधुनिक अवधी में भी है।

१०.१.२ तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में भी संज्ञा–रूप–रचना प्रातिपदिकों में लिंग–वचन कारक सम्बन्ध दर्शी विभक्ति–प्रत्ययों के योग से हुई है। तुलसी की अवधी में संज्ञा प्रातिपदिक लघु रूप में ही प्राप्त हैं जबकि आधुनिक अवधी में अनेक विस्तृत रूपों में भी प्राप्त होते हैं यथा—घोड़वा कुतवा घुड़वा, खटियवा लड़िकवा, घोड़ना कुकना (=कुत्ता) सुअना (=सुआ), आदि। लिंग–विधान आधुनिक तथा तुलसी की अवधी में लगभग समान है। लिंग सम्बन्धी निर्माण प्रत्यय तुलसी तथा आधुनिक अवधी में लगभग एक से हैं।

हैं। लिंग-वचन के अनुसार रूप रचना भिन्न-भिन्न है। तिर्यक रूप परसर्ग रहित तथा प्रत्यय सहित प्राप्त हुए हैं सम्बन्धकारक के अन्तर्गत 'क' का प्रयोग आधुनिक अवधी में अधिक और तुलसी की अवधी में अपेक्षाकृत कम हुआ है। तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में भी सम्बोधन को व्यक्त करने के दो ढंग हैं—एक तो वे स्थल हैं जहाँ सज्ञा के मूल रूपों के पहले रे, री, हा, हो, ए आदि सम्बोधक शब्दों का प्रयोग होता है, दूसरे वे स्थल जहाँ केवल सम्बोधन रूपों का योग होता है।

१० १ ३ आधुनिक अवधी में भी तुलसी की अवधी की भाँति सर्वनाम रूप मूल तथा तिर्यक हैं। मूल रूप (कर्ता रूप) ही प्रातिपदिक हैं। कर्ता को छोड़कर अन्य कारक सम्बन्धों का स्पष्टीकरण तिर्यक रूपों में विभक्तियों या परसर्गों अथवा दोनों के योग से मिलता है। तिर्यक रूपों में लगने वाले विभक्ति प्रत्ययों और परसर्गों में पर्याप्त साम्य है। तुलसी ने यत्र-तत्र सम्भवत ब्रजभाषा के प्रभाव से उत्तम पुरुष एकवचन कर्ताकारक 'हौं' का प्रयोग किया है। किन्तु आधुनिक अवधी में 'हौं' रूप का प्रयोग नहीं होता है। सम्बन्ध वाचक एवं सह सम्बन्ध वाचक सर्वनाम के अन्तर्गत आधुनिक अवधी में जौन, तौन रूपों का प्रयोग होता है। किन्तु तुलसी की अवधी में इन रूपों का सर्वथा अभाव है। आधुनिक अवधी में सकेत वाचक दूरवर्ती सर्वनाम रूपों में उ, उइ रूप प्राप्त हैं जबकि तुलसी की अवधी में नहीं पाए जाते हैं। रूप रचना की दृष्टि से तुलसी की अवधी तथा आधुनिक अवधी में उल्लेखनीय अन्तर नहीं मिलता है। क्षेत्रीय बोली भिन्नता के कारण सर्वनामों में कुछ उच्चारण विविधता के दर्शन अवश्य होते हैं।

१० १ ४ आलोच्य भाषा और स्थानीय अवधी के विशेषण रूपों में भी कोई उल्लेखनीय अन्तर दृष्टिगत नहीं होता है। दोनों में अकारान्त, आकारान्त विशेषण शब्दों में लिंग वचन कारक के अनुसार विभक्ति प्रत्ययों के योग से रूप रचना होती है। अन्य विशेषण रूप अपरिवर्तनशील हैं। स्थानीय अवधी में भी विशेषण के लघु रूप—चौर बड छोट बूढ़ आदि प्रयुक्त होते हैं।

इसी प्रकार अव्यय रूप भी दोनों में ही वस्तुत बहुत समान हैं गठन की दृष्टि से कोई भी उल्लेखनीय अन्तर नहीं मिलता।

१० १ ५ तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में प्रयुक्त क्रिया रूप भी काल, वाच्य लिंग-वचन, पुरुष, अर्थ आदि की द्योतन रचनात्मक प्रवृत्तियों से बहुत कुछ प्रभावित हैं। रचना की दृष्टि से प्राप्त धातुएँ (सामान्य, व्युत्पन्न प्रेरणार्थक नाम) समान हैं। तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में भी क्रिया रूप दो प्रकार के हैं—समापिका तथा असमापिका। आधुनिक अवधी में भी समापिका प्रकार दो कोटि के हैं—तिङन्ती तथा कृदन्तीय। अवधी में तिङन्ती रूपों का प्रयोग कम हो गया है। और तीनों कालों में प्रायः कृदन्ती रूपों का ही प्रयोग होता

रूप तीनों कालों वर्तमान भूत और भविष्य में प्राप्त हैं। वर्तमान निश्चयार्थ का द्योतन करने वाले कृत प्रत्यय एक से हैं। आधुनिक अवधी में वर्तमान निश्चयार्थ के द्योतन के लिए तिङन्ती रूपों की अपेक्षा अपूर्ण कृदन्ती रूपों का प्रयोग होता है—'मैं देखउ' की अपेक्षा 'मैं देखत हौं' का प्रयोग अधिक होता है। भूत एवं भविष्य कालिक प्रत्यय भी आधुनिक तथा तुलसी की अवधी में लगभग एक से हैं। भविष्य सम्भावनार्थ तथा सामान्य भविष्य निश्चयार्थ प्राप्त प्रत्यय एक दूसरे से भिन्न हैं। स्थानीय अवधी और तुलसी की अवधी में इस प्रकार के क्रिया रूप प्राप्त हैं। आधुनिक अवधी में प्राप्त वर्तमान सम्भावनार्थ (आज्ञार्थ) के विभक्ति प्रत्यय आलोच्य भाषा के विभक्ति प्रत्ययों के सदृश हैं। निष्पक्षत कहा जा सकता है कि तुलसी ने तिङन्ती रूपों का अधिक प्रयोग किया है जबकि आधुनिक अवधी में इनका प्रयोग कम हुआ है। तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में कृदन्ती रूपों की सहायता से वर्तमान निश्चयार्थ भूत निश्चयार्थ तथा भूत सम्भावनार्थ की अभिव्यक्ति होती है। अपूर्ण कृदन्तों के साथ वर्तमानकालिक सहायक क्रियाओं के प्रयोग से वर्तमान निश्चयार्थ का तथा भूत कालिक सहायक क्रिया के योग से भूत निश्चयार्थ का बोध कराया जाता है। तुलसी की अवधी के समान ही आधुनिक अवधी में अपूर्ण और पूर्ण कृदन्ती रूपों से भूत निश्चयार्थ की तथा भूत सम्भावनार्थ की अभिव्यक्ति होती है। असमापिका प्रकार में तुलसी की अवधी के समान आधुनिक अवधी में पूर्वकालिक कृदन्त, क्रियार्थक संज्ञा आदि आते हैं। इन रूपों में सहायक क्रियाओं के विभक्ति प्रत्यय तुलसी की अवधी के ही समान हैं केवल स्थानीय अवधी के पूर्वी रूप में —इ के स्थान पर —ए तथा —य प्रत्ययों का योग मिलता है। तुलसी ने —इ तथा कहीं कहीं —ई से निर्मित रूपों के साथ के परसर्ग का प्रयोग करके पूर्वकालिक रूपों की रचना की है। इसी प्रकार स्थानीय अवधी में भी पूर्वकालिक कृदन्ती रूपों का निर्माण होता है। क्रियार्थक संज्ञा कृदन्तों के निर्माण में भी एक से ही विभक्ति प्रत्यय संलग्न होते हैं।

आलोच्य भाषा की भाँति स्थानीय अवधी में भी सहायक क्रियाएँ दो प्रकार से व्यवहार में आती हैं—१—स्वतन्त्र रूप में प्रयुक्त तथा २—संयुक्त काल में मुख्य क्रिया का सहायक बनकर। आधुनिक अवधी में क्षेत्रीय उच्चारण वैभिन्य के कारण इनके उच्चारण में भी विभिन्नता पाई जाती है। रूप रचना की दृष्टि से तुलसी की अवधी तथा आधुनिक अवधी की सहायक क्रियाओं में कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं मिलता है। इतना अवश्य है कि तुलसी ने अपनी अवधी रचनाओं में आधुनिक अवधी की अपेक्षा अधिक सहायक क्रियारूपों का प्रयोग किया है।

आधुनिक अवधी में तुलसी की अवधी की अपेक्षा अधिक मात्रा में संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग हुआ है। साथ ही तुलसी की अवधी के समान आधुनिक अवधी में भी इनकी रूप रचना विभिन्न प्रकार के कृदन्त—पूर्वकालिक वर्तमानकालिक भूत

कालिक, क्रियार्थक संज्ञा आदि प्रमुख क्रिया रूपों के साथ अन्य क्रिया रूपों के प्रयोग से हुई है।

संयुक्त क्रियाओं के माध्यम से आलोच्य भाषा, और स्थानीय अवधी दोनों में ही कहीं लाक्षणिक अर्थ व्यंजित होता है तो कहीं व्याकरणिक अर्थ (वाच्य आदि) अथवा अभिप्राय व्यंजित होता है।

१०.२ अन्य बोली रूपों की व्याप्ति

वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भाषा विचार-विनिमय के साथ विचार चिन्तन करने का भी साधन है। जब दो भिन्न भाषा भाषी व्यक्ति प्रान्त या राष्ट्र परस्पर सम्पर्क में आते हैं तो एक दूसरे की शब्दावली न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य एक दूसरे से प्रभावित होती है। फिर तुलसी जैसे सन्त महात्मा की भाषा पर यह प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। तुलसी का अधिकांश जीवन देशाटन करने में बीता और ऐसे स्थानों पर अधिक व्यतीत किया जहाँ विभिन्न प्रान्तीय, क्षेत्रीय भाषा भाषियों विभिन्न सम्प्रदाय एवं धर्म के लोगों का हर समय जमघट रहता था। यही कारण था कि जिससे तुलसी की भाषा भी अन्य प्रादेशिक तथा बोलियों के प्रभाव से मुक्त न रह सकी। इसके अतिरिक्त तुलसी की शब्दावली *मिश्रित होने के कुछ और भी प्रमुख कारण—उनकी समन्वयवादी नीति ज्ञान की* विशालता व्यापक परिचय आदि रहे होंगे। इस समन्वयवादी नीति ने ही तुलसी का साहित्य क्षेत्र के साथ साथ भक्ति क्षेत्र में भी युगायुगों के लिए अमिट बना दिया है। इन कारणों के फलस्वरूप ही तुलसी की रचनाओं में संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश, बंगला, गुजराती, राजस्थानी ब्रज, भोजपुरी आदि के शब्दों (रूपों) का न्यूनाधिक मात्रा में प्रयोग दिखाई देता है।

आलोच्य भाषा निष्कर्षों के आधार पर तुलसी द्वारा प्रयुक्त शब्दावली निम्न लिखित वर्गों में विभाजित कर उसके सही स्वरूप एवं उस पर पड़े अन्य भाषाओं एवं बोलियों के प्रभाव को स्पष्ट किया जा सकता है—

१—संस्कृत के शब्द

२—प्राकृत-अपभ्रंश के शब्द

३—विदेशी भाषाओं (अरबी, फारसी और तुर्की) के शब्द

४—अन्य देशीय भाषाओं—बंगला राजस्थानी ब्रज भोजपुरी आदि के शब्द।

१—संस्कृत के शब्द (या रूप)—तत्सम शब्द श्लोकों तथा स्तोत्रों के अतिरिक्त दोहे—चौपाइयों में भी प्रयुक्त हुए हैं जिनमें से अधिकांश आलोच्य भाषा की प्रकृति के अनुसार परिवर्तित कर लिए गए हैं। अन्य रचनाओं की अपेक्षा तत्सम शब्द मानस में अधिक व्यक्त हुए हैं यथा—

तत्सम—ब्रह्म[1] ऋद्धि[2] श्रुति[3] भ्राता[4] प्राकृत[5] प्रथम[6] धर्म[7], मृदु[8], सिद्ध[9], मध्य[10] मस्तक[11] गृह[12] एवमस्तु[13] मग[14], मज्जन[15], प्रभु[16] नगर[17] गिरि[18], अधर[19], लोचन[20] ।

अर्धतत्सम—भकुता[21] परम[22], करतब[23] हरष[24] रतन[25] भगति[26], अस्तुति[27] तीरथ[28], निसि[29], मुरछा[30], धरमा[31] सिधि[32], परन[33] सुभाव[34], मरक[35] बसन[36], सोभा[37] जनम[38], करम[39] परमानु[40] पन[41], पुन्य[42], पदम[43] पितर[44] जीवन[45] जोगी[46] बेद[47], पारबती[48] मोच्छ[49] चरन[50] ।

२—प्राकृत-अपभ्रंश के ... या रूप)—तुलसी ने इस कोटि के केवल उन्हीं स्थलों पर प्रयोग किए हैं जहाँ वीर, रौद्र अथवा भयानक अथवा वीभत्स दृश्यों की उपस्थिति करने की आवश्यकता प्रतीत हुई है। इस प्रकार के रूप केवल 'मानस' में ही युद्ध के दृश्य को चित्रित करने में प्रयोग किए गए हैं यथा—

घुमि घुमि जहँ तहँ महि परहीं।[51] जनु दहँ दिसि दामिनी दमकहीं।[52]
बोल्लहिं जो जय जय मुंड रुंड।[53] खप्परहि खग्ग अलुज्झि जुज्झहिं।[54]
कोटिन्ह रुंड मुंड बिनु डोल्लहिं।[55] सीस परे महि जय जय बोल्लहिं।[56]
कहहिं दसानन सुनहु सुभट्टा।[57] मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा।[58]
देखि चले सन्मुख कपि भट्टा।[59]

१—रा० कि० ६।३९ २—रा० लं० मं० ७०।४ ३—रा० कि० ७।१२ ४—रा० अर० ५।२६ ५—रा० अयो० ३१८।२ ६—जा० मं० ६९।१ ७—जा० मं० २३।२ ८—पा० मं० ३०।२ ९—रा० लं० मं० १४।२ १०—रा० लं० मं० ४।३ ११—रा० कि० ११।१८ १२—रा० लं० ६।२ १३—रा० उ० ८५।१, १४—रा० कि० १३।७ १५ रा० उ० २६।२ १६—रा० सु० ५९।१५ १७—रा० लं० मं० २।३ १८—रा० कि० १२।२० १९—पा० मं० ६१।८ २०—पा० मं० ६७।२ २१—जा० मं० ५३।२ २२—रा० बा० ३।१८ २३—रा० बा० १२।२, २४—रा० लं० मं० २।८ २५—पा० मं० ८७।२ २६—रा० कि० १३।१४ २७—रा० उ० १२।२७ २८—रा० बा० ४४।६ २९—रा० उ० २८।२५ ३०—रा० अर० ४३।१७ ३१—रा० बा० २।२१, ३२—पा० मं० ८।२ ३३—रा० अर० १३।४० ३४—रा० उ० १२१।१०, ३५—रा० उ० ६।१४ ३६—रा० उ० ११।१९ ३७—रा० बा० ११।४, ३८—रा० उ० २४।१९ ३९—रा० बा० ७।३ ४०—रा० लं० ११।१, ४१—जा० मं० ८८।१ ४२—रा० उ० १९।१९ ४३—रा० बा० ११।८१, ४४—रा० बा० २५।११ ४५—जा० मं० ८६।२ ४६—पा० मं० ५१।२ ४७—रा० अयो० १४।२ ४८—पा० मं० ०३।१, ४९—रा० अर० १५।९ ५०—रा० सु० ८८।४ ५१—रा० लंका ८७।१८ ५२—रा० लं० ८७।१६ ५३—रा० लं० ८८।२१ ५४—रा० लं० ८८।२८ ५५ रा० लं० ८८।१० ५६—रा० लं० ७०।२ ५७—रा० लं० ८८।२० ५८—रा० लं० ७०।२ ५९—रा० लं० ८७।८

प्रलय काल के जनु मन घटटा ।[1]

जबुक निकर कटक्कट कहहि ।[2] खाहिं हुआहिं अघाहिं दपर्हहिं ।[3]

चौपाई सख्या २, ७ तथा ८ मे मूर्ति' को संस्कृत अथवा अवधी के शब्दो के प्रयोगो की अपेक्षा प्राकृत अपभ्रंश के शब्दो के प्रयोग छन्दानुरोध के कारण अधिक सुविधाजनक प्रतीत हुए हैं। ऐसे शब्दो का प्रयोग रस निष्पत्ति मे कुछ खटकने वाला अवश्य प्रतीत होता है। किन्तु तुलसी जैसे शब्द शिल्पी की कुशल शब्द-योजना मे इस प्रकार व्यवस्थित किए गए हैं कि किसी भी प्रकार से अनुचित और अस्वाभाविक प्रतीत नही होते हैं।

३—विदेशी भाषाओ के शब्द—विदेशी शब्दावली के अन्तर्गत आलोच्य भाषा में केवल अरबी-फारसी तथा तुर्की भाषाओ के शब्द ही आते है। तुलसी की अवधी की अन्य कृतियो की अपेक्षा रामचरितमानस मे विदेशी शब्दो का प्रयोग अधिक हुआ है। तुलसी ने केवल उन्ही विदेशी शब्दो का प्रयोग किया है जो सामान्य जनता के व्यावहारिक जीवन म आ चुके थे। साथ ही, ऐसे स्थलो पर प्रयोग किया है जहाँ उनके प्रयोग से अभीष्ट वातावरण की सृष्टि सम्भव थी। रचना की दृष्टि से देखा जाए तो मूल शब्दो की अपेक्षा यौगिक शब्दो का व्यवहार कम मात्रा म मिलता है जबकि सामाजिक शब्दो का प्रयोग तो अत्यल्प ही है। विशेष ध्यान देने योग्य ऐसे शब्द हैं जिनमे अवधी की प्रकृति (उच्चारण एव व्याकरण) के अनुसार परिवतन कर लिया गया है यथा—

तलफ	तल्फत[4]	सर्राफ	सर्राफ[5]
मौज	मुमौज[6]	साहब	सुमाहब
कागज	कागद[7]	गरीब	गरीब[8]
हजार	हजार[9]	बाजार	बाजार[11]
बजाज	बजाज[12]	फौज	फौज[13]
बाज	बाज[1]		

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि तुलसी ने अपनी रचनाओं म अरबी फारसी के शब्दो का पर्याप्त प्रयोग किया है।

मातलि मातलि चलेउ चरन सिरु नाई।[1]
आन्राधव म० पु० पूछउ सुठि राउर सरल सुभाव।[2]
राउर सरल सुभाव।[3]
गिरिबर सुनिय सरहना राउर तहँ तहँ।[4]
राम मातु मत जानत रउर।[5]
राम निकाय रावरो है जा सबही को नीको।[6]
भलेउ कहन दुख राउरेहि लागा।

स्थान वाचक क्रिया विशेषण रूप
जहवाँ—गोदावरि तट आश्रम जहवाँ।[8]
तहवाँ—अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ।[9]

'अल विभक्ति—प्रत्यय युक्त भूतकालिक कृदन्त रूप
घायल—असकहि कोपि गगन पर घायल।[10]
मरायल—सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल।[11]

खड़ी बोली—

आलोच्य भाषा म बहुत से ऐसे रूप भी प्रयुक्त हुए हैं जिनकी रूप रचना खड़ी बोली (आधुनिक हिन्दी) से पूणत साम्य रखती है जिनका आजकल व्यावहारिक जीवन में खूब प्रचलन है। खड़ी बोली के रूप इस प्रकार हैं—

१—संज्ञा के तियक रूप—माँहे[12] बधाए[13] हारे[14], चौके[15]
२—सवनाम रूप—वह, हमारी हमारे तुम, तुम्हारी तुम्हारे आदि—
निसि मलीन वह निसि दिन यह बिगसाइ।[16]
सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।[1]
जानति हहु बस नाहु हमारे।[18]
दीप रतना तुम उपजिहु भव रतनाकर।[19]
नाथ सकल सपदा तुम्हारी।[20]
पूतु बिदेस न सोचु तुम्हारे।[21]

१—रा० ल० ११०।२ २—बरव रा० २०।२ ३—रा० अयो १७।२०, ४—पा० म १५।२ ५ रा० अयो० १८।१ ६—रा० बा० २९।२१ ७—रा० अयो० १६।४ ८—रा० अर० ३०।९ ९—रा० अर० ३०।१० १०—रा० लं० ९७।१२, ११—रा० लं० ९७।११, १२—रा० बा० १२।४ १३—रा० अयो० ११२ १४—रा० बा० ३४४।८ १५—रा० अयो० ८।५ १६—बरव रा० ११।२ १७—रा० सु० ८।११ १८—रा० अयो० १४।१० १९—पा० म० ४४।२, २०—रा० बा० ३६०।११, २१—रा० अयो० १४।९।

(३) क्रिया रूप—कुछ क्रिया रूप खड़ी बोली से प्रभावित लगते हैं, यथा—

नृप कुंजरहि बोलि लै आए।[1]
जेहि न विपरीत कृपा करिऐ।[2]
मत मोर विभेद करो हरिऐ।[3]
जरहिं सदा पर संपति देखी।[4]
पति लागि दारुन तपु किया।[5]

क्रियार्थक संज्ञाएँ—मुठइ लेना मूठइ देना।[6]

सहायक क्रिया— हैं सुत नृप सब तुम्हहि समाना।[7]

सहायक ग्रंथानुक्रमणिका

१-डा० उदयनारायण तिवारी	भोजपुरी भाषा और साहित्य सन	१९५४ ई०
२- ,, ,,	हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास	सं० २०१८ वि०
३- ,,	भाषा शास्त्र की रूपरेखा	सं० २०२० वि०
४-पं० कामता प्रसाद गुरु	हिन्दी व्याकरण	सं २०१४ वि०
५-पं किशोरीदास बाजपेयी	हिन्दी शब्दानुशासन	सन् १९५८ ई०
६- ,,	ब्रज भाषा व्याकरण	सन् १९४३ ई०
७-डा० कैलाशचन्द्र अग्रवाल	शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन	सन १९६४ ई०
८-डा० गोलोक विहारी धल	ध्वनि विज्ञान	सन १९५८ ई०
९ पं० चन्द्रमौलि शुक्ल	मानस दर्पण	सन् १९५२ ई०
१०-जयगोपाल बोस	तुलसी शब्दार्थ प्रकाश	सन् १९५३ ई०
११-जयचन्द्र विद्यालंकार	भारती इतिहास की रूप रेखा भाग १ तथा २	सं० २००५ वि०
१२-जगदीश तर्कालंकार	शब्द शक्ति प्रकाशिका	
१३-भिक्षु जगदीश कश्यप	पालिमहाव्याकरण	सन १९४० ई०
१४-डा० जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन (अनुवादक डा० उदयनारायण तिवारी)	भारत का भाषा सर्वेक्षण, खण्ड १ भाग १	सन् १९५९ ई०
१५-डा० देवकी नन्दन श्रीवास्तव	तुलसी की भाषा	सं० २०१४ वि०
१ -पं० दामोदर भट्ट	उक्ति व्यक्ति प्रकरणम	सं० २०१० वि०
१७-डा० धीरेन्द्र वर्मा	हिन्दी भाषा का इतिहास	सं० १९५८ वि०
१८- ,, ,,	व्रजभाषा	सन १९५४ ई०
१९-डा० नामवर सिंह	पृथ्वीराज रासो की भाषा	सन १९५६ ई०
२०- ,, ,, ,,	हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग	सन १९५४ ई०

२१-नागरी प्रचारिणी सभा काशी (प्रकाशक) तथा आ० रामचन्द्र शुक्ल द्वारा सम्पादित तुलसीदास ग्रंथावली (पहला व दूसरा खण्ड) सं० २००४ वि०

२२-पिशेल, अनुवादक डा० हेमचन्द्र जोशी — प्राकृत भाषाओं का व्याकरण — सन् १९५९ ई०

२३-डा० प्रभाकर शुक्ल	जायसी की भाषा	सं० २०२३ वि०
२४-डा० प्रेमनारायण टंडन	सूर की भाषा	सन् १९५७ ई०
२५-डा० बाबूराम सक्सेना	सामान्य भाषा विज्ञान	सन् १९५६ ई०
२६- ,, ,, ,,	संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका	सन् १९५५ ई०
२७-पं० बिहारीलाल चौबे	तुलसीदास सतसई	सं० १९८६ वि०
२८-डा० ब्रज विहारी मिश्र	अवध के प्रमुख कवि	सन् १९६० ई०
२९-डा० भोलाशंकर व्यास	संस्कृत भाषाशास्त्रीय अध्ययन	सं० २०२० वि०
३०-डा० भोलाशंकर व्यास	प्राकृत पैंगलम्	सं० २०२८ वि०
३१-डा० माता प्रसाद गुप्त	हिन्दी पुस्तक साहित्य	सन १०६२ ई०
३२- ,, ,, ,,	राउर वेल और उसकी भाषा	सन् १९६२ ई०
३३- ,, ,,	तुलसीदास	सन् १९५३ ई०
३४- ,, ,, ,,	रामचरित मानस का पाठ	सन १९४९ ई०
३५ डा० मुरारीलाल उप्रेति	हिन्दी में प्रत्यय विचार	सन् १९६४ ई०
३६-श्री रघुनाथदास	मानस कोष	सन् १९५४ ई०
३७-डा० रमेशचन्द्र जैन	हिन्दी में समास रचना का अध्ययन	सन् १९६४ ई०
३८-डा० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल	बुन्देली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन	सन् १९६३ ई०
३९-पं० रामचन्द्र शुक्ल	हिन्दी साहित्य का इतिहास	सं० २००५ वि०
४०- ,, ,,	तुलसीदास (संशोधित संस्करण)	सं० १९९६ वि०
४१-श्री रामनरेश त्रिपाठी	तुलसीदास और उनका काव्य	सन् १९५३ ई०
४२-डा० राजपति दीक्षित	तुलसीदास और उनका युग	सन १९५० ई०
४३-डा० रामसिंह तोमर	प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य तथा उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव	सन् १९६४ ई०
४४-श्री [illegible]	मानस व्याकरण	
४५-डा० सरयू प्रसाद अग्रवाल	प्राकृत विमर्श	

४६ डा० सीताराम	अयोध्या का इतिहास	सन् १९३० ई०
४७-श्री विश्वनाथ	हिन्दी कारकों का विकास	स० २००५ वि०
४८-डा० श्याम सुन्दर दास	गोस्वामी तुलसीदास	स० १९८२ वि०
४९- ,,	हिन्दी भाषा और साहित्य	स० १९८० वि०
५०-डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी	हिन्दी साहित्य की भूमिका	सन १९५२ ई०
५१- ,	मध्य कालीन धम साधना	सन् १९५२ ई०
५२-डा० हरिवन कोछड़	अपभ्रंश साहित्य	सं० २०१३ वि०
५३-डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित	अवधी और उसका साहित्य	सन् १९५४ ई०

शब्द कोष

१-अवधी कोष	स० प० रामाज्ञा द्विवेदी समीर	सन् १९५५ वि०
२-तुल्सी शब्द सागर	स० डा० भोलानाथ तिवारी	सन् १९५४ ई०
३-नेपाली डिक्शनरी	स० टनर बेगन पाल टूथ टुब्बर	सन् १९३१ ई०
४-व्रजभाषा सूरकोष	स० डा० प्रेमनारायण टंडन	सन् १९५४ ई०
५-हिन्दी शब्द सागर	स० प० रामचन्द्र शुक्ल	सन् १९१४ ई०

पत्र-पत्रिकाएँ

१-आलोचना		सन् १९५४ ई०
२-इण्डियन लिंग्विस्टिक्स	चर्जी वाल्यूम	सन् १९५८ ई
३-इण्डियन लिंग्विस्टिक्स	तारा पुरवालामेमोरियल वाल्यूम	सन १९५७ ई
४-नागरी प्रचारिणी पत्रिका	भाग १२ (काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशी)	स० १९८८
५- , ,	भाग १३ , ,	स० १९८
६-	वष ५८ अक ३	स० २०१
७- ,,	वष ६४	स० २०
८-भारतीय साहित्य	क० मु० हिन्दी विद्यापीठ आगरा	सन् १९
९-हिन्दी अनुशीलन	जु० मि० अक	सन् १९
१०-हिन्दी अनुशीलन	धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक	
११-सम्मेलन पत्रिका	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग	स

हस्त लिखित प्रतियाँ

१–रामचरित मानस	बालकाण्ड (हि० खो० रि० १९०१ नो० २२ जनक किशोरी सिंह वासुदेव घाट, अयोध्या सं० १ ९१।
२–रामचरित मानस	प० सुधाकर द्विवेदी स० १९१६–१९२१
–रामचरित मानस	डा० माता प्रसाद गुप्त संग्रहालय स० १०७८।
४–रामचरित मानस	बालकाण्ड प० भद्रदत्त वद्य भूषण बड़ी हाली एटा।
५–रामचरित मानस	सुन्दरकाण्ड, डा० माताप्रसाद गुप्त संग्रहालय स० १६६४
६ रामचरित मानस	उत्तरकाण्ड, डा० माताप्रसाद गुप्त संग्रहालय स० १९९३।
७–रामलला नहछ	डा० माता प्रसाद गुप्त स० १८६५।
८–सूकर क्षेत्र महात्म्य	प० भद्रदत्त वद्य भूषण बडी ही ी एटा।
९–जानकी मगल	हि० खो० रि० १९२०–२२ नो० १९८६ ई०) रामरक्ष त्रिपाठी अयोध्या स १६३२।
१०–जानकी मगल	डा० भवानीशंकर याज्ञिक पटुवाडान्र नैनीताल स० १९१०।
११–बरव रामायण	(हि० खो० रि० १९२६–२८ नो० २८ एम) राजकीय पुस्तकालय प्रतापगढ़ स० १७९८।

1	Dr Aryendra Sharma	A Basic Grammar of Modern Hindi	1958
2	Archibald A Hill	An Introduction to linguistics structures,	1957
3	Dr A M Ghatage	Historical linguistics and Indo Aryan languages	1962
4	Dr Babu Ram Saksena	Evolution of Awadhi	1937
5	Bernard Bloch and Trager	Outline of Linguistic Analysis,	1943
6	Bertil Malmberg	Phonetics	1963
7	Benjmin Elson and Velma Pickett	An Introduction to Morphology and Syntax,	19 2
8	C F Hockett	Course in Modern Linguistics	1957
9	Daniel Jones	The Phoneme its nature and use,	1950
10	Daniel Jones	An Outline of English Phonetics	1956
11	E A Nida	Morphology	1957
12	Dr Tagare	Historical Grammar of Apabhramsa	1948
13	Dr George A Grierson	Linguistic survey of India Vol IX Pt II	
14	Herald B Allen	Readings in Applied English Linguistics	1953
15	H A Gleason	An Introduction to Descriptive Linguistics	1955
16	I J S Taraporewala	Elements of the Science of language	1951
17	John B Carral	The study of Language	1955
18	John Beames	A Comparative Grammar of Modern Aryan Languages of India,	1875
19	J Vendreys	Language	1952

20 Dr S H Kellogg	Grammar of the Hindi Language,	1951
21 M A Mahandale	Historical Grammar of Inscriptional Prakrit	1948
22 Martin Joos (Ed.)	Readings in Linguistics,	1958
23 Dr R N Vale	Verbal Composition in Indo Aryan,	1948
24 R M S Heffner	General Phonetics	1952
25 Dr S K Chatterji	Origin and Development of Bengali language Pt I	
26 Sukumar Sen	Comparative Grammar of Middle Indo-Aryan,	1951
